आत्मकथात्मक बाल साहित्य विशेषांक

साक्षात्कार

संयुक्तांक 497-498
नवम्बर-दिसम्बर, 2021

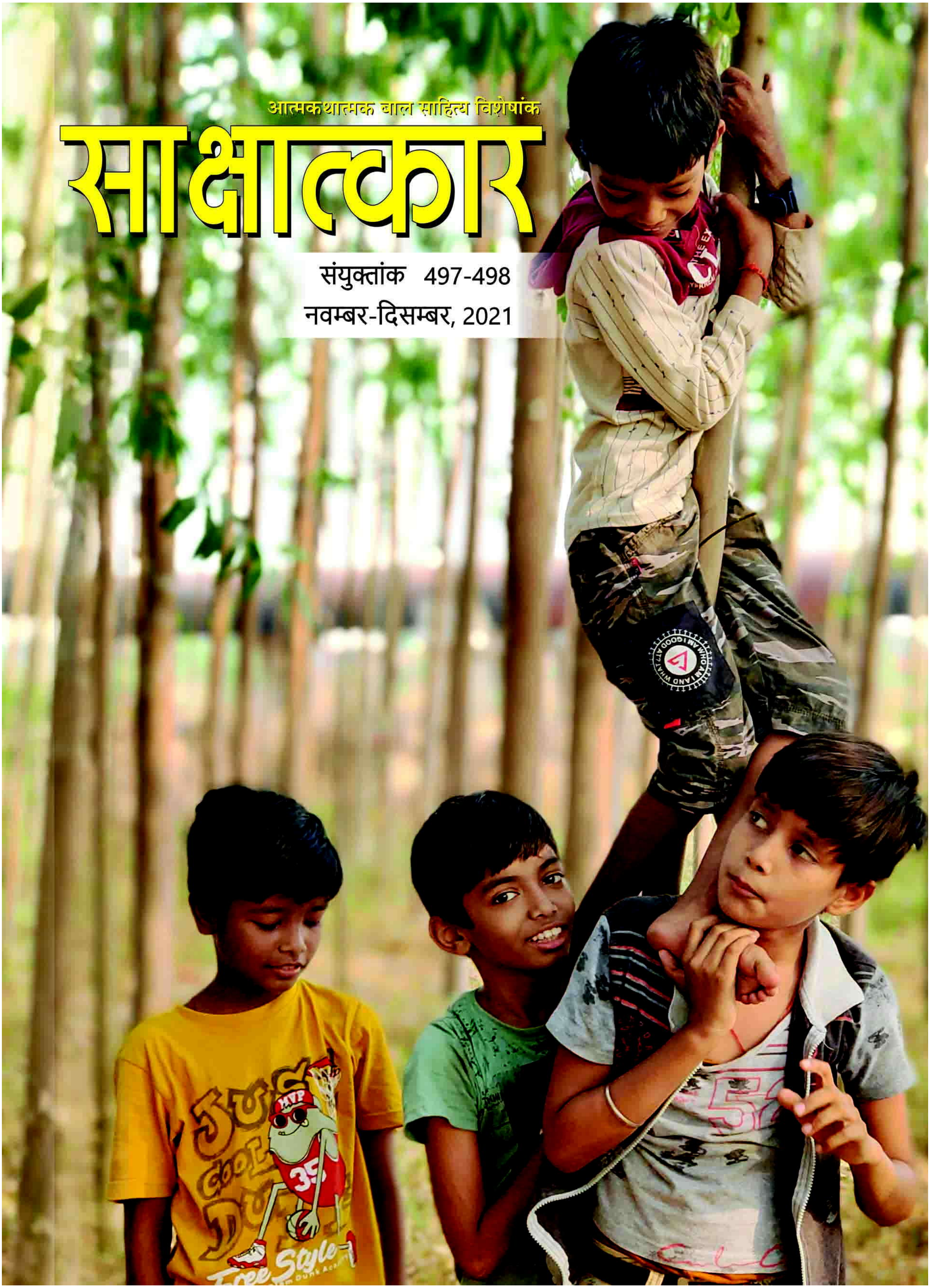

आत्मकथात्मक बाल साहित्य विशेषांक

साक्षात्कार

डॉ. विकास दवे

सम्पादक

ISSN : 2456-1924

साक्षात्कार

नवम्बर-दिसम्बर, 2021
संयुक्तांक : 497-498

सम्पादकीय एवं ग्राहकीय पत्र-व्यवहार : निदेशक/सम्पादक, साहित्य अकादमी, संस्कृति भवन, बाणगंगा, भोपाल-462003
फ़ोन : 0755 - 2554782 (कार्यालय)

साक्षात्कार की प्रकाशनार्थ रचनाओं के लिए
email - sakshatkarnew@gmail.com पर मेल करें।

वार्षिक सहयोग राशि
व्यक्तिगत ग्राहकों के लिए :₹ 250
संस्थाओं के लिए :₹ 300
आजीवन :₹ 3,000

यह अंक :₹ 50 (रजिस्टर्ड डाक खर्च अतिरिक्त)
समस्त बैंक ड्राफ्ट/मनीआर्डर '**निदेशक, साहित्य अकादमी, भोपाल**' के नाम स्वीकार्य होंगे।

आवरण : अमरजीत कुमार

रेखांकन : गणेश राम, हनुमानगढ़ (राज.)

आकल्पन : राकेश सिंह

मुद्रण : मध्यप्रदेश माध्यम, अरेरा हिल्स, भोपाल

'साक्षात्कार' में प्रकाशित रचनाकारों के विचार अपने हैं। सम्पादक या साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश शासन का उनके विचार के प्रति सहमत होना आवश्यक नहीं है।

साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश का मासिक प्रकाशन

अनुक्रम

संपादकीय

बच्चों के ज्ञान का खजाना : आत्मकथात्मक आलेख // 05

बातचीत

प्राध्यापक प्रभा पंत से डॉ. विकास दवे की बातचीत // 07

आत्मकथा

डॉ विमला भंडारी बाल आत्मकथा की गागर : ज्ञान, आनंद का सागर // 15

प्रकृति की आत्मकथा

डॉ. गिरीशदत्त शर्मा मैं आकाश गंगा हूँ! // 19
डॉ. गिरीशदत्त शर्मा क्या कहती है धरती हमारी // 21
स्नेहलता मैं सरोवर हूँ // 24
कृष्णलता यादव मैं बादल भैया // 27

पर्यावरण की आत्मकथा

तुरशन पाल पाठक मैं हूँ पर्यावरण // 29
सुनीता विश्नोलिया खिलखिला उठे जिंदगी // 36
डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ मैं पीपल का पेड़ हूँ! // 39
संतोष कुमार सिंह मैं कमल हूँ // 41
रामगोपाल 'राही' घास की आत्मकथा // 43
नीलम राकेश सुनो सुनो मैं तुलसी हूँ // 46
रोचिका अरुण शर्मा मैं नर्सरी हूँ // 48
अलका प्रमोद प्रतीक्षा है तुम्हारी // 50
भगवती प्रसाद गौतम मैं हूँ मुकंदरा का राजा...एमटी-1 // 52
कीर्ति गाँधी मैं हूँ खलनायक // 54
संध्या तिवारी मियाँ मिट्ठू // 56

वस्तु की आत्मकथा

सरिता गुप्ता काग़ज़ की आत्मकथा // 58
अनीता गंगाधर बोलती कलम // 60
विमला भंडारी सुई डोरे की दोस्ती // 62
सुमन बाजपेयी मैं हूँ आपका प्यारा दोस्त // 64

स्थान की आत्मकथा

अंजीम अंजुम मैं हावड़ा ब्रिज हूँ // 66

सुकीर्ति भटनागर आत्मकथा एक मकान की // 69

डॉ. शील कौशिक मैं भी घर का हिस्सा हूँ // 71

गुडविन मसीह पुस्तकालय की आत्मकथा // 73

राष्ट्रीय प्रतीक की आत्मकथा

रवि अतरोलिया तिरंगे की कहानी // 75

डॉ. गिरीशदत्त शर्मा कहानी राष्ट्रीय ध्वज की // 77

खाद्य वस्तु की आत्मकथा

तुरशन पाल पाठक मैं हूँ पौष्टिक आहार // 79

राजा चौरसिया मैं हूँ रोटी // 87

उषा सोमानी चॉकलेट की आत्मकथा // 89

विज्ञान की आत्मकथा

श्याम सुन्दर शर्मा मैं हूँ वायुयान // 91

श्याम सुन्दर शर्मा मैं हूँ चुम्बक // 98

विनीता सिंघल हैलो! मैं हूँ इन्टरनेट // 107

कामना सिंह कोवैक्सिन की आत्मकथा // 110

लता अग्रवाल मैं अन्नपूर्णा हूँ // 119

रूपाली सक्सेना मेरी जुबान मेरी जुबानी // 121

विमर्श

डॉ. सुरेन्द्र विक्रम बाल साहित्य में गतिरोध हैं : विमर्श हो तो कैसे // 123

प्रियंका माण्डे बालगीतों का मनोवैज्ञानिक पक्ष // 130

डॉ. कृपाशंकर चौबे भारत में बाल संरक्षण हमारी लोक परम्पराओं का अविभाज्य तत्व है // 135

कविता

उषा यादव मैं नदी हूँ // 140

चिट्‌ठी // 142

बच्चों के ज्ञान का खजाना : आत्मकथात्मक आलेख

बाल साहित्य की बात चलते ही हृदय में एक अलग प्रकार का श्रद्धा भाव पैदा होता है। साहित्य क्षेत्र में रचना कर्म तो अनेक लोग करते हैं किंतु मेरा यह स्पष्ट मत है कि बाल साहित्य का रचना कर्म राष्ट्र ऋण से उऋण होने का उपक्रम है। एक देश के नव निर्माण की संकल्पना श्रेष्ठ बाल साहित्य के बगैर पूर्ण नहीं हो सकती। बाल साहित्य में अनेक वर्षों से भारतीय बाल साहित्य शोध संस्थान के माध्यम से शोध कार्य संपन्न करवाने का अवसर मिल रहा है। अनेक बार शोध निदेशक और शोधार्थियों से बातचीत में यह ध्यान में आता था कि बाल साहित्य में कुछ विशिष्ट विधाओं में लेखन नहीं के बराबर हो रहा है।

यह जानकर मन में यह भावना जागृत होती है कि क्यों न उन विधाओं में भी बाल साहित्य का पर्याप्त मात्रा में लेखन हो जिनमें बाल साहित्य कम रचा जा रहा है। बड़ों के साहित्य में दो विधाएँ अत्यधिक प्रचलित हैं। पहली आत्मकथा जिसमें रचनाकार अपने जीवन के अंतरंग पहलुओं को इस दृष्टि से लेखन करता है कि उसके जीवनानुभव अन्य लोगों के लिए प्रेरक और मार्गदर्शक सिद्ध हो सकते हैं। हालाँकि कई बार यह काम स्वयं के प्रचार के लिए भी होता है लेकिन विषय विपर्यय हो जाएगा इसलिए मूल बात यह कि बाल साहित्य में स्वयं पर लिखे जाने वाली आत्मकथा नहीं लिखी जाती। चूँकि बच्चों को न तो उतना अनुभव होता है और न ही उनकी योग्यता उतनी होती है कि वे इन विषयों को समझ सकें।

ऐसे में बाल साहित्य की आत्मकथा विधा दूसरे प्रकार से बच्चों के लिए उपयोगी बनाने का उपक्रम किया जाता है। यूँ तो यह शैली आत्मकथा की ही है किंतु इसका उपयोग बच्चों के ज्ञान वर्धन हेतु किया जाता है। यह व्यक्ति केंद्रित नहीं वस्तु अथवा प्राणी केंद्रित होती है। कई बार तो यह घटना और स्थान की आत्मकथा के रूप में भी लिखी जाती है। हममें से अनेक लोगों ने इस प्रकार की रचनाएँ बच्चों के लिए लिखी जाते देखी होंगी किंतु संभवत: कभी ध्यान नहीं दिया होगा कि ऐसी रचनाएँ बच्चों को कितनी प्रभावित करती हैं। मैं चुंबक हूँ, मैं वायुयान हूँ, मैं पर्यावरण हूँ, मैं जंगल का राजा शेर हूँ इस प्रकार के शीर्षक से व्यक्ति प्राणी अथवा वस्तु की ओर से आत्मकथा बच्चों के लिए लिखा जाना एक पुरानी परंपरा रही है। अनेक शोधार्थियों को शोध करवाते हुए यह बात ध्यान में आई थी कि इस 'आत्मकथात्मक आलेख' विधा में बच्चों के लिए रचनाएँ कम प्राप्त होती हैं।

इस संदर्भ में जब सलूंबर राजस्थान की प्रख्यात बाल साहित्यकार डॉ. विमला भंडारी जी से मेरी चर्चा हुई तो उन्होंने एक अनूठा उपक्रम संयोजित कर लिया। वे 'सलिला' संस्था सलूंबर के माध्यम से

प्रतिवर्ष एक बड़ा अधिवेशन भी करती हैं और देशभर के वरिष्ठ बाल साहित्यकारों को सम्मानित भी करती हैं। उन्होंने विगत वर्ष में आत्मकथात्मक आलेख को ही अपना केंद्रीय विषय बना कर कार्यक्रम की संयोजना की। देशभर के अनेक बाल साहित्यकारों से उन्होंने इस विधा में आलेख आमंत्रित किए, साथ ही मैंने प्रयास किया कि इस विधा में पूर्ववर्ती जिन वरिष्ठ बाल साहित्यकारों ने लेखन किया है वह भी हमारे भारतीय बाल साहित्य शोध संस्थान के पुस्तक संग्रह में से प्राप्त कर लिए जाएँ। इस प्रकार आत्मकथात्मक आलेखों का एक सुंदर सा संग्रह तैयार हुआ और उसे नवंबर-दिसंबर माह के संयुक्त अंक के रूप में साक्षात्कार का विशेषांक प्रकाशित करने की योजना मूर्त रूप ले सकी।

मैं विशेष रूप से इस अंक की तैयारी में सहयोग करने वाले आदरणीय डॉ. विमला भंडारी जी, श्रद्धेय प्रकाश तांतेड़ जी और बंधुवर गोपाल माहेश्वरी जी के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। आप सबके हाथों में यह अंक प्रकाशन उपरांत पहुँच रहा है। निश्चय ही बाल साहित्य क्षेत्र में यह अंक भी अपने वैशिष्ट्य के कारण जाना जाएगा। आप सबकी सम्मति इस अंक पर प्राप्त होगी तो आगे भी वर्ष में एक विशेषांक बाल साहित्य की ऐसी विधाओं पर केंद्रित करने का प्रयास करेंगे जिन पर अपेक्षाकृत कम लिखा जा रहा है।

सदैव सा

डॉ. विकास दवे
संपादक

प्राध्यापक प्रभा पंत से डॉ. विकास दवे की बातचीत

डॉ. विकास दवे : आपकी जन्मस्थली कहाँ है? कृपया अपनी पारिवार पृष्ठभूमि और शिक्षा के विषय में कुछ बताइए।

डॉ. प्रभा पंत : मेरा जन्म उत्तराखण्ड के जनपद अल्मोड़ा में हुआ। 'स्कंद पुराण के मानस खंड में ''कौशिकी शाल्मली मध्ये पुण्य काषाय पर्वत:'' कहकर जिस पर्वत-घाटी का विषद वर्णन किया गया है, उस पुण्य काषाय पर्वत के रूप में 'अल्मोड़ा' ही वर्णित है। शीतल एवं सुखद छायाप्रदायिनी भूमि को कुमाउँनी भाषा में 'सेल' अथवा 'सेव' कहा जाता है; यही सेला ग्राम मेरी जन्मस्थली है। विवाह के कई वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् भी जब मेरी माँ को जननी कहलाने का गौरव प्राप्त नहीं हुआ, तो निराश परिवारजनों ने मेरे पिताश्री से उन्हें चिकित्सा हेतु इलाहाबाद ले जाने के लिए कहा; क्योंकि उस समय वह इलाहाबाद में एक सैनिक के रूप में तैनात थे। प्रभु की कृपा तथा चिकित्सकों के प्रयास से धर्मनगरी प्रयाग में, माँ को अपने गर्भ में मेरे अंकुरण की प्रथम अनुभूति हुई। श्रीमती मनोरमा-शिवदत्त जोशी की प्रथम संतति के रूप में मेरा जन्म हुआ। मेरे दादा जी का नाम पंडित रामदत्त जोशी तथा दादी श्रीमती भगीरथी देवी ने मेरे शैशव को सपरिवार अपने स्नेहामृत से अभिसिंचिंत किया। उत्तराखण्ड में स्थित कुमाऊँ मण्डल के मनोरम ग्राम्यजीवन के आत्मीयतापूर्ण परिवेश में, मुझे लगभग तीन वर्ष की उम्र तक रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ; तत्पश्चात् मैं अपने परिवारजनों के साथ बरेली आ गई।

मेरी प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा प्राइमरी पाठशाला तथा रानी लक्ष्मी बाई इंटर कॉलेज बरेली में संपन्न हुई। इण्टरमीडिएट की शिक्षा गुरुनानक इंटर कॉलेज देहरादून से उत्तीर्ण करने के पश्चात् मैं माता-पिता के साथ पुन: बरेली चली आई। अपनी उच्चशिक्षा के लिए मैंने साहू गोपीनाथ महिला महाविद्यालय, बरेली में प्रवेश लिया। एम.ए. हिन्दी व बी.एड. की उपाधियाँ मैंने बरेली कॉलेज, बरेली से प्राप्त कीं। अपनी स्नातक-स्नातकोत्तर उपाधि की अध्ययन अवधि में, मैं कढ़ाई-बुनाई-सिलाई के अतिरिक्त नृत्य, अभिनय, चित्र एवं मूर्तिकलादि विविध पाठ्येत्तर क्रियाकलापों तथा कॉलेज के विविध कार्यक्रमों में सहभागिता करती रही। रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय से उच्चशिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् मेरा विवाह रानीखेत निवासी श्री मदन मोहन पन्त से हुआ; तत्पश्चात् मैंने कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल से 'कुमाऊँ में प्रचलित लोककथाओं एवं लोकगाथाओं के कथानकीय रूपों एवं अभिप्रायों का लोकतात्त्विक अध्ययन' विषय पर डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ के निर्देशन में पी-एच.डी. की। अस्सी के दशक से कुमाउँनी लोकसाहित्य एवं कुमाउँनी लोकसंस्कृति के संरक्षण के लिये, मैं सतत् प्रयासरत हूँ। उत्तराखण्ड की

शताधिक लोककथाओं को संकलित करके, जहाँ एक ओर मैंने लुप्त होती जा रही कुमाउँनी लोककथाओं को संरक्षित करने तथा अपनी धरोहर को भावीपीढ़ी के लिये सँजोने का कार्य किया है, वहीं दूसरी ओर अपनी राष्ट्रभाषा हिंदी एवं अपनी दुदबोली 'कुमाउँनी' के प्रचार एवं प्रसार के लिये भी मैं अनवरत कार्यरत हूँ।

डॉ. विकास दवे : साहित्य सृजन में आपकी अभिरुचि कैसे जागृत हुई, तथा किस साहित्यकार से आपको लिखने की प्रेरणा मिली?

डॉ. प्रभा पंत : बाल्यकाल से ही मुझे पढ़ना बहुत अच्छा लगता है। जब मैं छोटी थी, उन दिनों दुकानदार कॉपी, किताब के पन्ने फाड़कर या अख़बार और पत्रिकाओं के पन्नों से बने लिफाफे में सामान दिया करते थे। मैं जब भी अपने रसोईघर में अथवा कहीं भी ज़मीन पर गिरा हुआ कोई पन्ना या लिफाफा देखती थी, उठा लिया करती थी और लेई से चिपकाया गया लिफाफा खोलकर, उसके प्रत्येक शब्द और वाक्यों को बड़े ध्यान से पढ़ती थी। जब कुछ बड़ी हुई तो अख़बार वाले से अमर चित्रकथा, नंदन, चंपक, चंदामामा आदि बाल पत्रिकाएँ ख़रीदकर तथा गली-मुहल्ले के दुकानदारों से बाल पॉकेट बुक्स किराए पर लेकर भी पढ़ने लगी। इस बात पर कभी ध्यान नहीं गया कि रचनाकार कौन है, किन्तु निश्चित ही मेरा प्रेरणास्रोत 'हिंदी साहित्य', मेरा परिवेश एवं परिस्थितियाँ रही हैं।

डॉ. विकास दवे : क्या आप उस कालखण्ड का कोई संस्मरण साझा करना चाहेंगी।

डॉ. प्रभा पंत : जी हाँ, अवश्य। मेरी बालसखी मंजुला, जिसे प्यार से सब गुड्डी कहते थे; उसके पिता श्री सुरेश चंद्र शर्मा हिंदी प्रवक्ता थे। पापा जी कलफ़ लगा सफ़ेद कुरता-पायजामा पहनते थे। वे अत्यंत कर्मठ एवं अनुशासित थे। मुझे आज भी भलीभाँति याद है कि पापा जी, अपने कॉलेज के पुस्तकालय से या बाज़ार से जब भी जैनेन्द्र, यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, बंकिम चंद चट्टोपाध्याय, शरत्चंद्र, रघुबीर शरण मित्र, शंकर शेष, शिवानी आदि का कोई उपन्यास, कहानी या कोई नाटक लाते थे, तो पापा जी को पढ़ते देखकर मेरा मन भी उसे पढ़ने के लिए लालायित हो उठता था। गुड्डी के घर में अम्मा, दीदी, दादा सभी लोग अत्यंत अध्ययनशील थे। घर में सबके पढ़ने के बाद या फिर कभी-कभी गुड्डी अम्मा या दीदी के पढ़ने के बाद ही मुझे दे दिया करती थी। आपसे अपने अतीत की मधुरिम स्मृतियाँ साझा करते हुए, इस क्षण मुझे सीधा आँचल ओढ़े, माथे पर बड़ी सी मैरून रंग की बिंदी लगाए, मुँह में पान का बीड़ा दबाए, खटिया पर लेटी, चश्मा लगाकर पुस्तक पढ़ती अम्मा का सजीव चित्र दिखाई दे रहा है।

वह कालखण्ड सामाजिक दृष्टि से अद्भुत और अविस्मरणीय है, क्योंकि तब परस्पर संबंध आत्मीयता के अमृत में सराबोर थे। नि:संदेह आज हम भौतिक विकास की दृष्टि से विकास के उस सोपान पर आ पहुँचे हैं, जहाँ एक बटन दबाते ही हम विश्व के किसी भी कोने में रहने वाले लोगों की कुशल-क्षेम पूछ लेते हैं; अपनी छोटी-बड़ी आवश्यकताओं की पूर्ति भी कर लेते हैं, किन्तु आत्मीयता की दृष्टि से अधिकांश लोग इतना भी समय निकाल पाते कि अपने परिवारजनों अथवा गली-मुहल्ले, पास-पड़ोस में रहने वालों लोगों के समीप बैठकर, उनका दु:ख-दर्द साझा कर सकें।

डॉ. विकास दवे : आपकी पहली रचना क्या थी, और वह कब प्रकाशित हुई?

डॉ. प्रभा पंत : मेरे लेखन का प्रारंभ निबंध लेखन से हुआ। जब मैं कक्षा 6-7 में पढ़ती थी, तब

मैंने 'प्रेरणा' और 'निश्चय' शीर्षक से आत्माभिव्यक्ति की थी। आज सोचती हूँ तो प्रतीत होता है, मेरे लेखन का प्रमुख कारण मेरा अंतर्मुखी और चिंतनशील स्वभाव रहा होगा। पिताजी भारतीय थलसेना में थे; माँ उनके साथ रहती थीं और मैं अपने चाचा-चाची तथा दादी के साथ बरेली में। हमारा परिवार संयुक्त था, मैं परिवार में सबसे बड़ी थी। जब से होश सँभाला (कक्षा 2-3) तब से ही स्वयं को लोगों की भाव भंगिमाएँ तथा उनके आचार-व्यवहार को पढ़ते, आकाश में झिलमिलाते तारों को निहारते और स्वयं से बातें करते पाया; आज भी वैसी ही हूँ; अंतर मात्र इतना आया है कि अब प्रकृति के सुरम्य वातावरण में हूँ तो प्रकृति से घनिष्ठता हो गई है तथा अब अपने मनोभावों और विचारों की अभिव्यक्ति काग़ज़, कम्प्यूटर और कक्षा के साथ ही विविध मंचों पर भी करती रहती हूँ। जहाँ तक प्रकाशित रचना का प्रश्न तो जब मैं ग्यारहवीं कक्षा में पढ़ती थी, तब से परीक्षा में पूछे गए प्रश्न का उत्तर न आने पर उस विषय पर मैं अपने विचार लिखने लगी थी। एक बार जब मैंने परीक्षा में 'बेरोज़गारी' विषय पर जो वैचारिक अभिव्यक्ति की थी, आज मैं उसे अपनी प्रथम प्रकाशित रचना कह सकती हूँ; क्योंकि उसकी चर्चा मेरी अध्यापिका ने कक्षा में की थी। उन्होंने कक्षा में पढ़कर सुनाया, और पूछा, 'बताओ यह किसने लिखा है।' उस समय मैं बहुत डर गई थी; किन्तु जब उन्होंने लिखने वाले के सुलेख, उसके विचारों तथा अभिव्यक्ति कौशल की प्रशंसा की तो मैंने धीरे से अपना हाथ उठाया था। इसके अतिरिक्त जब मैं बी.ए. में पढ़ती थी, तब से आकाशवाणी के लिए लिखना हो, मंच संचालन अथवा भाषणादि के लिए, मैंने सदैव स्वयं ही लिखा।

डॉ. विकास दवे : अपनी प्रथम पुस्तक-प्रकाशन के विषय में विषय में बताइए?

डॉ. प्रभा पंत : मेरी प्रथम पुस्तक 'कुमाउँनी लोककथा/कुमाउँनी लोककथाएँ' है, जो सन् 2000 में प्रकाशित हुई। अब तक इसका एक संशोधित एवं सर्वर्द्धित संस्करण तथा तीन आवृत्तियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। संस्कृत, अंग्रेजी तथा नेपाली भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ है। इस पुस्तक के लेखन की कहानी अत्यंत रोचक है। बात तब की है, जब 1997 में मेरी प्रथम नियुक्ति हुई। एम.ए. हिंदी की कक्षाओं में अन्य विषयों के साथ ही मुझे 'कुमाउँनी साहित्य' पढ़ाने का अवसर मिला, जिसमें कुमाउँनी के पाठ्यक्रम में केवल कविताओं की पुस्तकें थीं। उसे पढ़ाते हुए मेरे मन में बार-बार यह विचार आता था कि जब हिंदी साहित्य में गद्य और पद्य की विविध विधाएँ पढ़ाई जाती हैं, तो कुमाउँनी के पाठ्यक्रम में केवल कविताओं की पुस्तकें ही क्यों हैं। इस संबंध में जब मैंने अपने सहकर्मियों से चर्चा की, तो एक साथी ने सुझाव दिया कि आप हिंदी के समन्वयक से बात कीजिए। मैंने प्रयास करके हिंदी विषय के समन्वयक का नाम और उनका दूरभाष का नंबर खोजा; अपनी जिज्ञासा उनके सम्मुख रखते हुए पूछा, 'सर! कुमाउँनी में कहानी और निबंध की एक भी पुस्तक क्यों नहीं है?' तो उन्होंने अत्यंत शुष्क स्वर में कहा- 'जब कुमाउँनी में गद्य है ही नहीं, तो कहाँ से लगाता।' 'लेकिन, सर! मेरे पास तो बहुत सारी लोककथाएँ हैं' मैंने बालसुलभ सरलता से कहा। 'तो आप किताब छपवा लीजिए, हम कोर्स में लगा देंगे।' उन्होंने कटाक्ष-सा किया। 'जी सर! धन्यवाद।' कहते हुए, मैं फोन रखने का विचार कर ही रही थी कि तब तक उनका आदेशात्मक स्वर सुनाई दिया, 'एक तरफ कुमाउँनी में और दूसरी तरफ हिंदी में लिखिएगा।' इससे पहले कि मैं कुछ और पूछती, कहकर उन्होंने फोन काट दिया। मैंने उनके कथन को उनकी सहमति माना और आज्ञाकारी बच्ची की तरह उत्साहित होकर, उसी दिन से कुमाउँनी लोककथाओं

का हिंदी अनुवाद करने में जुट गई। अंततः मेरा श्रम फलीभूत हुआ और लगभग दो वर्ष पश्चात् मेरी प्रथम पुस्तक प्रकाशित हुई, किन्तु पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं की गई। वर्षों पश्चात् स्थानान्तरण के कारण मेरी नियुक्ति हल्द्वानी महाविद्यालय में हुई; इस महाविद्यालय के रसायन विज्ञान के विभागाध्यक्ष प्रो.के.के.पांडे, जो साहित्य और कला के भी मर्मज्ञ हैं, ने जब इस पुस्तक का अध्ययन किया, तो इस श्रमसाध्य पुस्तक की उपयोगिता और महत्त्व की अत्यंत सराहना की। सौभाग्य से सन् 2017 में वह कुलसचिव के पद पर आसीन हुए, उनके सद्प्रयास से आज यह पुस्तक कुमाऊँ वि.वि.नैनीताल की स्नातकोत्तर हिंदी के पाठ्यक्रम में सम्मिलित है।

डॉ. विकास दवे : लोकसाहित्य से आप बालसाहित्य से कैसे जुड़ीं?

डॉ. प्रभा पंत : लोकसाहित्य से ही परिनिष्ठत साहित्य का जन्म हुआ है। बालसाहित्य हो अथवा साहित्य की अन्य विधाएँ, सभी का लोकसाहित्य से घनिष्ठ संबंध है। मेरे लिए बालसाहित्य से जुड़ना स्वयं से जुड़ना है। जब तक हम स्वयं से जुड़े रहते हैं, तब तक सीखने, समझने और जानने को तत्पर रहते हैं तथा इससे वैयक्तिक विकासशीलता भी बनी रहती है। बालसाहित्य से मेरा जुड़ाव बाल्यकाल से ही रहा है। मुझे पुस्तकें एवं पत्रिकाएँ पढ़ना अत्यंत रुचिकर लगता था। जब मुझे माँ बनने का गौरव प्राप्त हुआ तो मैं अपने बच्चों को सुलाने के लिए लोरी गाया करती थी। जब उन्होंने शैशवावस्था से बाल्यावस्था में पदार्पण किया तो उनका मन बहलाने के लिए, उनके साथ खेलते हुए मैं कभी कोई मनगढ़ंत गीत गाने लगती थी; कभी अभिनय करती हुई कोई कविता सुनाती थी, और कभी बच्चों के आग्रह पर उन्हें कहानी भी सुनाया करती थी। धीरे-धीरे बच्चों की प्रतिक्रिया देखकर, जब मैं यह समझने लगी कि बच्चों के मन को क्या भाता है तो उन्हें कोई कार्य करने, या न करने के लिए प्रेरित करने हेतु कहानियाँ गढ़कर सुनाने लगी।

समय के साथ-साथ बच्चे बढ़ते रहे और मेरा लोरी, गीत, कविता-कहानी गढ़ना थम गया। मैं अपने शोधकार्य एवं घर-परिवार के दायित्त्वों का निर्वहन करने में संलग्न रही। 1997 में मेरा जीवन एक नयी दिशा की ओर बढ़ चला। राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पिथौरागढ़ में मेरी प्रथम नियुक्ति हुई, और मैं अपने ढाई वर्षीय पुत्र के साथ अध्ययन-अध्यापन हेतु घर-परिवार से दूर सीमांत क्षेत्र पिथौरागढ़ चली गई। सन् 2004 में, जब मैं बालपत्रिका 'बालप्रहरी' के संपादक श्री उदय किरौला जी के आत्मीयतापूर्ण आग्रह पर 'बालप्रहरी' के प्रथम वार्षिक समारोह में सम्मिलित होने अल्मोड़ा पहुँची, तो वहाँ मंच पर बच्चों की मनमोहक प्रस्तुतियाँ देखकर मैं अभिभूत हो उठी, और एक दीर्घकालिक अंतराल के पश्चात् मेरे अंतस् से भावधारा इन शब्दों में बह निकली- 'बच्चों को बचपन जीने दो/आनंद अमृत पीने दो/अभी तो ली अंगड़ाई है/प्रातः की लाली छाई है/कलियों को मुकुलित होने दो/बच्चों को बचपन जीने दो।' आप इसे मेरी प्रथम बालकविता/बालगीत, जो चाहे कहें, मैं इसे स्नेहधारा का प्रवाह कहती हूँ।

डॉ. विकास दवे : आपके बालसाहित्य लेखन का उद्देश्य क्या है?

डॉ. प्रभा पंत : आपका प्रश्न सराहनीय है। मेरे लिए साहित्य सर्जना जनसेवा का ही एक रूप है। यदि वह बालसाहित्य हो तो सोने पर सुहागा। आज व्यक्ति जिस मानसिक उद्वेलन, तनाव, अवसाद तथा असामान्य रक्तचाप, जैसी समस्याओं से ग्रसित है। इस स्थिति के प्रमुख कारण हैं, व्यक्ति का स्वयं को समय न देना; आत्मचिंतन न करना; अपनी क्षमताओं से अपरिचित होना; सोच-विचार किये बिना निर्णय

होना तथा अतिमहत्त्वाकांक्षा। मैंने अनुभव किया है कि बालसाहित्य में वह क्षमता है जो बाल्यकाल से ही एक मित्र, गुरु तथा माँ की भूमिका निभाता हुआ, अनायास ही व्यक्ति को चिंतन-मनन-मंथन का अभ्यासी बना देता है। यह विचार कर मैंने सर्वप्रथम बालसाहित्य की आवश्यकता और महत्त्व विषय पर शोधपरक लेख लिखा। उसके बाद विचार आया कि वर्षों से लोग मुझसे आग्रह कर रहे हैं कि मै 'म आप बच्चों के और हमारे मन में चल रही बातों को इतनी आसानी से पढ़ लेती हैं, इस पर कोई किताब लिखिए; जिससे हमें अपने बच्चों के पालन-पोषण की सीख मिल सके। जब मुझे मार्ग मिल गया तो मैंने बालोपयोगी साहित्य लिखना प्रारम्भ कर दिया। बालसाहित्य लिखना और उसे अधिसंख्य बच्चों तक पहुँचाना (पुस्तकों तथा जीवंत प्रस्तुतियों द्वारा) मैं अपना कर्तव्य मानती हूँ। यदि मैं बच्चों को ऐसा साहित्य प्रदान कर सकी, जो उनके लिए रुचिकर एवं मनोरंजक होने के साथ ही उन्हें जीने की कला सिखाने; बिना उपदेश दिए संस्कारित करने और उनका सोच विकसित करने में सहायक बन सके, तो मैं स्वयं को बाल साहित्यकार कहलाने में गौरवान्वित अनुभव करूँगी।

डॉ. विकास दवे : लेखन की दृष्टि से आपकी सर्वाधिक रुचि साहित्य की किस विधा में है, और क्यों?

डॉ. प्रभा पंत : मैं गद्य और पद्य दोनों लिखती हूँ। वैचारिक एवं शोधपरक लेखन मुझे रुचिकर लगता है; क्योंकि आवश्यकतानुसार मैं उसे कभी भी लिख सकती हूँ। संस्मरण, स्मृतियों की गठरी खुलते ही स्वतः ही निःसृत होते चले जाते हैं। कविता मैं केवल तभी लिखती हूँ, जब वह जन्म लेने के लिए मुझे छटपटाहट से भर देती है, और कहानी, जब किसी का जीवन संघर्ष, व्यक्तित्त्व, मधुर एवं आत्मीयतापूर्ण संबंध-संवाद, लोगों के अनुभव-अनुभूतियाँ, घटना अथवा दुर्घटनादि मुझे सामाजिक दृष्टि से उत्प्रेरक प्रतीत होता है, तो वह कहानी बनकर स्वयं को लिखवाने लगती है। वास्तविकता यह है कि लेखन मुझे अत्यंत प्रिय है, भाव और विचार जब जिस धारा में प्रवाहित होते हैं, मैं बहने देती हूँ।

डॉ. विकास दवे : आपका रचना संसार अत्यंत व्यापक है, कृपया अपनी रचनाओं का उल्लेख करें।

डॉ. प्रभा पंत : लोकसाहित्य- कुमाउँनी लोककथाएँ (हिंदी अनुवाद सहित), पूर्वजों से सुनी कहानियाँ (हिंदी अनुवाद सहित), उत्तराखण्ड की लोककथाएँ, हम और हमारा कुमाऊँ, कुमाउँनी लोककथाएँ एवं लोकगाथाएँ : वैज्ञानिक अध्ययन, उत्तराखण्डी लोककथाएँ।

बाल साहित्य- बच्चे मन के सच्चे, परी हंसवाली (लोककथाएँ), तुम्हें सुनाऊँ एक कहानी, बचपन जीने दो तथा माँ सुनाओ कहानी। (जीवनी) कर्मयोगी सरला बहन। (कविता संग्रह) तेरा तुझको अर्पण तथा मैं। (कहानी संग्रह) फाँस, मेरी प्रतिनिधि कहानियाँ। (कुमाउँनी साहित्य) (समालोचनात्मक साहित्य)

डॉ. विकास दवे : आप अपनी रचनाओं में विषय वस्तु का चुनाव कैसे करती हैं?

डॉ. प्रभा पंत : कविता तो भावधारा है, अपना मार्ग स्वतः प्रशस्त करती हुई बढ़ती चली जाती है। निबंध तथा लेखादि के विषय अपनी अभिरुचि, समाज तथा पत्र-पत्रिकाओं के संपादक की आवश्यकता के अनुसार, तथा अपनी कहानियों की विषयवस्तु का चयन किसी व्यक्ति के जीवन संघर्ष से, उसके प्रेरक सोच एवं चरित्र से अथवा पात्र के मनोविज्ञान से।

डॉ. विकास दवे : क्या आपके पात्र वास्तविक जीवन से जुड़े होते हैं, या काल्पनिक होते हैं?

आपका प्रिय पात्र कौन है?

डॉ. प्रभा पंत : मेरे द्वारा लिखित कहानियाँ लोगों द्वारा सुनायी गई आपबीती घटनाएँ, अनुभव, बातें/संवाद हैं; अत: पात्र- घटनाएँ एवं अधिकांश संवाद भी वास्तविक हैं, किन्तु स्थान-नामादि नहीं। मुझे अपनी कहानी के सभी पात्र अत्यंत प्रिय हैं, क्योंकि वह व्यक्ति और समाज के लिए प्रेरक हैं, तथा पाठकों को मार्गदर्शक प्रतीत होते हैं। यदि मुझे किसी एक का उल्लेख करना हो तो मैं 'माया' का नाम लूँगी। एक काउंसलर के रूप में मैं वर्षों से देख-सुन रही हूँ कि अधिकांश संबंधों एवं परिवारों के विघटन का प्रमुख कारण अहं की टकराहट है, ऐसे में माया एक ऐसी पात्र जो सामाजिक मूल्यों का निर्वहन करते हुए, मानवीय मूल्यों की भी रक्षा करती है।

डॉ. विकास दवे : आपकी रचना प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले मूलतत्त्व क्या हैं?

डॉ. प्रभा पंत : कथानक, पात्र एवं मेरे लेखन का उद्देश्य सामाजिक परिवेश और उसमें होने वाले परिवर्तन मेरे लेखन को जीवंतता प्रदान करते हैं और पाठकों की उत्साहित करने वाली प्रतिक्रियाएँ, तथा आत्मीयतापूर्ण आग्रह मुझे ऊर्जावान बनाते हैं; लोगों का मेरे प्रति मुझे सर्जनात्मक बने रहने के लिए प्रेरित करता है।

डॉ. विकास दवे : आप अपनी कौन-सी रचना को सर्वश्रेष्ठ मानती हैं, और क्यों?

डॉ. प्रभा पंत : इस प्रश्न का उत्तर पाठकों से पूछकर दूँगी। इसके अतिरिक्त सर्वश्रेष्ठता की कसौटी समय होता है, अत: उसका उत्तर समय ही देगा। मैं दृष्टि में मेरी जो भी रचना व्यक्ति और समाज के लिए प्रेरक बने, पाठकों को रुचिकर, उपयोगी और महत्त्वपूर्ण लगे, वह मेरे श्रम और सोच को सार्थकता प्रदान करती है।

डॉ. विकास दवे : स्वयं को बाल साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए, किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है?

डॉ. प्रभा पंत : मेरा उद्देश्य साहित्य के माध्यम से समाज की सेवा करना है, स्वयं को साहित्यकार अथवा बालसाहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित करना नहीं है; इसलिए मुझे अब तक एक भी चुनौती का सामना नहीं करना पड़ा। सृजनशीलता प्रकृतिप्रदत्त उपहार है, जो मुझे आनन्दित करता है।

डॉ. विकास दवे : बालसाहित्य को बालसाहित्य के प्रति उपेक्षाभाव?

डॉ. प्रभा पंत : मुझे नहीं लगता कोई भी बालसाहित्य को बालसाहित्य के प्रति उपेक्षाभाव रखता होगा। बालसाहित्य के प्रति उदासीनता या उपेक्षाभाव का अर्थ है, बच्चों के प्रति उदासीनता या उपेक्षाभाव रखना। यदि वास्तव में किसी का सोच ऐसा है तो उसे एक बार पुन: आत्मावलोकन करते हुए, इस पर विचार करना चाहिए। मेरी दृष्टि में साहित्य की प्रत्येक विधा का उद्देश्य मनोरंजन करने के साथ ही व्यक्ति और समाज का सोच विकसित करके, जीवन को सहज एवं सरस बनाना तथा उचित दिशा प्रदान करना होता है। आज बालसाहित्य में कहानी और कविता ही नहीं नाटक, उपन्यास, जीवनी, संस्मरण, यात्रावृत्तांत, जीवनी, पत्र आदि भी लिखे जा रहे हैं।

डॉ. विकास दवे : जिन प्रौढ़ साहित्यकारों ने बाल साहित्य लिखा अथवा लिखने का प्रयास किया, उसमें से अधिकांश को सफलता नहीं मिली, अथवा आंशिक सफलता मिली?

डॉ. प्रभा पंत : कृपया मुझे ऐसे साहित्यकारों के नाम अवश्य बताएँ, जो स्वयं को असफल मानते

हैं। मेरी दृष्टि में यह आंशिक सत्य हो सकता है। मैं अपने अनुभव से यह अवश्य कह सकती हूँ कि अधिकांशत: असफल वही लोग होते हैं, जो कोई भी कार्य केवल करने के लिए करते हैं अथवा किसी लालसा के वशीभूत करते हैं। वृक्ष का कार्य देना है, और साहित्यकार भी समाज देता है, उससे अंशमात्र लेकर। जिनके लिए साहित्य सर्जना जीविकोपार्जन का साधन है, वह स्वयं को अवश्य असफल मानते होंगे; क्योंकि वर्तमान समय में इससे धनोपार्जन करना वास्तव में दुष्कर है।

डॉ. विकास दवे : बाल साहित्य में मनोविज्ञान का क्या स्थान है, क्या बाल मनोविज्ञान को समझे बिना बाल साहित्य का सृजन किया जा सकता है?

डॉ. प्रभा पंत : बाल मनोविज्ञान को समझे बिना बालसाहित्य सर्जना वैसी ही है, जैसे रंगों को जाने बिना पेंटिंग करना। बालसाहित्य उपदेशक बनकर नहीं, बालमन को प्रतिबिम्बित एवं प्रतिध्वनित करके ही बालपाठकों को आकर्षित करता है। जिस तरह अपना प्रतिबिम्ब देखकर व्यक्ति सदैव आनन्दित ही नहीं होता बल्कि मनोनुकूल छवि न दिखने पर वह स्वयं को सँवारने को तत्पर हो उठता है तथा अपने स्वर की कर्कशता को अनुभव कर उसे मधुर बनाने का प्रयास करता है; उसी प्रकार बच्चे भी जब बालकहानी, बालगीत, बालनाटिका आदि सुनते-पढ़ते-देखते हुए, उसमें अपने परिवेश, वातावरण, क्रियाकलाप तथा अपने मनोभावों को प्रतिबिम्बत होते हुए देखते हैं तो उसके प्रति सहज ही आकृष्ट हो उठते हैं।

डॉ. विकास दवे : आजकल लेखकों द्वारा काफी कुछ लिखा जा रहा है किन्तु पाठक उतना प्रभावित नहीं हो पा रहा। आपकी दृष्टि में इसका कारण है?

डॉ. प्रभा पंत : आज अधिकांश लेखक आत्ममुग्ध हैं। जब लेखन पुरस्कार और सम्मान प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाएगा, तो उससे केवल वही प्राप्त किया जा सकता है, पाठक नहीं।

डॉ. विकास दवे : आपने बाल साहित्य की कौन-कौन-सी विधाओं में सृजन किया है? इनमें से आपकी सर्वाधिक प्रिय विधा कौन-सी है?

डॉ. प्रभा पंत : निबंध, कहानी, कविता, बालगीत, पत्र, जीवनी के अतिरिक्त मैंने कुमाउँनी लोककथाएँ संगृहीत करके, अपनी भावी पीढ़ी के लिए उसके संकलन भी प्रकाशित कराए हैं। जहाँ तक सर्वाधिक प्रिय विधा का प्रश्न है, मैंने आज तक इस विषय में कभी सोचा ही नहीं।

डॉ. विकास दवे : आपके अनुसार बाल साहित्य को किस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है? इसकी विशेषताओं और महत्त्व पर भी प्रकाश डालिए।

डॉ. प्रभा पंत : बालसाहित्य वह साहित्य है, जो बच्चों का मनोरंजन करने के साथ ही उनकी कल्पनाशीलता को दिषा प्रदान करे तथा उन्हें जीवन के यथार्थ से परिचित कराने में भी सहायक हो। कहानी, कविता, गीत, जीवनी, आत्मकथ्य, संस्मरण, नाटक, उपन्यास आदि साहित्य की ऐसी विधाएँ हैं, जिन्हें पढ़ते हुए बच्चे सुसंस्कारित तो होते ही हैं; उनका ज्ञानवर्धन एवं बौद्धिक विकास भी होता है। बालसाहित्य बच्चों को परस्पर व्यवहार करना सिखाता है, उन्हे संवेदनशील बनाता है; इसके अतिरिक्त बालसाहित्य पढ़ने से बच्चों को भाषा, व्याकरण, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान जैसे विषय भी रुचिकर लगने लगते हैं तथा अध्ययन के प्रति उनकी अभिरुचि सहज ही जाग्रत होने लगती है।

डॉ. विकास दवे : डिजिटल युग में आपको साहित्य का क्या भविष्य प्रतीत होता है?

डॉ. प्रभा पंत : इस युग में लेखकों का भविष्य उज्ज्वल है। आज अधिकांश समूहों में/पटलों पर लोगों को आत्माभिव्यक्ति के अवसर, पाठक, प्रशंसक, प्रेरणास्रोत, अतिशीघ्र पहचान तथा कभी-कभी आलोचक भी सब कुछ प्राप्त हो रहा है। जहाँ तक साहित्य के भविष्य का प्रश्न है, वह तो उज्ज्वल था और रहेगा; क्योंकि साहित्य सर्जना साधना है और साहित्यकार साधक। किसी भी साधक को वर्षों बाद ही सही, परंतु सिद्धि प्राप्त होती ही है। ऐसे साहित्यसर्जकों की रचना को एक बार पढ़ने का बाद पाठक उसकी रचनाओं को खोज-खोजकर पढ़ता है, और अन्य लोगों को पढ़ने के लिए प्रेरित भी करता है। साहित्यकार की दृष्टि से विचार करें तो उसकी आर्थिक स्थिति पहले भी चिंतनीय ही थी।

डॉ. विकास दवे : लेखन कार्य के अलावा आपकी अन्य अभिरुचियाँ क्या हैं?

डॉ. प्रभा पंत : लेखन के अलावा मुझे बुजुर्गों से उनके अनुभव सुनना; बच्चों के मन को पढ़ना, उनकी जिज्ञासाओं को सुनना, बागवानी करना; प्रकृति के संकेतों को सुनना, उसे निहारना, पेड़-पौधों से बातें करना तथा उसके संदेशों को समझने का प्रयास करना; उदास-निराश चेहरों पर मुस्कान बिखेरना; अपने विद्यार्थियों की उलझन को सुलझाना तथा उनका मार्गदर्शन करना, गीत-ग़ज़ल सुनना और गुनगुनाना; पेंटिंग करना; खाना बनाना; संक्षेप में कहूँ तो प्रत्येक रचनात्मक कार्य करना, सीखना-सिखाना तथा अपने और अपनों के साथ समय व्यतीत करना मुझे बहुत अच्छा लगता है।

डॉ. विकास दवे : उदीयमान लेखकों के लिए आप क्या संदेश देना चाहती हैं।

डॉ. प्रभा पंत : सर्वप्रथम यह विचार अवश्य करें, हम क्यों और किसके लिए लिख रहे हैं। दूसरी बात, हम अध्ययनशील बनें, पुस्तकें ख़रीदकर पढ़े, उपहार में दें, जब लिखें तो द्वेषभाव एवं पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर लिखें। यदि हम प्रतिस्पर्धा के कारण या अपने अहं को तुष्ट करने के लिए लिखेंगे, अथवा हमारी कथनी-करनी में भेद होगा, तो हमारा लेखन केवल तभी तक जीवंत रहेगा, जब तक उसे प्रोन्नत करने-करवाने के लिए श्रमशील बने रहेंगे। आत्ममुग्धता लेखक का सबसे बड़ा शत्रु है, और आत्मालोचना सर्वश्रेष्ठ मित्र।

डॉ. विकास दवे : हिन्दी साहित्य के पाठकों की संख्या के विकास के लिए आप क्या सुझाव देना चाहती हैं?

डॉ. प्रभा पंत : बाल्यकाल से ही बच्चों को रुचिकर, मनोरंजक एवं ज्ञानवर्धक हिंदी बालसाहित्य उपलब्ध कराया जाए; उन्हें पढ़कर सुनाया जाए; पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त उन्हें अन्य पुस्तकें/पत्रिकाएँ उपहार में दी जाएँ तथा पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। यह तभी संभव है; जब माता-पिता तथा परिवारजन, स्वयं को मानसिक दासता से मुक्त करके, अपनी भाषा और लिपि के प्रति सम्मानभाव भरेंगे, हिंदी की आवश्यकता और महत्त्व को समझेंगे; अपने शिशुओं को अंग्रेजी के साथ हिंदी शब्दों का उच्चारण करना, देवनागरी लिपि में लिखना, तथा हिंदी के वाक्य बोलना सिखाएँगे। बच्चों को भारतीय संस्कृति से परिचित कराने के लिए हिंदी बालसाहित्य पढ़ने के लिए प्रेरित करना प्रारंभ करेंगे।

सम्पर्क : *हल्द्वानी*
मो. 9411196868

डॉ विमला भंडारी

बाल आत्मकथा की गागर : ज्ञान, आनंद का सागर

बाल साहित्य जगत, बाल कविता, बाल गीत, बाल पहेली, चित्र पहेली, चित्र कथा, बाल कहानी, बाल उपन्यास, बाल एकांकी जैसी कई अति प्रचलित विधाओं से लबालब भरा हुआ कलश है। जिनकी बाल पाठक तक संप्रेषणीयता और पैठ गजब की है। बालमन पर इन विधाओं में रचे गए साहित्य की गहरी छाया उनके भावी जीवन में भी दृष्टिगत होती है। ऐसे कई उदाहरणों से इतिहास भरा पड़ा है। बालक मोहनदास करमचंद को ही ले लीजिए, 'सत्यवादी हरिश्चंद्र' नाटक देखा और आजीवन सत्य की राह पर चलने का व्रत धारण करने का संकल्प कर लिया। वहीं बालक बड़ा होकर महात्मा गांधी बना। जीजाबाई की प्रेरक कहानियों ने बालक शिवा के मन में बचपन से ही साहस और वीरता के संस्कार भर दिए। बड़े होने पर वही बालक छत्रपति शिवाजी बने।

रचनाकार को रचना कर्म के लिए किसी न किसी विधा का चयन करना अनिवार्य होता है या इसे यूँ भी कह सकते हैं कि कल्पना के पंखों पर रचना, विधा का परिधान पहनकर मस्तिष्क में सज-संवर कर जन्म लेती है। हालांकि रचनाकार को विषय और विधा की जुगलबंदी का चयन बड़ी सूझबूझ से करना पड़ता है।

प्रौढ़ साहित्य की लोकप्रिय आत्मकथा विधा को ही लीजिए। कई महापुरुषों, शिखर पर रहे सफल व्यक्तियों ने अपनी आत्मकथा लिखी और उसे पढ़ने के लिए सयानो में अधिक उतावली देखी गई। आत्मकथा यानी अपने जीवन की सच्ची कहानी। अतीत में गुजरा वह उल्लेखनीय घटनाक्रम और उससे निसृत अनुभव जो पाठकों के पढ़ने के लिए दिल खोल के रख देने जैसा है। जिसमें जीवन के कटु प्रसंग और नंगी सच्चाई भी सम्मिलित हुई हो। जो अपने कालखंड के भीतर समेटे गए कई रहस्यों को उद्घाटित भी करती जाए। प्रौढ़ साहित्य का पाठक इसमें गहन रुचि रखता है।

बाल साहित्य में आत्मकथा लेखन विधा नई नहीं है किंतु यह प्रौढ़ आत्मकथा से बिल्कुल अलग है। बाल साहित्य में इसका भिन्न स्वरूप नजर आता है। यहाँ अपनी कहानी अपनी जुबानी किसी वस्तु, किसी जगह की है। किसी सजीव या निर्जीव की है। विज्ञान-खोज अपनी कहानी खुद

कहता, कलमकार की लेखनी से उद्भासित होता है, जैसे पेन या पेंसिल अपने आविष्कार और जन्म से लेकर आज तक की अपनी यात्रा बताते चलते हैं। अपने विभिन्न स्वरूप, उपादेयता के बारे में आत्मकथा के माध्यम से कहानी बुनी जाती हैं। मूक को लेखक अपने शब्द देकर वाचाल करता हुआ उसका दुख-दर्द, सुख पाठक को सुनाता हैं। अपनी विशिष्ट विशेषताओं का उल्लेख करता है। इसका अपना आनंद है। बाल पाठक के ज्ञान चक्षु को संतृप्त करती आत्मकथात्मक लेखन आनंद रस से भरे एक अलग संसारिक कटोरे में विचरण करवाता है। यही इसकी विशेषता और अनूठापन इसे प्रौढ़ आत्मकथा से पृथक करता है।

उदाहरण के तौर पर किसी खोज पर वैज्ञानिक दृष्टि से आलेख लिखा जाएगा तो उसमें ज्ञान तो होगा पर आनंद रस नहीं होगा। यह आलेख बालमन को बांध नहीं पाएगा। बालमन के लिए सुग्राही और सुपाच्य नहीं होगा किंतु वही उसी खोज को अगर आत्मकथात्मक विधा में लालित्य पूर्ण भाषा का प्रयोग कर लिखा जाए तो ज्ञान में कमी भी नहीं होगी परंतु आनंद रस की चाशनी में डूबा यह ज्ञान आसानी से बालमन पर अपना प्रभाव छोड़ने में सफल हो जाएगा।

प्रौढ़ साहित्य में आत्मकथा लेखन की सीमा रेखा गद्य तक ही सिमटी हुई है। वहीं बाल साहित्य में कहानी, आलेख, कविता, नाटक, पहेली यानी गद्य-पद्य दोनों में यह रचा जा रहा है।

बाल आत्मकथा विधा में लेखन सालों से हो रहा है। समृद्ध और प्रभावी होने के बाद भी अब तक यह हाशिए पर ही रहा। जबकि अपनी संप्रेषणीयता से लेकर रचना निर्माण की सभी कसौटियों पर खरा होते हुए भी कभी चर्चा का केंद्र नहीं बना। इस विधा पर कभी कोई कार्यशाला, बाल साहित्य में तो क्या प्रौढ़ साहित्य में भी इससे पहले नहीं हुई। जबकि आत्मकथात्मक रचना की गागर भरपूर ज्ञान और आनंद का सागर है। फिर भी कभी शोध पत्रवाचन नहीं हुआ। पृथक से शोध नहीं हुआ। कभी विशेषांक के रूप में रेखांकित नहीं हुआ। ऐसी हाशिये पर पड़ी अल्पचर्चित विधा पर एक विशेषांक के माध्यम से ध्यान आकर्षित कराना पत्र-पत्रिकाओं की वर्तमान में उपादेयता रूपी पल्स रेट को सुनना और सुनाना है। डॉ. विकास दवे द्वारा 'साक्षात्कार' पत्रिका के माध्यम से किया गया यह उपक्रम अतिसराहनीय है। इस अंक में आप आत्मकथात्मक लेखन को कड़ी दर कड़ी धड़कते हुए पायेंगे। बाल आत्मकथात्मक लेखन की विशेषताओं में विषय की विविधता इस इकलौते अंक में गजब का फैलाव लिए हुए उपयोगी बन पड़ी है-

प्रकृति के अंतर्गत- मैं आकाशगंगा हूँ, क्या कहती है धरती हमारी, मैं सरोवर हूँ, मैं बादल भैया, इनके लुभावने शीर्षक मन को मोहने वाले हैं।

पेड़ पौधे और पर्यावरण के अंर्तगत- मैं पर्यावरण हूँ, खिलखिला उठी जिंदगी (वटवृक्ष की आत्मकथा), मैं पीपल का पेड़ हूँ, मैं कमल हूँ, घास की आत्मकथा, सुनो मैं तुलसी हूँ, मैं नर्सरी हूँ, शीर्षक के अंतर्गत सम्मिलित हुई है।

निर्जीव वस्तुओं को लेकर भी आत्मकथात्मक लेखन की बानगी देखिए- सुई डोरे की दोस्ती, मैं हूँ आपका प्यारा दोस्त (टेडी बियर खिलौना) कागज की आत्मकथा, बोलती कलम, चॉकलेट की आत्मकथा समाहित हुई है।

स्थान या जगह भी अपनी अनूठी छटा बिखेरते दिखाई दे रहे हैं- मैं हावड़ा ब्रिज हूँ, आत्मकथा एक मकान की, प्रतीक्षा है तुम्हारी (रेजिडेंसी), मैं भी घर का हिस्सा हूँ (कबाड़खाना), पुस्तकालय की आत्मकथा जैसे बाल संसार के करीब और कुछ उनके लिए नवीन विषय पर भी लेखन हैं।

यहाँ वन्यजीवों का भी अस्तित्व है तो पालतू जीवों का भी। देखिए- मैं हूँ मुकंदरा का राजा एमटी-1, मैं हूँ खलनायक (मच्छर की कहानी), मियां मिट्ठू। बालमन को जीवजगत से परिचय करवाने का उपक्रम भी इस विधा में मिलता है।

चॉकलेट की आत्मकथा, मैं हूँ पौष्टिक आहार, मैं हूँ रोटी, जैसे विषय भी खाद्य सामग्री जैसे जनउपयोगी विषय भी समाहित किए हुए हैं।

राष्ट्रीय प्रतीक की कहानी कहते 'तिरंगे की कहानी', राष्ट्रीय ध्वज की विषय वस्तु में समाहित होकर बालक का ज्ञान बढ़ा रही है।

विज्ञान और उसके आविष्कार जैसे विषय के बिना तो वर्तमान में सारी बात ही अधूरी लगती है। खासतौर से किशोर बच्चों के लिए बहुत ही सरल और लालित्यपूर्ण, सधी भाषा में- 'मैं वायुयान हूँ' वायुयान के विकास यात्रा की संपूर्ण की कहानी विस्तार से चलती है। 'मैं चुंबक हूँ', भौतिक विज्ञान को बड़े मनोरंजक तरीके से इस आत्मकथात्मक लेखन में परोसा गया है। 'हेलो! मैं इंटरनेट हूँ', 'मैं अन्नपूर्णा हूँ', 'कोवैक्सीन की आत्मकथा' जैसी चिकित्सा विज्ञान की आधुनिक खोज को भी आत्मकथा लेखन का विषय बनाकर विविधता भरी सामग्री इस अंक में रखी गई है। यह तो एक छोटा सा फलक है किंतु इसी आत्मकथात्मक लेखन का बड़ा फलक भी हिंदी बाल साहित्य जगत में मौजूद होगा और इसमें सम्मिलित नहीं हो पाया। कारण वही है कि कहीं तो सीमा रेखा खींचनी होती है।

यहाँ बाल साहित्य की इस विधा में विषय का पैनापन, संवादों की सीढ़ी से गुजरता हुआ, दृश्य चित्रण और मनोरंजक भाषा के लालित्य से सरोबर होकर बालमन को मोहित करने वाला प्रतीत हो रहा है। इसे पढ़ने के बाद आप भी मुझसे सहमत होंगे। एक बार पुनः डॉ. विकास दवे द्वारा किए गए इस अनुकरणीय प्रयास के लिए साधुवाद।

पिछले 12 वर्षों से बाल साहित्यकार अधिवेशन में कई प्रयोग बच्चों, शिक्षकों, अभिभावकों और साहित्यकारों के साथ मिलकर करने के अवसर मिले हैं। 2017 से इन्हें विधागत रूप से वर्गीकृत करके सम्मेलन करवाने का प्रयोग सलिला संस्था के माध्यम से मैंने किया है। सबसे पहले अधिवेशन को बाल कहानी विधा पर केंद्रित कर देश भर के रचनाकारों को जोड़कर इस उपक्रम को किया गया। परिणामतया 'हमारे समय की श्रेष्ठ बाल कहानियाँ' का पुस्तक रूप में एक छोटा कैनवास तैयार हुआ। छोटा कैनवास इसलिए क्योंकि इसे संपूर्ण नहीं कहा जा सकता है। हमें कहीं तो सीमा रेखा खींचनी ही होती है।

इसके बाद 'देख लो जग सारा' पुस्तक यात्रा वृतांत विधा, 'पत्र तुम्हारे लिए' पुस्तक पत्र लेखन विधा और 'श्रेष्ठ बाल एकांकी संचयन' पुस्तक बाल एकांकी विधा के सफल प्रयोग से

वर्तमान बाल साहित्य को समृद्ध करने के इस नवाचार से संकलन तैयार हुए। गत वर्ष आत्मकथात्मक लेखन को केंद्र में लिया गया। कोरोना के कारण यह अधिवेशन दो दिवसीय वेबीनार के माध्यम से संपूर्ण हुआ। परिणाम सुखद निकला।

आत्मकथात्मक लेखन को नया मोड़ उस समय मिला जब भारतीय साहित्य शोध संस्थान, इंदौर और बाल पत्रिका देवपुत्र के संपादक के रूप में जुड़े डॉ. विकास दवे, निर्देशक, मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य अकादमी, इस विधा के महत्व को रेखांकित करते हुए उन्होंने उसे नवाचार दिया। सलिला संस्था और भारतीय साहित्य शोध संस्थान दोनों से चयनित आत्मकथा को संकलित कर एक रूपरेखा तैयार की। इस उपक्रम में कई महत्वपूर्ण बाल आत्मकथाओं के समुच्चय को जोड़ा गया और एक समृद्ध सूची तैयार की। इतना ही नहीं मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी की प्रतिष्ठित पत्रिका 'साक्षात्कार' को बाल आत्मकथात्मक लेखन विधा का विशेषांक बनाकर हिंदी जगत के बड़े पाठक समूह तक पहुँचाने का श्लाघनीय प्रयास किया। यह नवप्रयोग अपने आप में अनूठा और पहला प्रयास है। यह कहा जा सकता है कि अभी हिंदी बाल साहित्य कहानी, कविता, विशेषांक निकले होंगे किन्तु बाल आत्मकथा को लेकर विशेषांक देने का मेरी नजर में यह पहला प्रयास है। यहाँ तक कहा जा सकता है कि यह प्रयास प्रौढ़ साहित्य में भी अभी तक अछूता है। इस संग्रहणीय, उपयोगी उल्लेखनीय बाल साहित्य विशेषांक का चहुंओर स्वागत होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

__सम्पर्क :__ सलूंबर (राज.)
मो. 9145815390

डॉ. गिरीशदत्त शर्मा

मैं आकाश गंगा हूँ!

बच्चों, मैं ही वह आकाश हूँ जिसे कुछ लोग मन्दाकिनी के नाम से जानते हैं और कुछ मुझे अंग्रेजी नाम गेलैक्सी से संबोधित करते हैं। जब कभी अँधेरी रात हो, आकाश साफ हो, तब जरा कमरे से बाहर निकलकर आकाश की ओर निहारो तुम्हें हजारों लाखों टिमटिमाते-चमकते तारे दिखाई देंगे। इन्हीं के बीच में दिखाई देगी एक झीनी-झीनी सी सफेद दूधिया चादर जैसी पट्टी जो आकाश के एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुई नजर आएगी। यही तो मैं हूँ जो तुमसे करोड़ों किलोमीटर दूर हूँ।

पहले जब तक धरती माँ के लोगों को मेरे बारे में कोई विशेष जानकारी नहीं थी कोई मुझे इन्द्र के हाथी ऐरावत का स्वर्ग में जाने का मार्ग कहता तो कोई यमराज के दूतों का मार्ग जिस पर चल कर यमदूत मृत्यु लोक के प्राणियों के प्राणों को लेकर यमपुरी पहुँचते हैं। अस्तु, जितने मुँह उतनी बातें। भला हो बेचारे डिमोक्राटीस का जिसने आज से 2400 वर्ष पहले मेरे बारे में कुछ सही जानकारी दी। उसने बताया कि मेरा स्वरूप आकाश में फैले असंख्य छोटे-बड़े तारों का एक विशाल परिवार है। इन तारों के भी ग्रह, नक्षत्र राशि आदि के रूप में अलग-अलग परिवार हैं। जो लगातार अपने आस-पास चक्कर लगाते मेरी परिक्रमा करते रहते हैं। ये तारे तुमसे करोड़ों किलोमीटर दूर होने के कारण धरती से अलग-अलग दिखाई न देकर झीनी फटी-फटी सी चादर के रूप में दिखाई देते हैं। डिमोक्राटीस की यह बात बहुत लोगों को नहीं जँची परन्तु सन् 1700 के बाद यह बात सत्य प्रतीत हुई जब हरशैल नामक व्यक्ति ने अपनी शक्तिशाली दूरबीन से मेरी ओर ताका। उसके बाद तो मेरे रूप आकार और स्थिति आदि को जानने में लोगों की दिलचस्पी बढ़ती गई और खोजों का ताँता सा लग गया। अब तो मेरे बारे में लोगों को सब कुछ पता चल गया है। पहले बच्चों, तुम्हारी दुनिया के लोग आकाश में मुझे अकेला ही मानते थे परन्तु पता चला है कि अन्तरिक्ष में मेरी और भी बहनें अपने परिवार के साथ विचरण कर रही हैं। आकाश में इनकी संख्या लगभग दस अरब बताते हैं।

तुम्हें मेरे आकार, विस्तार और परिवार के बारे में जानने की उत्सुकता होगी। आओ तुम्हें बताती हूँ। धरती से तुम्हें मैं छोटी सी दिखाई पड़ती हूँ परन्तु मेरा आकार बहुत बड़ा है, जिसे किलोमीटर की संख्या में तो बताया ही नहीं जा सकता है। इसे तो प्रकाश वर्ष में ही बताते हैं। प्रकाश एक वर्ष में 9 लाख 86 मील प्रति सेकेण्ड की दर से चलता हुआ 95,00,00,00,00,000 (पिच्चानवे खरब) किलो मीटर की दूरी तय

कर लेता है। इस प्रकार मेरी कुल दूरी केन्द्र से लगभग एक लाख प्रकाश वर्ष है। मेरा केन्द्र नाभि कहलाता है। अंग्रेजी में इसे 'न्यूकली' और हिन्दी में 'केन्द्रक' कहते हैं। मेरी इस नाभि का आकार तले हुए अण्डे जैसा है। इसके सिरों पर सर्पिल आकार के जो हुए लम्बे-लम्बे भाग दिखाई दे रहे हैं वे मेरी भुजाएँ हैं। इनकी लम्बाई भी प्रकाश वर्ष में नापी जाती है। साँप जैसे आकार की इन घूमती हुई भुजाओं में तुम्हारे सूर्य जैसे अनेक तारे, ग्रह, उपग्रह, उल्का, धूमकेतु आदि अपने पारिवारिक सदस्यों के साथ अपनी धुरियों पर घूमते हुए मेरी नाभि के चारों ओर परिक्रमा करते रहते हैं। तुम्हारा सूरज जिसे तुम रोजाना आकाश में देखते हो मेरी नाभि से 36,000 प्रकाश वर्ष दूर है और अपने परिवार के नौ ग्रह, उनके उपग्रह आदि सदस्यों के साथ 225 करोड़ वर्ष में एक परिक्रमा कर लेता है और मैं स्वयं अन्य आकाश गंगाओं की तरह 20,000 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड की गति से एक अनिश्चित लक्ष्य की ओर बढ़ती जा रही हूँ।

तुम्हारे सूर्य जैसे मेरे विशाल परिवार में 100 अरब से भी अधिक तारे हैं जो अपने परिवारों के साथ मौज मस्ती का जीवन बिता रहे हैं। परन्तु वे इतनी दूर हैं कि तुम्हारी धरती तक उनकी रोशनी नहीं पहुँच सकती इसलिए आकाश में तुम्हें केवल एक ही सूर्य दिखाई देता है। अल्फा सैंचुरी तारा तो सूर्य का सबसे नजदीकी भाई है उसका प्रकाश भी धरती तक आने में 4.3 वर्ष लग जाते हैं।

बच्चों, जिस प्रकार तुम्हारी दुनिया के परिवारों के पास-पास मकान बनाकर रहते हैं उसी प्रकार मेरे ये तारे भी चार-चार, छः-छः मिलकर बस्ती बनाकर रहते हैं। सबसे छोटी बस्ती दो तारों की है। ऐसे 68 प्रतिशत परिवार मेरे में समाये हुए हैं। आओ, अब तुम्हारे सूर्य और उसके परिवार के बारे में भी तुम्हें बता दूँ।

तुम्हारा सूर्य हिन्दू विचारधारा के अनुसार वायु का पिता बताया जाता है जिससे रस, सुगन्धि और माधुर्य की उत्पत्ति होती है। यह पृथ्वी से 1 करोड़ 30 लाख मील दूर है। इसमें हाइड्रोजन और हीलियम गैस की प्रधानता है। इसी से इसमें प्रकाश और ताप की उत्पत्ति होती है। इसके केन्द्र में लगभग 15 मिलियन डिग्री सेल्यियस तथा बाहरी सतह पर 6000 डिग्री सेल्सियस ताप मिलता है। लगभग 30 प्रतिशत हाइड्रोजन 10 प्रतिशत हीलियम से निर्मित इसके शरीर में भँवर उत्पन्न होते रहते हैं जिससे समय-समय पर ताप बढ़ जाता है। धरती तक इसके प्रकाश को आने में 8 मिनिट 22 सेकेण्ड लगते हैं। सूर्य से निकलने वाले ताप का दो अरब वाँ भाग ही तुम्हारी पृथ्वी तक पहुँचता है और इसका भी लगभग 53 प्रतिशत भाग पृथ्वी पर पहुँचने से पहले ही नष्ट हो जाता है। सूर्य का व्यास 8 लाख 65,000 मील है। इसकी आयु 4 अरब वर्ष बताते हैं।

सूर्य के परिवार में बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, अरुण, वरुण और कुबेर नामक नौ ग्रह तथा इनके अनेक उपग्रह, अवान्तर ग्रह आदि है। सूर्य के इस पूरे पारिवारिक विस्तार का व्यास 1,179 करोड़ किलोमीटर है। भारतीय ज्योतिष के अनुसार इन सभी में देवत्व की कल्पना की गई है तथा इनको शांत एवं अनुकूल बने रहने के लिए प्रत्येक धार्मिक कार्य में इनकी पूजा की जाती है।

सम्पर्क : *संगरिया (राज़)*

डॉ. गिरीशदत्त शर्मा

क्या कहती है धरती हमारी

बच्चों, आपने पढ़ा है कि जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान हैं। जानते हो, क्यों? तुम्हारी माता ने जन्म देकर, दूध पिलाकर हर प्रकार से सुख देकर तुम्हें पाला पोसा है, उसी प्रकार मैं तुम्हारी धरती माँ अपने फल-फूल, अन्न, जल, वायु आदि से तुम्हारे सारे मानव जगत को सदियों से पालती पोसती आ रही हूँ। चारों ओर हरे-भरे मेरे आँगन में रंग-बिरंगे फूल, चीं-चीं करती चिड़ियाँ, कल-कल करती नदियाँ वन में गर्जन करते, दहाड़ते सिंह, उछलते-कूदते हिरण, खरगोश, पंख फैलाकर नाचते मोर जैसे मोहक वातावरण में जन्म लेने को देवता भी ललचाते हैं। राम, कृष्ण, शंकर आदि अनेक देवता मनुष्य रूप में मेरी गोद में खेले हैं और आप लोगों का कल्याण किया है, अच्छी दिशा दी है। क्या यह स्वर्ग से बढ़कर मेरी महानता नहीं है? ऐसी अवस्था में तुम मेरे बारे में जानने की उत्सुकता जरूर रखते होगे। आओ, मैं तुमको अपने बारे में बताती हूँ।

मेरा जन्म कब हुआ? कैसे हुआ? जानना चाहते हो तो सुनो-ऊपर बिना ओर-छोर वाला जो नीला आकाश दिखाई देता है, मैं उसी विशाल अन्तरिक्ष में एक कण के समान हूँ। मेरे जन्म के विषय में अनेक धार्मिक, दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विचार समय-समय पर आते रहे हैं और अभी भी चल रहे हैं। ईसाई मत के अनुसार मुझे ईश्वर ने स्वर्ग के बाद बनाया, भारतीय भास्कराचार्य ने आकाशी पिण्डों की गति के आधार पर मुझे आकाश में विचरण करते सौरमण्डल की आयु 5 अरब मानकर उसके समकालीन बताया। वर्तमान वैज्ञानिकों ने बिग बैंग परिकल्पना के आधार पर उत्पन्न होना बताया। अस्तु, जितने लोग उतने ही विचार।

मेरी आयु की भाँति मेरे जन्म के विषय में भी लोगों की भिन्न-भिन्न धारणाएँ रही हैं। सर्वप्रथम प्रस्तुत कल्पना के अनुसार आकाश में अकेले सूर्य के सामने जब कोई विशाल तारा आया तब उसके आकर्षण से सूर्य से कुछ पदार्थ बाहर निकल आया, जो तारे के चले जाने के पश्चात् अकेला रह गया और घूमता रहा। यह घूमता पदार्थ ठण्डा होकर टुकड़ों में बिखर गया जो ग्रह और उपग्रह कहलाए। मैं उन्हीं में से एक हूँ। कुछ लोग मेरा जन्म आकाश में बिखरे छोटे-छोटे अणुओं के आपस में इकट्ठे होकर ठोस टुकड़ों के रूप बन जाने से बताते हैं। कुछ विद्वान मेरा जन्म आकाश में घूमती चमकदार नीहारिकाओं से निकलने वाली पट्टियों के ठोस होकर अलग-अलग टुकड़ों में बँट जाने से बताते हैं। एक अन्य विचार के

अनुसार सूर्य जैसे तारे में कभी-कभी विखण्डन होने से टूटे हुए भागों के ठोस होने से मेरे जैसे ग्रहों की उत्पत्ति मानते हैं। कुछ लोगों ने मेरे जन्म में चुम्बकीय परिकल्पना मानी है। उनके अनुसार आकाश में बादलों के रूप में अनेक परमाणु छाए हुए थे। जब सूर्य उसमें से होकर निकला तब उसके चुम्बकीय प्रभाव से ये अणु एकत्रित और संगठित होकर अलग-अलग मेरे जैसे ग्रह बन गए। मेरे जन्म के विषय में अन्तिम परिकल्पना ब्रह्माण्ड का विकासवादी अथवा महाविस्फोट सिद्धांत है। इसके अनुसार बताया गया है कि अब से करोड़ों वर्ष पूर्व अन्तरिक्ष में एक विशाल पदार्थ था। उसमें एक भयंकर विस्फोट हुआ जिससे यह टूटकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बिखर गया। बाद में ये कण गुरुत्वाकर्षण से आपस में अलग-अलग समूह में इकट्ठे होकर मेरे जैसे पिण्ड, ग्रहों के रूप में बन गए। वर्तमान में इस परिकल्पना में कुछ संशोधन कर इसे 'बिग बैंग' का नाम दिया गया है। पर इतने पर भी अभी लोग सन्तुष्ट नहीं हो पाए हैं और लगातार नई-नई खोजों और परिकल्पनाओं में लगे हुए हैं।

मैं जिस परिवार की हूँ उसे सौर परिवार कहते हैं। इसमें मेरे अतिरिक्त मेरे 8 और बहिन-भाई हैं। जिन्हें बुध, गुरु, शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनि अरुण, वरुण, और यम नाम दिया गया है। हमारे भी परिवार हैं। इन्हें उपग्रह या चंद्रमा कहते हैं। हम सभी अपने उपग्रहों को साथ लिए सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते रहते हैं। हम भी अपने उपग्रहों को साथ लिए सूर्य के चक्कर लगाते रहते हैं और अपनी-अपनी धुरी पर भी घूमते रहते हैं। जब हम अपनी कीली (धुरी) पर चक्कर लगाते हैं तो इसमें लगने वाला समय दिन कहलाता है, जितनी देर में हम सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हैं वह वर्ष कहलाता है। हाँ, यह बात जरूर है कि हरेक का अपनी कीली पर और सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने का समय अलग-अलग है। अन्तरिक्ष में कोई भी ऐसी चीज नहीं है जो अपनी जगह स्थिर हो। यहाँ तक कि हमारा सूर्य भी अपनी धुरी पर घूमते हुए आकाश गंगा की नाभि के चारों ओर चक्कर लगाता है।

सौर परिवार में क्रम के आधार पर बुध और शुक्र के बाद मेरा तीसरा स्थान है परन्तु आकार की दृष्टि से पाँचवाँ स्थान है। बृहस्पति सबसे बड़ा ग्रह है। सूर्य से मेरी दूरी 14.96 करोड़ किलोमीटर है। इस दूरी को खगोलीय इकाई कहते हैं जो अन्तरिक्ष में पाए जाने वाले ग्रहों के बीच की दूरी को नापने के काम आती है। इस दूरी को प्रकाश वर्ष के द्वारा भी निश्चित करते हैं। प्रकाश एक सेकेण्ड में तीन लाख किलोमीटर की दूरी तय करता हुआ एक वर्ष में 9,500 अरब किलोमीटर की दूरी तय कर लेता है।

मेरा आकार नारंगी की तरह है। अतः पूरी तरह गोल न होकर ऊपर से नीचे की ओर कुछ दबा हुआ और बीच में उभार लिए है। इसीलिए उत्तर और दक्षिण के बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा 12,712 किलोमीटर व्यास तथा बीच का उभार वाला व्यास 12,755 किलोमीटर है। मेरे शरीर का कुल क्षेत्रफल 51,01,00,448 वर्ग किलोमीटर है। इसका 70.78 प्रतिशत भाग जल से ढका है, केवल 29.22 प्रतिशत भाग सूखा है। जिस पर तुम लोगों की दुनिया बसी हुई है। मेरे शरीर का घनापन पानी की तुलना में 5.517है तथा शरीर की औसत गर्मी 59 सेल्सियस है। मेरा वजन 6,60,00,00,00,00,00,00,00,00,000 टन है। मेरा शरीर सीधा न होकर सतह पर 23 2/3 झुका हुआ है और सूरज के चारों ओर चक्कर लगाने के अण्डाकार मार्ग पर यह झुकाव 66 1/2 हो जाता है। मेरे झुकाव के कारण ही सब जगह दिन-रात और ऋतुएँ एक सी नहीं होतीं। मैं अपनी धुरी पर 23 घंटा 56 मिनिट और 4 सेकेण्ड में एक बार घूम जाती हूँ। इसी कारण

तुम्हारा दिन 24 घण्टे का माना गया है। सूरज के चारों ओर चक्कर लगाने में मुझे 365, 1/4 दिन लगते हैं। यह संख्या पूर्णांक में न होने के कारण एक वर्ष की अवधि 365 दिन तीन वर्ष तक रहती है, चौथा वर्ष 366 दिन का होता है क्योंकि चौथे वर्ष फरवरी माह 28 दिन का न होकर 29 दिन का होता है।

अपनी मानचित्रावली में मेरे गोल चित्र में कुछ रेखाएँ दिखाई जाती हैं। वे वास्तविक नहीं हैं। स्थान, क्षेत्र और समय की जानकारी के लिए इनको मान लिया गया है। उन्हें अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ कहते हैं। उत्तर से दक्षिण ध्रुवों को मिलाती खड़ी रेखाएँ देशान्तर कहलाती हैं जिनकी कुल संख्या 360 है। जो आड़ी रेखाएँ पूर्व से पश्चिम की ओर खिंची रहती हैं वे अक्षांश कहलाती हैं। इनकी कुल संख्या 90 उत्तर तथा 90 दक्षिण मिलाकर 180 है। इन रेखाओं द्वारा ही तुम लोग अपनी स्थिति और समय आदि को जान पाते हो।

मैं अपने जन्म से लगातार घूमती कैसे रहती हूँ? यह बात बता दूँ। मेरे जैसे प्रत्येक आकाशीय पिण्ड में तीन शक्तियाँ होती हैं। एक आकर्षण शक्ति, दूसरी अपकेन्द्रीय बल और तीसरी जड़त्व का सिद्धान्त। इसमें आकर्षण शक्ति और बाहर जाने की शक्ति (घूमने के कारण) उपकेन्द्रीय बल से हम लोग अपने-अपने स्थान पर टिके हुए हैं और गति जड़त्व के आधार पर निरन्तर बनी हुई हैं। जिस प्रकार क्रिकेट की गेंद फेंकने वाला गेंद को अपनी अँगुलियों से स्पिन (घुमा) कर देता है, उसी प्रकार हमारे में लगातार आरम्भ में घूमने के कारण गति बनी हुई है।

चलते-चलते एक बात और बता दूँ। हम (ग्रह) जिस तारे (सूर्य) के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। उसमें तो प्रकाश और गर्मी होती है परन्तु आकाश में हम दूर से चमकते तो जरूर हैं लेकिन सूर्य की तरह दूसरों को प्रकाशित नहीं कर सकते और हमारा चन्द्रमा (उपग्रह) न चमकता है और न दूसरों को प्रकाशित ही कर पाता है। हमारा चन्द्रमा तो सूरज के प्रकाश से प्रकाशित होकर ही चमक पाता है और इसके प्रकाश को ही परावर्तित कर पाता है।

अब जरा ग्लोब उठाकर देखे। तुम्हें इस पर पूर्व से पश्चिम की खिंची हुई कुछ रेखाएँ दिखाई देंगी। उनमें कर्क रेखा, मकर रेखा, उत्तरी ध्रुव वृत्त एवं दक्षिणी ध्रुव वृत्त विशेष रूप से प्रदर्शित रहते हैं। इन रेखाओं का निर्धारण सूर्य की स्थिति के आधार पर किया गया है। कर्क रेखा उत्तरी गोलार्द्ध में 231/2 अक्षांश पर इसलिए है कि सूर्य की लम्बवत किरणें तिरछी पड़ती हैं। दक्षिणी गोलाई में मकर रेखा भी इसी प्रकार 23 1/2 पर निर्धारित है, जहाँ तक दिन और रात की लम्बाई 24 घण्टे तक हो जाती है। इससे आगे दिन की लम्बाई बढ़ती जाती है, जो ध्रुवों पर जाकर छः महीने के दिन अथवा छः महीने की रात के रूप में होती है।

स्नेहलता

मैं सरोवर हूँ

गुजरे जमाने की सारी बातें मेरे मन में ऐसे ताजा हैं जैसे कल की ही बात हो। यह यादों की ऐसी तस्वीर है जिस पर समय की धूल पड़ने के बावजूद भी वह धुँधली नहीं पड़ी है। अपने जन्म की मैं सिर्फ कल्पना ही कर सकता हूँ मगर इसमें सच्चाई कितनी है यह तो भगवान ही जाने। मेरा अनुमान है कि शायद कुछ ऐसा हुआ होगा कि पास बसे गाँव में जब लोगों को घर बनाने के लिए मिट्टी की जरूरत पड़ी होगी तब उन्होंने मुझसे ही मिट्टी ली होगी क्योंकि मैं ही तो उनका पड़ोसी था। मिट्‌टी निकल जाने से मैं निश्चय ही खेत में गड्ढा बना होऊँगा और जब बरसात हुई होगी तब मेरा खाली शरीर पानी से सराबोर हो गया होगा और लोगों ने मुझे सरोवर कहा होगा।

जन्म चाहे जैसे हुआ हो पर जब से मैंने होश सँभाला मुझे अपने चारों ओर हरियाली नजर आई। मेरे कितने ही साथी थे जिनसे मैं रोज मिलता था, बातें करता था, खुश होता था। बच्चपन की यादें मुझे आज भी खुशी से भर देती हैं। मेरे दाँए किनारे पर एक बरगद का पेड़ था, जिसकी छाँव में अक्सर बटोही आकर बैठते थे। उसकी हरी-भरी शाखाओं में तोते, चिड़ियों, कबूतरों, कौओं, बगुलों आदि का बसेरा था। सुबह शाम उनकी चहचहाहट से पूरा वातावरण गूँज उठता था। उसकी उलझी लटों को पकड़कर बच्चे झूला झूलते, उसके चारों ओर लुका-छुपी खेलते थे। थक जाते तो मेरे पास आ जाते थे। कभी-कभी तो मुझमें डुबकी भी लगा लेते थे। छपाक की आवाज के साथ उनकी किलकारी मेरे मन में हलचल मचा देती थी। किनारे पर बैठे उनके साथी हमेशा इस बात का ध्यान रखते थे कि कहीं मेरे कारण उनका अहित न हो। मगर मेरी कोशिश रहती थी कि मुझसे किसी का कोई नुकसान न हो। मेरी मिट्‌टी पानी को बहाव के साथ मेरे ऊँचे-नीचे गड्ढे भी भरती रहती थी, मेरा तल साफ-सुथरा एक जैसा था।

बरगद से कुछ दूर हटकर पाकड़ के दो-तीन पेड़ थे। गर्मी के दिनों में जब फसल पक जाती थी तो किसान पाकड़ के नीचे ही लागर उसे इकट्ठा करते थे। वहीं गेहूँ की बालियों पर दाएँ चलाई जाती थीं जिससे गेहूँ और भूसा अलग हो सके। गेहूँ की फसल पर चलते हुए बैलों की घंटियाँ जब बजती थीं वह किसी मधुर संगीत जैसी ही लगती थीं। किनारे पर बैठे हुए किसान और उनकी आँखों में सजते इन्द्रधनुषी सपनों को देखकर मेरा भी मन हर्ष से विभोर हो उठता था। मुझे पता था कि इसी फसल के सहारे सुमेरू को अपनी धनिया का ब्याह करना है और हरखू को अपने पिताजी की आँखों का इलाज कराना है। मुझे पता था कि जब ब्याह होगा तो सब औरतें गीत गाते हुए मेरे पास भी तो आएँगी।

यूँ तो बच्चों, बूढ़ों आदमी औरतों की टोलियाँ अक्सर मेरे पास आती रहती थीं/मेरे किनारे बैठकर बतियाती रहती थीं पर उनमें से कुछ चेहरे मुझे हमेशा याद रहते थे। वह साँवला सा दुबला-पतला वीरन किसी से कुछ नहीं कहता था, बस चुपचाप मुझे निहारता रहता था। नन्हीं छुटकी पायल पहने छुन-छुन करती, भागती-फिरती थी और हर समय कुछ गुनगुनाती रहती थी। जगन की बाँसुरी की धुन पर श्यामल और गुंजा गाना गाते थे-'वंशीवाले ने घेर लई अकेली पनिया गई' और छोटी-छोटी गैंया, छोटे-छोटे ग्वाल छोटो सो मेरो मदन गोपाल।

मुझे लगता था ऐसा ही कोई घाट रहा होगा जिसके किनारे कृष्ण जी बाँसुरी बजाते होंगे। मैंने नदी नहीं देखी बस कल्पना ही करता था कि यमुना के किनारे कदंब की छाँव में कृष्ण अपनी गायों के साथ बाँसुरी बजाते थे। वैसे मुझे श्यामल और गुंजा की जोड़ी राधा-कृष्ण जैसी ही लगती थी। मेरे किनारे लगे खजूर के पेड़ पर बया ने घोंसला बनाया था। उसे देखकर बच्चे तो क्या बड़े भी हैरान हो जाते थे। बया मेरी सहेली थी। उसने मेरे सामने ही घोंसला बनाया था। मुझसे थोड़ी दूर पर पटेर लगी थी। बया ने पटेर की पत्तियों को अपनी चोंच से चीखकर नन्हें-नन्हें तिनकों से किसी अनुपम कलाकृति जैसी रचना की थी। बया का घोंसला भूरे रंग के तिनकों से बना दूर से शिव के कमंडल जैसा पेड़ पर टँगा दिखता था। उसने अपने घोंसले में दोनों बच्चों के लिए दो अलग-अलग हिस्से बनाए थे। अपने घुसने और निकलने के लिए भी दो सुन्दर दरवाजे बनाए थे। मुझे बया बहुत अच्छी लगती थी। मैं जब भी उसकी तारीफ करता बस वह यही कहती 'अरे घोंसला बनाना कोई मुश्किल काम नहीं है। हाँ, लगन होनी चाहिए। मैंने भी तो तुमसे बहुत कुछ सीखा है। तुम कितने शांत, सौम्य और प्रफुल्लित रहते हो। जिन्दगी से भरपूर।'

किनारे लगे खजूर से पत्ते तोड़कर गर्मी के दिनों में चमेली, गुलनार, शकीला, सलौनी, पंखे बनाती थीं। खजूर के पत्तों से पंखे बनाना तब आम बात थी। सब लड़कियाँ पंखे और डलिया बनाना सीखती थीं। खजूर के पत्तों को रंग-बिरंगा रंग कर एक-दूसरे में फँसाकर सुन्दर पंखे तैयार करती थीं। उनकी बातों में दोपहर कब बीत जाती थी, पता नहीं चलता था। गाँव भर में लोग हर शाम मेरे किनारे इकट्ठा होते थे। उन्होंने किनारे पर मेरी मिट्टी से एक ऊँचा सा गमला जैसा बनाकर उसमें तुलसी का पौधा लगाया था। वे उसे तुलसी चौरा कहते थे। सब मिलकर शाम को तुलसी चौरे पर दिया जलाते, आरती करते, भजन-कीर्तन भी करते थे। लोग खुश थे, मैं भी खुश था। बड़े-बूढ़े लोग हमेशा मेरी तारीफ करते थे। बच्चों से कहते सरोवर, ताल, पोखर जिस गाँव में हरे-भरे रहते हैं वह गाँव भी हरा-भरा रहता है और उस पर लक्ष्मी की कृपा रहती है। सरोवर में वरुण देवता का वास होता है/जल ही जीवन है। जल के अन्दर अनेक जीवों का बसेरा होता है। मेरे अन्दर भी मेरे कई साथी मेंढक, मछली, कछुए, घोंघे, सीप और अनेक वनस्पतियाँ और जल जीव घर बनाए हुए थे। मेरा छोटा परिवार एक कुटुम्ब ही तो था। कुछ ही दूर पर एक बड़ा आम का बगीचा था। उसमें अक्सर बच्चों की रेल-पेल मची रहती थी।

उन दिनों सारस के जोड़े भी अक्सर मेरे पास आ जाते थे। बगल में खेत में जब मोर पंख फैलाकर नाचता था तब सारी दुनिया झूमने लगती थी। मुझे लगता जैसे मैं यहाँ का बेताज बादशाह हूँ, सारी गतिविधियों का केन्द्र-बिन्दु।

मैं सबकी मदद भी कर दिया करता था। रम्मू की भिंडियों को जब पानी की जरूरत होती थी तब

वह एक नन्हीं सी नाली बनाकर अपने पड़ोस के खेत को मुझसे जोड़ देता था और एक बड़े से पल्ले के दोनों सिरों पर रस्सी बाँधकर अपने भाई की मदद से मुझसे पानी उडेल लेता था। बेचारा मुझे हमेशा जलदेवता कहता था। मेरी थोड़ी सी मदद के कारण वह हमेशा मेरा एहसान मानता था।

महेन्द्र बड़ा होशियार लड़का था। एक बार उसने मुझसे मिट्टी निकालकर अपने घर की दीवार बनाई थी। वह हमेशा पढ़ता रहता था। एक बार वह बहुत दिनों तक दिखाई नहीं दिया। जब वह लौटकर गाँव आया तब मुझसे मिलने आया। उसने मेरे किनारे खड़े होकर अपने साथियों से कहा-'जब मैं पहली बार हवाई जहाज में बैठा, मुझे याद आया, कैसे मैंने इस तालाब से मिट्टी निकालकर अपनी दीवार बनाई थी। समय गुजरा रहा था, मैं खुश था।'

एक दिन मैंने देखा कि मुझसे कुछ कदम के फासले पर जो सड़क गाँव के अन्दर जाती थी, उस पर ऊँचे-ऊँचे खम्बे लगाए गए। कुछ दिनों बाद मेरे आश्चर्य की सीमा न रही/मैंने देखा उन खम्बों से रात में भी ऐसा उजाला हुआ कि दिन और रात का फर्क मिट गया। पहले-पहले तो मैं बहुत खुश हुआ पर जल्द ही मैं इससे परेशान हो गया क्योंकि मुझे और मेरे साथियों मछली, कछुओं, सीप, घोंघों को रात के शान्त वातावरण में सोने की आदत थी पर अब वह चकाचौंध करने वाली रोशनी हमें सोने नहीं देती थी। मेरे साथी दुखी थे और मैं परेशान। अब मुझे यह इंसानों की बढ़ती दखलअंदाजी बेजार करने लगी थी।

कुछ लोगों ने मेरे साथियों का शिकार करना शुरू कर दिया था। एक दो लोगों ने मुझमें सिंघाड़े की बेल फैला दी। मैंने सोचा चलो ठीक है। लोगों को हमेशा एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए पर मैंने देखा वही लोग सिंघाड़ों को लेकर आपस में लड़ने लगे थे, एक-दूसरे को जान से मारने की धमकी देने लगे थे। मेरी उपस्थिति सुख का कारण थी पर अब वह दु:ख का कारण बनती जा रही थी।

समय बीत चला। मैंने परिवर्तन की बयार को महसूस किया था। अब लोग पहले की तरह मेरे पास नहीं आते थे। लोगों ने घरों में ही हैन्डपम्प लगवा लिए थे। वह उसी का पानी उपयोग करते थे। उन्हें अब मेरा पानी पीने लायक नहीं लगता था। कुछ दिनों से मैंने महसूस किया था कि गाँव की नालियों का गन्दा पानी भी बहकर मुझमें मिलने लगा था। मेरे संगी साथी मुझसे इसकी शिकायत करने लगे थे। बेचारी मछलियों को साँस लेना मुश्किल होने लगा था। गन्दे पानी की वजह से मेरे शरीर पर काई जमने लगी थी। कभी मुझे अपनी सुन्दर काया पर गर्व था पर फैली काई मुझे खुजली की बीमारी-सा एहसास कराती थी।

कई लोगों ने मुझमें मलबा डालना शुरू कर दिया था। मेरी जो तली कभी साफ-सुन्दर रहती थी अब कीचड़ से पटने लगी। मेरा शरीर सिमटने लगा। अब वह घटकर कुछ ही कदमों तक बचा है। मैंने तो यहाँ तक सुना कि कुछ लोग कह रहे थे कि अब इस तालाब में बचा ही क्या है? क्यों न हम इसे कुछ मिट्टी डालकर पाट दें और इस पर कब्जा कर लें।

मेरी फरियाद सुनने वाला कोई नहीं। मैंने कुछ नहीं चाहा था। मैंने कुछ नहीं माँगा था। मैंने सिर्फ दिया था, एक खुशनुमा वातावरण। मैं ईश्वर की सत्ता का मात्र रक्षक था पर मनुष्य ने अपने बढ़ते कदमों से मुझे मिटाने का फैसला कर लिया। अब मैं सिर्फ फरियादी हूँ। हो सके तो आप लोग भी मेरे अस्तित्व को बचाने की प्रार्थना को जनता तक पहुँचाने में मेरा सहयोग कीजिए। मैं आपका सदैव आभारी रहूँगा।

__सम्पर्क :__ लखनऊ (उ.प्र.)
मो. 9450639976

कृष्णलता यादव

मैं बादल भैया

श्वेत, श्याम, धूसर कभी, कत्थई भी हो जाता हूँ।

प्यारे बच्चो, बतलाओ – किस नाम से जाना जाता हूँ?

लो! उत्तर आया – गिरगिट। गलत। फिर कोशिश कीजिए। नहीं बता पाए न? चलो मैं ही बताता हूँ। 'बादल।' वैसे तो मेरे कई नाम हैं जैसे- मेघ, जलद, घन, सारंग, जलधर, नीरद, वारिद, पयोद, पयोधर, अम्बुद, तोयद, तोयधर, अभ्र, प्रजन्य आदि किन्तु सबसे प्रचलित नाम है बादल। हाँ, कवि लोग चाव-भाव से 'बदरा' भी कहते हैं।

अब सबसे पहले अपने जन्म की प्रक्रिया बताता हूँ। वायुमण्डल में उपस्थित पानी की बूँदें और बर्फ के छोटे-छोटे टुकड़े मिलकर मेरा निर्माण करते हैं। कभी-कभी मैं मोटी परतों में आकाश में छा जाता हूँ। तब ऊर्जा का सबसे बड़ा स्रोत, शक्तिहीन-सा दिखाई देता हूँ। जब कभी मेरे और हवा के बीच घर्षण होता है तो कुछ जलकण घनात्मक आवेश से, कुछ ऋणात्मक आवेश से आवेशित होकर अलग हो जाते हैं। जब ये आपस में टकराते हैं तो अपार चमक पैदा होती है, जिसे तड़ित कहते हैं, साथ ही जोरदार गर्जन होती है। मेरी गर्जना संकेत देती है कि मैं छा रहा हूँ, बरसना या न बरसना – मेरी मर्जी। शायद इसीलिए कहावत बनी कि गरजते हैं सो बरसते नहीं। मेरी अगुवाई में बच्चे कागज़ की किश्ती बनाते हैं, किसान हल-बैल तैयार करते हैं। मेंढकों की टर्र-टर्र तथा मोरों की पिउ-पिउ वातावरण को गुँजा देती हैं।

मुझे कई प्रकार से बरसना पसंद है – कभी बूँदाबाँदी, कभी मूसलाधार तो कभी झड़ी रूप में। झड़ी समझते हो न? यानी बिना रुके धीरे-धीरे बरसना। जब बूँदें, मेरी बेटियाँ, एक साथ मुझ से विदा लेती हैं तब मेरा रोम-रोम उदास हो जाता है। उस समय मेरा आशीर्वचन होता है –

जहाँ तलक भी जाना हो, निज पहचान बनाना।

बाबुल का इतना सा कहना, परहित में मिट जाना।

मज़े की एक बात और बताता हूँ, रहने को घर नहीं, सारा जहाँ मेरा। मैं अनेक रंग-रूप धारण करता रहता हूँ। अजी! हाथ कंगन को आरसी क्या? बरसाती मौसम में आकाश को निहारिए और पल-पल बदलते मेरे रूप आकारों को नोट कीजिए। आप पाएँगे, कभी हाथियों का झुण्ड, कभी उड़ते हुए पंछियों का समूह तो कभी पानी का विशाल भण्डार नजर आता हूँ। बहुत अच्छा लगता है जब स्कूली बच्चे मेरा रूप धरकर अभिनय करते हुए गाते हैं –

बादल हूँ मैं बादल भैया। नाच रहा हूँ ता-ता थैया।

गरमी लगी तो बाहर आओ। मल-मल नहाओ ठंडक पाओ।।

मुझे अपना कपासी रंग बहुत भाता है। उस काल ऐसा लगता है जैसे तन-मन से एकदम निर्मल हो गया हूँ। अपने स्वभाव के अनुसार लेन-देन की रीत निभाने में अव्वल हूँ। नदी-ताल-सागर से बहुत लेता हूँ, लिए हुए का शोधन कर लौटाना कभी नहीं भूलता। वे भी खुश, मैं भी खुश। हमारी खुशी में सारी सृष्टि खुश। जिस प्रकार फल देने वाले वृक्ष झुक जाते हैं, उसी प्रकार जलकणों से लदा होने पर मैं धरती के बहुत पास आ जाता हूँ तब लोगों के कंठों से गीत के बोल फूट पड़ते हैं-

झुक-झुक जाए बादली, बरसाएगी नीर।

शुष्क धरा के भाग की, मिट जाएगी पीर।।

तुम सोचते हो, मेरे मज़े हैं, आवारा की तरह इधर से उधर घूमता रहता हूँ। लेकिन ऐसा नहीं है। मुझ पर अनेक जिम्मेदारियाँ हैं। सबसे बड़ी जिम्मेदारी है- समय पर बरसना ताकि सूखे बीज अंकुरित होकर प्राणियों की उदरपूर्ति के साधन बन सकें। भली प्रकार जानता हूँ कि यदि मैं अपने दायित्व की अनदेखी करूँगा, तो धरती बंजर हो जाएगी। प्राणी त्राहिमाम कर उठेंगे। न पेड़ होंगे, न पौधे, न फूल न पात। सब जगह सूखेपन का राज। सबके मंगल की कामना करता हुआ गुनगुनाया करता हूँ-

बादल मुझे बनाया राम,

जीव-जगत के आऊँ काम।

वक्त-ज़रूरत जल बरसाऊँ,

क्यों सूखा, क्यों प्लावन लाऊँ।

स्वीकार करता हूँ कि मैं बहुत चंचल हूँ। अधिक ऊँचाई पर स्थित इमारतों में ताक-झाँक कर आता हूँ। मुझे अपने इतना पास आया देखकर बाल-गोपाल हिप-हिप हुर्रे करते हुए मुझे छूने-पकड़ने दौड़ते हैं। उस समय मन करता है, उनके अंग-संग बसकर उनके साथ आँख-मिचौली खेलूँ। काश! ऐसा हो पाता।

औरों की भाँति मैं भी गलतियों का पुतला हूँ। कभी-कभी वहाँ बरस पड़ता हूँ, जहाँ ज़रूरत नहीं होती या फिर इतना बरसता हूँ कि बाढ़ आ जाती है और जान-माल की बेशुमार हानि होती है। लोग मुझे बद्दुआएँ देते हैं। तब मैं बहुत पछताता हूँ। कभी-कभी हवा के बहकावे में कहीं से कहीं पहुँचता हूँ और छलिया की उपाधि पाता हूँ। सच यह भी कि मेरे पास जितना होता है, सब अर्पण कर देता हूँ। मेरे स्वभाव के विषय में कवि ने लिखा है-

खो कर अपनी अस्मिता, अपनी निज पहचान।

बादल तू देता रहा, धरती को मुस्कान।।

प्यारे बच्चो! यदि तुम्हें मुझसे तनिक भी प्यार है तो अधिक से अधिक पेड़-पौधे लगाना। पेड़-पौधों से ढके क्षेत्र मुझे बहुत प्रिय हैं। उनके पत्तों से वाष्पित हुआ पानी मुझे विस्तार देता है। मेरा विस्तार, सृष्टि का आधार। बनना-सिमटना-रीतना-पुनः बनना, यही है मेरा जीवन-चक्र। ऐसा सुगढ़ जीवन देने के लिए प्रकृति का बारम्बार शुक्रिया।

सम्पर्क : *गुरुग्राम (हरियाणा)*

मो. 9811642789

तुरशन पाल पाठक

मैं हूँ पर्यावरण

बगीचे में दैत्याकार पर्यावरण लेटा कराह रहा था।

'मैं निर्दोष हूँ। मुझ पर झूठा आरोप लगाया गया है। मैंने किसी की हत्या नहीं की है और न ही किसी को सताया है। सच्चाई को जानने की कोई भी कोशिश नहीं करता। जो आता है, मुझे ही भला-बुरा कहता है और सारा दोष मुझ पर ही मढ़ देता है। अब मैं क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? किसे सुनाऊँ अपनी दुःख भरी कहानी? है कोई सुनने वाला?' तभी उस ओर से अतुल, अरुण और अनुज खिलखिलाते, हँसते-खेलते, रास्ते के फूलों, पेड़-पौधों को तोड़ते, नाली में पत्थर फेंकते और धूल उड़ाते मौज-मस्ती करते हुए स्कूल से चले आ रहे थे। जब उन्होंने यह बड़बड़ाहट सुनी तो वे चौंककर एकदम रुक गए और असमंजस में पड़कर आपस में कानाफूसी करने लगे। तभी साहस बटोर कर अतुल ने पूछा – 'भैया, तुम कौन हो? किसने सताया है तुम्हें? क्या हम तुम्हारी कुछ मदद कर सकते हैं?'

यह सुनते ही बड़बड़ाहट बंद हो गई। कुछ क्षण बाद वहीं आवाज फिर सुनाई दी-'बच्चों, यदि तुम मेरा दुःख सुनना चाहते हो तो पहले तुम्हें आराम से बैठना होगा। लेकिन मैं जानता हूँ, तुम स्कूल से आ रहे हो, तुम्हें भूख भी लग रही होगी और घर पर तुम्हारे माता-पिता तुम्हारा इंतजार भी कर रहे होंगे, इसलिए मैं अपनी पूरी कहानी तुम्हें फिर कभी सुनाऊँगा।'

इस मीठी वाणी को सुनकर बच्चे, खुश हुए और यह कहकर बैठ गए कि 'आप अपना दुःख सुनाइए। घर हम आज थोड़ी देर से पहुँच जाएँगे। माता-पिता को भी आपकी कहानी सुनाएँगे, फिर हमें घर पर कोई कुछ नहीं कहेगा। अच्छा, अब आप जल्दी बताएँ, कौन हैं आप?'

'तो बच्चों, सुनो। मेरा नाम पर्यावरण है।'

अरुण ने कहा, 'पर्यावरण! वह क्या होता है भैया?'

इस पर पर्यावरण ने कहा-'यही तो बात है। दिन-रात सभी मुझे उपयोग में लाते हैं, मेरे बिना जी नहीं सकते, लेकिन मुझे न समझते हैं, और न ही जानते हैं। मेरे साथ छेड़खानी करते हैं, मुझे दूषित करते हैं। अपनी करनी से अपने आप मरते हैं और दोष बेकार में मुझ को देते हैं।

इस धरती माता पर जो कुछ भी प्राकृतिक तौर पर दिखाई देता है-हवा, पानी, पेड़-पौधे, जीव-जंतु, पशु-पक्षी, पहाड़, नदियाँ, समुद्र और आकाश-यह सभी कुछ मैं ही तो हूँ। मेरी रचना इस तरह की गई है कि धरती पर किसी को कोई तकलीफ न हो और न कोई किसी पर पूरी तरह अधिकार जमा पाए,

न कोई जरूरत से ज्यादा बढ़े और न इतना कम हो जाए कि उसका नामोनिशान ही मिट जाए। किसी एक के कम या अधिक हो जाने पर मुझे और मेरे उपयोग करने वालों को कष्ट होता है। अत: मैं पुन: उसकी पूर्ति कर तालमेल बैठाने का प्रयास करता हूँ ताकि किसी को कोई हानि न हो। लेकिन ऐसा हमेशा नहीं हो पाता। अत: लोगों का जीवन कठिन हो जाता है।'

ये बातें अनुज की समझ में नहीं आईं तो उसने सवाल पूछा, 'यह तो ठीक है कि आप पर्यावरण हैं, लेकिन खुलासा करके और ज्यादा समझाकर हमें यह तो बताओ कि आप हम सबके लिए ऐसा क्या करते हैं जो आपके बिना हमारा जीवन जीना कठिन हो जाता है।'

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए पर्यावरण ने कहा, 'आप सबकी सुख-सुविधा के लिए धरती, आकाश और पाताल, सभी जगह समस्त प्राकृतिक संसाधनों तथा वस्तुओं को स्वच्छ और संतुलित बनाए रखना मेरा काम है।'

जिस परिवेश में आप और अन्य जीवधारी रहते हैं, उसके आसपास की सभी जैविक और भौतिक व्यवस्थाएँ मिलकर ही मैं (पर्यावरण) बनता हूँ।

हालाँकि जीवों का निवास धरती से लगभग दस किलोमीटर ऊपर और दस किलोमीटर नीचे तक होता है, लेकिन तब भी धरती से ऊपर लगभग दो किलोमीटर और धरती के भीतर दो किलोमीटर अर्थात् चार किलोमीटर तक ही जीवधारी पाए जाते हैं। इस क्षेत्र की परिस्थितियाँ ही उनके लिए उनका पर्यावरण हैं।

अब आप सभी जानते हैं कि हवा, पानी, पेड़-पौधे, जीव-जंतु, नदियाँ, पहाड़ मैदान, रेगिस्तान, समुद्र तथा आकाश आदि मेरे ही अंग हैं जो आप सभी के लिए आवश्यक हैं। आप यह भी जानते हैं कि शुद्ध हवा के बिना दम घुटने लगता है और दम घुटने से मौत भी हो जाती है। पानी के बिना भी तुम जी नहीं सकते। पेड़-पौधे न हों तो तुम्हारे खाने के लिए अन्न, फल और अन्य जरूरी चीजें कहाँ से आएँगी? इसी तरह गाय, भैंस, बकरी से दूध मिलता है, कपास के पौधे से कपड़ा रेशम के कीड़े से रेशम, शहद की मक्खी से मीठा शहद मिलता है। इतना ही नहीं, तुम्हारे आस-पास तुम्हारी जरूरत की जितनी भी चीजें हैं वे सब पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं अथवा धरती के ऊपर या भीतर पाए जाने वाले खनिज पदार्थों आदि की ही बनी होती हैं, जिन्हें सब उपयोग में लाते हैं खाते-पीते हैं और आराम से जीते हैं।

अब मैं तुम्हें एक बात बताता हूँ। मान लो कोई एक ही चीज लगातार बढ़ती रहे तो वह चीज सबके लिए अच्छी होने पर भी घातक हो जाएगी। जैसे पानी तुम्हारे लिए जरूरी है, लेकिन सब जगह पानी ही पानी हो जाए तो बाढ़ आ जाएगी। तुम कहाँ रहोगे? सब कुछ पानी में डूब कर नष्ट हो जाएगा। ठीक इसी तरह, पानी कम होने लगे तो धीरे-धीरे सूखा पड़ने लगेगा। सभी पेड़-पौधे तथा फसलें नष्ट हो जाएँगे। चारों ओर उजाड़, वीरान और रेगिस्तान बन जाएगा। सब जीव-जंतु प्यास से तड़प-तड़प कर मर जाएँगे। इसका मतलब यह हुआ कि पानी जरूरी तो है, लेकिन उसकी मात्रा संतुलित होनी चाहिए। यही बात अन्य सभी प्राकृतिक वस्तुओं पर भी लागू होती है। पेड़-पौधे आवश्यक हैं, लेकिन सब जगह पेड़-पौधे ही हो जाएँ तो धरती जंगल बन जाएगी। जंगल में रहना कठिन होगा। इसी तरह यदि हवा खूब चलती रहे तो आँधी-तूफान से सब कुछ नष्ट हो जाएगा।

तुम देखते होगे कि बरसात में धरती पर चारों ओर घास उगने लगती है। यह घास कहीं पूरी धरती पर ही न फैल जाए इसलिए खरगोश, भेड़, बकरी, गाय, भैंस आदि ऐसे जीव हैं जो धास चरते रहते हैं।

ठीक इसी तरह शाकाहारी पशुओं को खाने वाले माँसाहारी पशु शेर, चीते, भेड़िए आदि हैं, जो उन्हें खाते हैं तथा जंगल में उनकी संख्या ज्यादा नहीं होने देते। मनुष्य शाकाहारी एवं माँसाहारी दोनों में आता है। वह कभी-कभी शेरों को भी मार डालता है। वहीं साग-सब्जी, फल, दूध, माँस-मछली, अण्डा सभी कुछ खाकर उन्हें ज्यादा बढ़ने नहीं देता।

मनुष्य अन्य पशुओं की तुलना में पैनी बुद्धि रखता है, इसलिए अपने आराम के लिए नित नई चीजें खोजता और बनाता रहता है। पहले बीमारी और महामारी से हजारों-लाखों मनुष्य मर जाते थे। अब बीमारियों का इलाज खोजकर मनुष्य ने अपना जीवन काल बढ़ा लिया है। मृत्यु-दर घट गई है और जीवन-सीमा बढ़ गई है। इसलिए आबादी भी बड़ी तेजी से बढ़ रही है।

लगभग बीस लाख वर्ष पहले मनुष्य के पृथ्वी पर अस्तित्व में आने के बाद से सन् 1830 ई. तक संसार की आबादी केवल एक अरब थी, 1930 तक यानी सौ वर्षों की अवधि में यह आबादी दुगुनी हो गई। लेकिन अगले केवल तीस वर्षों अर्थात् 1960 तक यह तीन अरब हो गई। इसके बाद मात्र पंद्रह वर्षों में यानी 1975 तक दुनिया की जनसंख्या चार अरब हो गई। 2022 में यह आठ अरब हो गई। अनुमान है सन् 2030 तक यह आबादी लगभग दस अरब हो जाएगी। यह जन्म-दर में अति वृद्धि तथा मृत्यु-दर में कमी के कारण हो रहा है।

इस बढ़ती आबादी के परिणामस्वरूप मनुष्य की आवश्यकताएँ प्रतिदिन बढ़ रही हैं। माँग की पूर्ति के लिए मनुष्य हवा, पानी और वातावरण को स्वच्छ रखने वाले वनों, वृक्षों को अंधाधुंध काट कर मेरे अन्दर गड़बड़ पैदा कर रहा है। मकान बनाकर खेती की जमीन घटा रहा है। वर्तमान प्राकृतिक साधन बढ़ती माँगों को पूरा करने में असमर्थ हैं। इसके परिणामस्वरूप मानव अपने जीवन हेतु अनुकूल पर्यावरण के लिए अपने ही कारनामों से प्रतिदिन कठिनाइयों को बढ़ा रहा है। लेकिन लोग अपनी गलतियों को न देख कर हमेशा दोष मुझ को ही देते रहते हैं। यही मेरी व्यथा है।

मेरे अध्ययन में लगे वैज्ञानिक अब ऐसा अनुमान लगाने लगे हैं कि यदि सब कुछ ऐसे ही चलता रहा तो अगले 20 वर्षों तक कृषि भूमि का एक-तिहाई भाग नष्ट हो सकता है और इस सदी के अंत तक पैदावार देने वाले लगभग आधे वन समाप्त हो सकते हैं।'

यह बस सुनकर अतुल, अरुण और अनुज तीनों एक साथ बोल पड़े, 'तब तो पर्यावरण भैया, धीरे-धीरे सभी कुछ खत्म हो जाएगा।' अतुल ने फिर पूछा, 'पर्यावरण बिगाड़ देने से क्या कोई चीज बिल्कुल समाप्त भी हो गई है। अगर ऐसा हुआ हो तो हमें भी बताओ।'

बच्चों की जिज्ञासा देखकर पर्यावरण ने आगे कहा 'बच्चों। एक नहीं- अनेक प्राणी और वनस्पतियाँ मुझे दूषित कर देने से हुए खराब वातावरण के कारण बिल्कुल समाप्त हो गई हैं, और कुछ समाप्त होने की हालत में आ गई हैं। '

कबूतर जाति का 'डोडो' पक्षी मॉरीशस में होता था। यह अंधाधुंध शिकार के कारण समाप्त हो गया है। यह पक्षी कैलेवेरिया नामक वृक्ष के साबुत बीज खाता था। इनके बीजों का कड़ा छिलका डोडो के पेट में पचकर मुलायम हो जाता था। डोडो के मल के साथ बीज बाहर आकर आसानी से उग आते थे। अब डोडो के समाप्त हो जाने से कैलेवेरिया के नए वृक्ष उगने बंद हो गए हैं। जो वृक्ष शेष हैं वे भी धीरे-धीरे समाप्त हो जाएँगे।

एक जीव के नष्ट होने से कहानी उस जीव की समाप्ति पर ही खत्म नहीं होती है बल्कि इससे उस वर्ग की पूरी खाद्य शृंखला पर असर पड़ता है। उदाहरण के तौर पर टिड्डियों को मेंढक खाते हैं। मेंढकों को साँप खाते हैं और साँपों को शिकारी पक्षी। अब यदि शिकारी पक्षियों को मार दिया जाए तो धरती पर चारों ओर साँप ही साँप हो जाएँगे। और अगर साँप मेंढकों को खा जाएँगे तो टिड्डियों की संख्या में बढ़ोतरी हो जाएगी। टिड्डियाँ तब हमारी फसलों को चट कर जाएँगी। जब फसलें ही नहीं रहेंगी तो निश्चय ही मनुष्य भूखों मरने लगेगा।'

यह सुनकर अनुज ने कहा, 'तब तो हमें पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं की रक्षा करनी चाहिए पर्यावरण भैया।'

'हाँ अनुज, तुम ठीक कहते हो। पूरी मानव जाति को मिलकर मेरी रक्षा करनी ही चाहिए।'

भारतीय वन्य-जीवों की लगभग दो सौ जातियाँ नष्ट हो चुकी हैं। और ऐसा अनुमान है कि लगभग दो सौ पचास जातियाँ जल्दी ही नष्ट होने की स्थिति में हैं। खत्म होने वाली जातियों के नाम जिस पुस्तक में दर्ज होते हैं वह 'लाल किताब' कहलाती है। भारतीय लाल किताब के अनुसार बाघ, बबर शेर, तेंदुआ, भेड़िया, रीछ, जंगली गधा, गोडावण, कस्तूरी मृग, मोर, चिंकारा, बारहसिंगा, जंगली भैंसा, घड़ियाल, मगर, अजगर आदि लगभग साठ जातियाँ नष्ट होने के कगार पर हैं।

भारत में 19वीं सदी के प्रारंभ में चालीस हजार बाघ थे जो घटकर 1972 में केवल 1827 रह गए थे। इन्हें बचाना जरूरी था। अत: 1972 से बाघों को बचाने के लिए 'प्रोजेक्ट टाइगर' योजना बनी। यह योजना बराबर अपना कार्य कर रही है। इससे बाघों की संख्या में वृद्धि हो रही है। लेकिन ऐसी योजनाएँ अन्य जीवों के लिए भी जरूरी है। बाघों के संरक्षण के लिए देश में अनेक प्रोजेक्ट टाइगर वन क्षेत्र हैं। सुन्दरवन (पश्चिमी बंगाल), मनास (असम), सरिस्का एवं रणथंभौर (राजस्थान), पेरियाद (केरल), कान्हा (मध्यप्रदेश), कार्बेट (उत्तरप्रदेश), और सिमिलीपाल (उड़ीसा) बाघ प्रयोजना के प्रमुख संरक्षण वन क्षेत्र हैं।

यह जानकर अतुल ने कहा, 'पर्यावरण भैया, इसका मतलब लुप्त होते जीवों को बचाना हम सबके हित में है। जब जीव जंतुओं के विनाश का सिलसिला टूटेगा तभी तो प्रकृति में संतुलन बन पाएगा। अब हम मेंढकों आदि किसी भी जीव को पत्थरों से नहीं मारेंगे।'

अरुण की समझ में यह नहीं आ रहा था कि आखिर पर्यावरण को मनुष्य ने कैसे बिगाड़ा। मनुष्य तो अपनी जरूरत की चीजों के लिए प्राकृतिक पदार्थों का दोहन करेगा ही। इसमें उसका क्या दोष है। अत: उसने पूछा, 'पर्यावरण भैया, आपने बहुत-सी बातें बताईं पर यह नहीं बताया कि मनुष्य ने पर्यावरण को कहाँ और कैसे बिगाड़ दिया? और मनुष्य इसके लिए क्यों दोषी है?'

पर्यावरण ने अरुण की बात का उत्तर देते हुए कहा, 'धरती पर सुहावने वृक्ष, जीव-जंतु, पक्षी, वन्य-प्राणी, पर्वत, नदियाँ, बहती हवा, फसलें, फल-फूलों से लदी वनस्पतियाँ तथा खनिज पदार्थ आदि सभी मेरे अंग हैं। ये सभी मनुष्य के लिए कुछ-न-कुछ उपयोगी चीजें देते हैं। इन्हीं चीजों के लिए मनुष्य ने स्वार्थवश मेरे अंगों की लूट-खसोट मचा रखी है। इससे पृथ्वी पर प्राकृतिक वस्तुओं की कमी हो रही है। तरह-तरह की बीमारियाँ, शोर-शराबा, तनाव, उजाड़पन, धुआँ-धक्कड़ और गंदगी आदि से जल, थल और आकाश सभी जगह मैं दूषित हो रहा हूँ। लोग दोषी खुद हैं, अपने कर्मों से दु:खी हो रहे हैं और दोष मुझे दे रहे हैं।'

अब वृक्षों को ही देखो। वे कितने उपयोगी हैं। हरियाली, सुन्दर फूल, स्वादिष्ट फल, ठंडी हवा, आँखों की शीतलता तथा सुन्दर दृश्यावली आदि वृक्षों से ही है। वृक्षों की जड़ें धरती के भीतर चारों ओर फैल कर मिट्टी को बाँधे रहती हैं। इससे हवा और वर्षा के पानी से मिट्टी नहीं बहती है। वृक्ष रेगिस्तान को बढ़ने से रोकते हैं। समुद्र से भाप बनकर जो पानी बादलों में उड़ता है वह वृक्षों के सम्पर्क में आकर ठण्डा होकर बरसता है। इसी से खेतों में फसलों, कुओं, तालाबों तथा नदियों को मीठा पानी मिलता है। वृक्ष प्राणियों की साँस से निकली गंदी हवा को स्वयं ले लेते हैं। बदले में साफ प्राण वायु (ऑक्सीजन) हमें देते रहते हैं। इस हवा से प्राणियों का खून साफ होता है और वे स्वस्थ होकर जीते हैं। वृक्षों से ईंधन, इमारती लकड़ी, गोद आदि उपयोगी वस्तुएँ मिलती हैं। इसलिए तुम कह सकते हो कि वृक्षों के बिना मानव तथा अन्य जीवों का जीवन अधूरा है।

अब देखिए, मनुष्य ने वृक्षों के इन्हीं गुणों के कारण इनकी अंधाधुंध कटाई प्रारंभ कर दी है। धरती वीरान होती जा रही है। इसी से रेगिस्तान बढ़ रहे हैं। बेमौसम बरसात हो रही है। उपजाऊ मिट्‌टी बहकर नदियों में आ रही है। नदियाँ उथली हो रही हैं। वे वर्षा का पूरा पानी अपने में नहीं समा पा रही हैं। पानी चारों ओर फैल जाता है जिससे बाढ़ आ जाती है। जान-माल की हानि हो रही है। वृक्षों के न रहने से बादल बिना बरसे चले जाते हैं। इसी से सूखा पड़ रहा है। मौसम बदल रहे हैं जिससे फसलें ठीक से नहीं हो पा रही हैं। गर्मी बढ़ रही है। इससे यदि पर्वतों पर जमी बर्फ पिघल गई तो समुद्र में इतना पानी बढ़ जाएगा कि उसके किनारे के शहर डूब जाएँगे। बताओ यह सब मनुष्य ने नहीं किया तो फिर किसने किया है। मनुष्य की अंधाधुंध वृक्ष काटने की आदत ने चारों ओर जान और माल की बर्बादी कर दी है। पर दोषी मुझ को ही ठहराया जाता है।'

पर्यावरण की ये सब बातें सुनकर अरुण ने फिर पूछा, 'पर्यावरण भैया, आपका कहना सही है कि पर्यावरण को नष्ट करने तथा उसे प्रदूषित करने का दोषी मनुष्य है। वृक्ष तैयार होने में काफी समय लेते हैं। यदि उन्हें लगाने और पालने-पोसने के बजाय इसी तरह काटते रहे तो आप (पर्यावरण) नित नई आपदाओं में घिरते रहोगे। यदि मनुष्य सुखी रहना चाहता है तो पेड़-पौधों को लगाना और उनकी देखभाल करना उसका कर्तव्य होना चाहिए।'

यह बातचीत चल ही रही थी कि तभी अतुल को साँस लेने में कुछ कठिनाई महसूस हुई। उसने पर्यावरण से पूछा, 'हवा में क्या हो गया है? वह चल तो रही है पर दम घोंटू हो रही है। क्या इसका भी आपसे कोई संबंध है?'

'हाँ अतुल, हवा प्राणियों के जीवन के लिए बहुत आवश्यक है। शुद्ध हवा के बिना कोई भी प्राणी चैन से नहीं जी सकता। मैं यह पहले ही बता चुका हूँ कि हवा को शुद्ध और साफ करने का काम वृक्ष करते हैं। इस कार्य के लिए वृक्ष एक तरह के प्राकृतिक कारखाने हैं। एक तो वृक्षों तथा वनों की कटाई से साफ और गंदी हवा का संतुलन बिगड़ रहा है, दूसरे सैकड़ों कल-कारखाने दिन-रात अपनी चिमनियों से धुआँ उगल कर हवा को गंदा करते रहते हैं। स्कूटरों, मोटर गाड़ियों में पैट्रोल और डीजल के जलने से निकला हुआ धुआँ शहरवासियों की जिन्दगी के लिए समस्या बन गया है। यह सब आखिर अपनी सुख-सुविधा के लिए मनुष्य ही तो करवा रहा है। सिर्फ यही नहीं, आज आदमी इतना आलसी हो गया है कि

सड़ी-गली चीजों को ऐसे ही खुले में छोड़ देता है। हवा को गंदा करने के लिए नालियों में गंदगी डाल देता है। जगह-जगह मल त्याग करता है। बस्तियों, गलियों आदि सभी जगह गंदगी फैला देता है। सड़ता पानी और गंदगी वायु को प्रदूषित करती रहती है। इस प्रदूषित हवा के कारण मनुष्य नाना प्रकार की बीमारियों का शिकार हो रहा है। आज श्वास और फेफड़ों की बीमारियों के रोगियों की संख्या बढ़ रही है। इसका मुख्य कारण हवा का गंदगी से प्रदूषित होना ही है। ये सभी मनुष्य की ही करतूतें हैं।'

इसे सुनकर अतुल ने कहा, 'तब तो सफाई का या साफ-सुथरे रहने का बहुत महत्त्व है। हम हवा गंदी करते हैं और बीमार होने पर दोष आप को देते हैं। हम सभी को चाहिए कि अपने आसपास सफाई रखें और वायु को गंदी होने से बचाएँ।'

यात्रा में प्यास लगने पर अनुज ने जो भी और जैसा भी पानी मिला, पी लिया था। तब से उसका पेट खराब रहने लगा था। उसका स्वास्थ्य सुधर नहीं पा रहा था। अत: उसने पर्यावरण से पूछा, 'क्या हवा की तरह पानी को गंदा करने में भी मनुष्य दोषी है?'

पानी का महत्त्व समझाते हुए पर्यावरण ने कहा, 'हाँ, मनुष्य और मनुष्य निर्मित कल-कारखाने तथा अन्य गंदगियाँ ही तो पानी को प्राणदायी की बजाय गंदा व जानलेवा बना देती हैं। तुम इसे इस तरह भी समझ सकते हो।'

संसार में जितना पानी है उसका लगभग सत्तानवे प्रतिशत समुद्र में है। यह खारा है और पीने योग्य नहीं है। बर्फ के रूप में ध्रुवों तथा पहाड़ों पर दो प्रतिशत पानी है। केवल एक प्रतिशत पानी ही मीठा और पीने के योग्य है। उसका भी एक बड़ा हिस्सा गंदा है। सबको पीने का मीठा पानी नहीं मिलता। कुछ को तो मीलों दूर से पानी लाना पड़ता है। पानी की कमी और प्रदूषण से जीवन में अनेक समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। अत: जल को साफ और कीटाणु रहित रखना जरूरी है।'

पानी की कमी की बात सुनकर अनुज को बड़ा आश्चर्य हुआ। लेकिन उसने मन ही मन निश्चय किया कि वह कभी भी पानी को बर्बाद नहीं करेगा और ध्यान से आगे की बातें सुनने लगा।

पर्यावरण ने आगे कहा, 'बच्चों, हवा के बाद पानी मनुष्य की दूसरी बड़ी आवश्यकता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि मनुष्यों में होने वाली लगभग अस्सी प्रतिशत बीमारियाँ गंदे पानी के उपयोग से होती हैं। गंदे पानी में रोगों के रोगाणु आसानी से पनपते हैं और रोग फैलाते हैं। पीने के लिए पानी की समस्या एक महत्त्वपूर्ण बात है। लेकिन जो भी पानी मिलता है, वह साफ-सुथरा न होकर गंदा हो, तो ऐसे प्रदूषित पानी से तो पानी का इस्तेमाल न करना ही बेहतर है। लेकिन जीना है तो पानी पीना ही पड़ेगा। पानी के स्रोत प्राय: कुआँ, तालाब, नदियाँ आदि ही होते हैं। परन्तु मनुष्य अपनी करनी से प्रतिदिन उन्हें गंदा करता रहता है।'

आज शहरों की गंदगी, कचरा, गंदा पानी, नाले आदि शहरों के पास की उन्हीं नदियों में डाला जा रहा है जो पीने का पानी हमें देती हैं। कारखानों की गंदगी भी इन्हीं नदियों में बहाई जा रही है। मरे हुए पशु अधजली लाशें, गंगा जैसी पवित्र नदी में बहाने से गंगाजल भी गंदा हो गया है। यही हाल अन्य नदियों का भी है। बड़े-बड़े कल-कारखाने अपने उत्पादन में पानी का उपयोग करते हैं जो गंदा और प्रदूषित होकर प्रतिदिन बाहर निकलता है। इसे बहाने के लिए उद्योगपतियों के पास तालाब और नदियाँ ही सरल साधन हैं। अच्छा तो यह होता कि यह गंदा पानी तालाबों अथवा नदियों में डालने से पहले आधुनिक तरीकों से

साफ कर लिया जाता। लेकिन उद्योगपति ऐसा नहीं करते। इसी से प्राणियों को गंदा पानी पीने को मिलता है। अनुज, तुम्हारी बीमारी भी गंदे पानी के कारण ही हुई है। अब तुम्हें लम्बा इलाज कराना पड़ेगा। तब कहीं तुम ठीक हो पाओगे।'

इस जानकारी के बाद अनुज ने कहा, 'अब मैं भविष्य में प्यासा रह लूँगा पर गंदा पानी कभी नहीं पीऊँगा।'

ऊँची आवाज के हॉर्न, लाउडस्पीकर तथा पटाखों के धमाके से अतुल का सिर दर्द करने लगता है। अत: उसने पर्यावरण से पूछा, 'शोर भी तो आपका ही एक अंग है। अब यह बताइए कि बादल स्वयं गरजते हैं, और बिजली अपने आप कड़कती है। इस शोर के लिए कौन दोषी है?'

इस पर पर्यावरण भैया ने कहा, 'हाँ, कुछ शोर प्राकृतिक होते हैं। पर वे अधिक देर नहीं रहते। लेकिन मनुष्य ने तो चारों तरफ शोर के इतने तमाशे जुटा रखे हैं कि हाल ही बुरा है। इसकी हानि तुम इस तरह समझ सकते हो कि संगीत कानों को अच्छा लगता है और शोर सिर दर्द पैदा करता है। शोर-शराबा ही ध्वनि प्रदूषण को जन्म देता है।'

तुम्हारे कान एक सीमा तक ऊँची आवाज सुन सकते हैं। अधिक ऊँची ध्वनि से अथवा धमाके से कान के पर्दों के फटने का खतरा रहता है। निरंतर शोर में रहने वाले ऊँची आवाज में बोलने के आदी हो जाते हैं। शोर कालान्तर में प्राणियों को बहरा बना देता है। ऊँची आवाज में बजते लाउडस्पीकर, हवाई जहाजों की गर्जना, मशीनों की घड़घड़ाहट, रेल या मोटर गाड़ियों तथा अन्य वाहनों का शोर, ऊँची आवाज में हॉर्न बजाना, भीड़-भाड़ की चिल्लाहट आदि ध्वनि प्रदूषण के ऐसे सामान्य कारण हैं जिनसे आज के मशीनी युग में बचना बड़ा कठिन है। तुम जानते ही हो कि स्वास्थ्य लाभ कर रहे रोगियों के लिए शोर हानिकारक होता है। तभी तो अस्पतालों के पास लिखा होता है-'यहाँ हॉर्न बजाना मना है'। अब बताओ शोर के ये सभी साधन मनुष्य ने नहीं तो किसने जुटाए हैं?'

इस पर अतुल ने कहा, 'शोर के सभी कारण मनुष्य ने बनाए हैं। वहीं शोर के लिए दोषी है। अब हम खेलेंगे-कूदेंगे पर शोर नहीं मचाएँगे।'

पर्यावरण ने कहा, 'बच्चों, घर पर तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे इंतजार में होंगे। अब तुम घर जाओ। तुम अच्छे बच्चे हो। मेरी कुछ बातें ध्यान से सुनकर तुमने मेरे मन का बोझ हल्का कर दिया। मेरी दु:ख भरी बातें सुनने के लिए तुम्हें बहुत-बहुत धन्यवाद।'

यह सुनकर अतुल, अरुण और अनुज तीनों कहने लगे, 'अरे पर्यावरण भैया, यह आप क्या कह रहे हैं? आपने तो अपने बारे में इतनी बातें बताकर हमें शिक्षित कर दिया, हमारा अज्ञान दूर कर दिया। अब तक हम यही समझते थे कि इन सभी विपदाओं के लिए आप स्वयं दोषी हैं। पर आज हम अच्छी तरह समझ गए हैं पर्यावरण भैया, कि आप दोषी नहीं हैं। दोषी तो हम स्वयं हैं जो प्राणियों की सेवा करने के आपके काम में अपने स्वार्थवश बाधा पहुँचाते रहते हैं। अब हम घर जाकर अपने माता-पिता, अड़ोस-पड़ोस में सभी को ये बातें बताएँगे ताकि वे असलियत समझ सकें और पर्यावरण को साफ-सुथरा रखने की आदत डालें। तभी हम सुख से जीवन बिता सकेंगे।'

सुनीता विश्नोलिया

खिलखिला उठे जिंदगी

''माँ..सुनो ना! मुझसे कैसी नाराजगी है बताओ ना। चाहे मेरी उम्र हजार साल भी हो जाए फिर भी तुम्हारे अंक में खुद को बच्चा ही समझता रहूँगा। तुम्हारे आँचल की ओट में छिपकर बंद कर लेना चाहता हूँ अपनी आँखें। अब नहीं देख सकता इस दुनिया के दर्द के कारण आपको दुखी।

हर तरफ जलती चिताएँ, चीख-पुकार, मनुष्य का करुण क्रंदन। इन सूखते जल स्रोतों के बीच भी तुम्हारे हृदय से चिपककर मैं महसूस कर सकता हूँ तुम्हारे वात्सल्य की उष्मा। तुम्हारी तेज चलती साँसें और हृदय में हो रही उथल-पुथल नहीं छिपी है मुझसे! तुम ही बताओ माँ! तुम्हारा ये बूढ़ा बेटा कैसे बचाए तुम्हारी प्रिय संतान को।

अरे! लाल फूलों से लदे मेरे नन्हें गुड़हल मेरे रोने पर इतना विस्मय ना करो। बेटी चम्पा, चमेली, मेरी प्यारी नन्हीं हरी-हरी घास मुझे यों न देखो, रो लेने दो जी भर कर। हाँ जानता हूँ तुम्हें ये बूढ़ा दादा रोता हुआ अच्छा नहीं लगता। गौरैया, सुग्गे, चतुर चील मेरे करुण स्वर को सुनकर भयभीत न हो मत जाओ मेरी शाखाओं को छोड़कर।

बच्चों तुम्हारी प्यारी आवाजें सुनकर तुम्हारे वट दादा के हृदय को बहुत शांति मिलती है। पर नहीं मिलती है संसार के कष्टों और दु:खों को देख कर भी अनदेखा करने शक्ति। विस्मय से फटी तुम्हारी आँखें जानना चाहती हैं अपने इस बूढ़े बरगद दादा के रोने का कारण!

सब बताऊँगा, अगर आज नहीं बताया तो मुझे भी शांति नहीं मिलेगी। शायद ये दर्द बाँटने से कुछ कम हो जाए।

प्यारे बच्चों, क्या आप जानते हैं मेरी माँ कौन है? क्या वो सच में मुझसे नाराज है?

'बच्चों तुम इस धरती को माँ कहते हो ना! हाँ, माँ तुम्हारी और मेरी माँ यानी हम सबकी माँ ये धरती ही तो है। तुम्हारी ही तरह कभी मेरा कोमल अंकुर भी फूटा था धरती की कोख में। अपने अंतर के रस का पान मुझे भी करवाती थी माँ। बहुत नाजों से पला-बढ़ा था मैं।

धीरे-धीरे मैं बड़ा होने लगा, माँ के दिए संस्कारों ने सिखा दी मुझे जिम्मेदारी और कर्त्तव्य। माँ के संस्कारों का पवित्र जल दौड़ता रहता है मेरे रोम-रोम में इसीलिए बन पाया मैं जिम्मेदार और सँभालने लगा परिवार। छोटे भाई-बहनों के लिए छाया, मुसाफिरों को आराम और पक्षियों के लिए शरणस्थली

बनी मेरी अनगिनत शाखाएँ। मेरे कोटर में और मेरी सघन शाखाओं के आस-पास छिपे रहने वाले सरीश्रप भी बेफिक्र होकर लगाते हैं दौड़ मेरी भुजाओं पर। जैसे-जैसे मेरी शाखाएँ फैलती गई वैसे-वैसे बढ़ता गया हमारा परिवार। धरती पर विचरण करते पशुओं और आकाश में उड़ते और हरित वृक्षों की डालियों पर मस्त - किलोल करते पक्षियों को देख सदा मुस्कुराती रहती थी माँ।

मेरी जड़ों को अपने वात्सल्यमयी हृदय से बाँधकर रखती था। माँ धरणि उँड़ेल देती थी गुण अपने खनिज-लवण के। प्रदूषण रहित स्वच्छ जल पिलाकर कर देती थी तृप्त मेरी आत्मा को। माँ के आँचल की छाँव में सोते हुए अपने आपको धन्य समझता था मैं। हवा के झोंकों से प्रभावित होकर इधर-उधर ना चला जाऊँ इसलिए अपने पल्लू से बाँधे रखती थी मेरे हाथों को माँ।

माँ बताती हैं कि मैं प्रकृति का अटूट हिस्सा हूँ, मेरे बिना प्रकृति की कल्पना भी असंभव है। मैं 500 से 1000 साल तक जीवित रह सकता हूँ। मैं जितना ज्यादा हरा रहूँगा, जितनी ज्यादा पत्तियाँ होंगी मेरे सिर पर, मैं उतनी ही ज्यादा ऑक्सीजन दूँगा।

बच्चों! मेरा विस्तार देखो, मेरी जटाएँ, मेरी जड़ें लटक कर छू लेती हैं माँ धरती को और फिर पा लेती हैं नया अस्तित्व धरती में एक स्तम्भ के रूप में खड़ी होकर। बढ़ता जाता है मेरा आकार, बदलने लगता है मेरा स्वरूप एक जंगल बन जाता है खुद मेरी ही शाखाओं से।

तुम्हें ये जानकर आश्चर्य होगा कि मेरा विस्तार लगभग पाँच-पाँच एकड़ तक संभव है। शायद इसीलिए मनुष्य ने मेरी संतति को फलने फूलने का मौका नहीं दिया। और जो पुराने वटवृक्ष हैं उनका रखरखाव भी ठीक से नहीं कर रहे। जानते हो, सिर्फ मेरे बच्चों और मेरे भाइयों का ही नहीं वरन् मानव ने अपने लिए सुंदर महल खड़े करने की जिद में कितने जंगल उजाड़ कर कंक्रीट के जंगलों में परिवर्तित कर दिए हैं।

बच्चों मस्त होकर नाचता ये मोर, कोकिल के सुरीले कंठ, चिड़ियों की चहचहाहट, सुग्गे के स्वर कहाँ बचे? सब भेंट चढ़ गए हैं विकास की अंधी दौड़ में। हाँ! मैं रो रहा हूँ.. रो रहा हूँ मानवीय भूल पर, जो आज उसी को शूल बनकर चुभ रही है। सत्य कहूँ तो माँ बीमार है आज। सूख गया है माँ के अन्तर का जल, जल रही है मनुष्य की अति महत्वाकांक्षा के ताप में। खोती जा रही है अपना सौंदर्य। वन, पर्वत, नदियों-झरनों के बिना।

अब मस्त होकर नहीं चिंघाड़ते हाथी, अपनी सत्ता को खोते शेर भी भूल गए हैं गुर्राना। नहीं बची फुर्ती बाघ और चीते में, चिड़ियाँ, मोर, कोयल नहीं बोलते अब मीठे स्वर में। रुँध गए हैं माँ के कंठ, नहीं बोल सकती अब माँ पृथ्वी! इंसान ने जंगल तो काटे ही काटे उसने तो पर्वतों को भी खोखला कर दिया।

मानव जानते हैं कि माँ की हर वस्तु हमारी है फिर भी माँ की गोद में रहते हुए उसने माँ को ही छला और भौंक दी माँ के हृदय में अपने लालच की कटार! हाँ.. साक्षी हूँ मैं इस बात का कि माँ के वैभव को नष्ट करने के लिए मनुष्य ने पल-पल दोहन किया धरती का। इसके अतुल्य भंडारों को पाने की लालसा में अनगिनत घाव दिए हैं हम सबकी माँ वसुंधरा को। क्षीण हो गई है माँ की काया भरभराकर गिरते पहाड़ों को देखकर। इसी वजह से सूखते जा रहे है जल स्रोत, बढ़ रहा है ताप और पिघल रहे है ग्लेशियर। टूटते ग्लेशियर स्वयं आपदा बनकर टूट पड़ते हैं धरती के सौंदर्य और मानव पर, काल बनकर। समा जाते हैं

लोग असमय काल के ग्रास में कभी सुनामी तो कभी भूकंप में।

माँ अपनी संतान को कभी दुखी नहीं देख सकती। उसके दुख, उसकी सारी तकलीफें देखकर माँ भी तड़पती है उसके साथ। वो जानती है कि मानव की इस दुर्दशा का कारण स्वयं मानव है फिर भी।

देखो बच्चों, सरपट दौड़ लगाती और उछल-कूद करने वाली टुकटुक गिलहरी रानी भी आज अपने दादा की बातों को कितनी गौर से सुन रही है। शायद आज इसे भी अहसास हो गया मेरी पीड़ा का। गौरैया रानी तू तो सब-कुछ जानती है मेरे बारे में। मैं बूढ़ा बरगद देख चुका हूँ पाँच सौ वसंत पर इस बार जो वसंत देखा वो कभी नहीं देखा और बच्चों यही कारण है मेरे रुदन का पर अब और नहीं रोना चाहता।

माँ धरती भी नाराज नहीं दुखी है हर तरफ मौत का तांडव देखकर, वो जानती है मानवता पर घोर संकट है आज। हर दिशा से त्राहिमाम! त्राहिमाम! के गूँजते स्वर, चीखते-चिल्लाते मानव...उफ्फ.... उफ्फ.. इसीलिए जाने कहाँ खो गई है माँ धरती की मोहक मुस्कान।

माँ धरती इतनी सहनशील है कि उसने अपने बच्चों की को माफ कर दिया है तो मैं भी ईश्वर से अंजान और नादान मनुष्य को माफ कर उसकी पीड़ा के हरण की प्रार्थना कर रहा हूँ। रो रहा हूँ उन्हें संकट में देखकर। तैयार हूँ मैं अपना रोम-रोम त्याग करने को मानव के हित में। इसीलिए मनुष्य से प्रार्थना कर रहा हूँ बढ़ाओ जंगलों को, जल का संरक्षण करो। मत छीनो धरती माँ का सौन्दर्य उसकी हरियाली और हरीतिमा का वैभव।

तुम सभी के मासूम चेहरे देखकर मैं भूलने लगा हूँ अपनी पीड़ा। देखो माँ ने भी मानव को माफ़ कर आशीष दिया है। आओ हम भी ईश्वर से ये प्रार्थना करें कि धरती से मौत का तांडव शीघ्र ही रुके और एक बार फिर जीत जाए मानवता और खिलखिला उठे जिंदगी।

सम्पर्क : *जयपुर (राजस्थान)*
मो. 9352834589

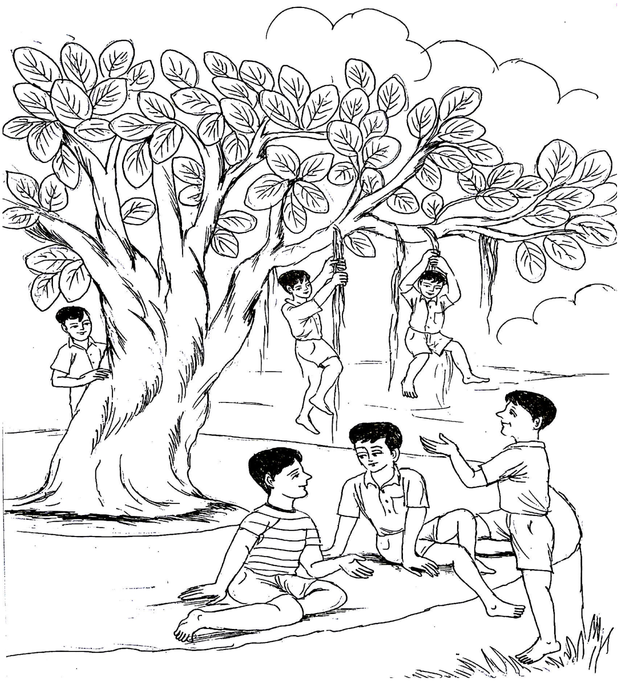

डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

मैं पीपल का पेड़ हूँ!

मैं पीपल का पेड़ हूँ, स्वच्छ हवा का सरसराता हुआ झरना। जैसे पर्वतीय प्रदेश से कोई जल स्रोत झरना बनकर बह निकलता है उसी तरह मैं भी आक्सीजन बाँटता रहता हूँ। मेरा जन्म एक नन्हें से बीज से हुआ है। हवा का एक प्यारा सा झोंका मुझे यहाँ इस भूमि पर स्थापित कर गया है। कई युग व्यतीत हो गये। श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने मुझे अपना स्वरूप (विभूति) बनाया है। मुझे भगवान बुद्ध ने भी कृतार्थ किया है। वे मेरी छाया में बैठे तपस्या में लीन थे। अचानक वे कुछ कृशकाय तो थे ही एकदम अधिक दुर्बल हो गये। संयोग की बात। उसी समय सुजाता नाम की एक नारी पूजा का थाल लेकर आई तो उसने अपनी खीर का नैवैद्य बुद्ध को अर्पण कर दिया। वह एक विशिष्ट मुहूर्त था। बुद्ध जो कि कृशकाय और जर्जर हो गये थे पुन: ऊर्जा को प्राप्त हो गए। मेरी सूखी शाखाओं जैसी उनकी भुजायें और उतने ही दुर्बल उनके सभी अंग सुजाता की खीर खाकर पुनर्जीवित हो गये। तब से मैं अपने ऊपर गर्व करने लगा। अब मैं बोधिवृक्ष कहलाया। मैं दिव्य हो गया। तभी से मुझे चट्टानों पर उकेरा गया। स्तूपों में ढाला गया। चित्रकारों ने भी अजन्ता की गुफाओं पर मुझे चित्रित कर। एक नई सार्थकता प्रदान की। मैं जहाँ भी दिखाई देता बौद्धभक्त मुझे काटते नहीं थे और न कभी किसी अन्य व्यक्ति को ही कुल्हाड़ी से मुझ पर प्रहार करने देते। मैं स्वच्छ हवा का झरना तो था ही अब पूज्य भी हो गया। मुझे काटने से व्यक्ति का ही नहीं वरन् मानवता का कल्याण नहीं हो सकता। शायद इसलिए सत्पुरुषों ने मुझे काटे जाने का निषेध किया था। इतना ही नहीं उन्होंने मुझे बचाने के लिए मेरे ऊपर भूतप्रेतों का डर भी दिखा दिया था। आम आदमी तो इसलिए मुझसे दूर ही रहते हैं। भूल से काट देने पर उनका अकल्याण भी हो सकता है अत: मैं सुरक्षित खड़ा हुआ अपने पत्तों से ताली बजाया करता हूँ। वास्तव में इस युग में आदमी के अन्दर मेरे लिए न तो पूज्य भाव रहा है और न ही नष्ट कर देने पर किसी प्रकार का भय सताता है। अब तो उपयोगिता की पूजा होती है। अब तो लोग जलाने के अतिरिक्त मेरी और कोई उपयोगिता ही नहीं समझते। कुर्सी मेज आदि उपकरण बनाने के लिए उन्हें मजबूत लकड़ी चाहिए, वह मुझसे मिल ही जाती है।

मेरे ऊपर असंख्य चिड़ियों का बसेरा होता है। सबेरे उठने से पहले वे मेरी टहनियों को अपनी चहचहाहट से गुंजायमान करती हैं। दिन भर उड़ती रहती हैं साँझ होते ही मेरी हरी-भरी

डालों पर बसेरा कर लेती हैं। सुख की नींद सो जाती हैं। मैं उनके लिए लोरियाँ गाता हूँ। सूरज की पहली किरण मेरी फुनगियों पर उतारती हैं तभी मैं धूप को धीरे-धीरे नीचे उतारता हूँ। किरणों के इस खेल पर मैं झूमझूम जाता हूँ। मैं किरणों को अपने सिर पर धारण करता हूँ। किरणें नीचे उतर कर नन्हें-मुन्नों को मधुर प्रभावी गान सुनाती हैं तभी वे हड़बड़ा कर जाग जाते हैं और सुनो, घनी धूप में भी यात्रियों को अपनी शीतल छाया देता हूँ। अपने पत्तों से थके माँदे पथिक को छाया में लेकर विश्राम देता हूँ। बच्चे दोपहर में भी धमाचौकड़ी मचाते हैं। पशु-पक्षी ऊँघते रहते हैं तथा मजदूर विश्राम करते-करते बतियाने लगते हैं।

मैं पीपल हूँ। अपने नाम को सार्थक करने वाला खण्डहरों में टूटी दीवालों की दरारों मैं तथा छतों की मुँडेरों पर कहीं भी उग आता हूँ। कोई बोये या न बोये। कोई पानी दे या न दे, मैं ठाठ से उठकर खड़ा हो जाता हूँ। मैं हर समय स्वच्छ हवा के पंखे सा झूला करता हूँ। आओ, बच्चों! तुम्हें अपनी कहानी सुनाऊँगा। मुझसे प्राणवायु प्राप्त करो। काटो मत। काटने भी मत दो। लाभ तुम्हारा ही है मेरा क्या? मेरा शरीर तो परोपकार के लिए ही बना है।

सम्पर्क : *नोएडा (उ.प्र.)*
फोन 11-204202991

संतोष कुमार सिंह

मैं कमल हूँ

अरे! देख क्या रहे हो राजेश? तुम मुझे नहीं पहचान रहे हो? मैं कमल हूँ। वही जो कीचड़ में जन्म लेने के लिए जाना जाता हूँ। तुम चाहो तो मुझे पद्म, पुंडरीक, नीरज, पंकज, वनज, सरोज, अरविन्द, उत्पल, इंदीवर आदि नामों से पुकार सकते हो। फारसी में मुझे नीलोफर और चीन के लोग 'वाटर लिली' भी कहते हैं।

मेरे ढालनुमा गोल पत्ते होते हैं जो पानी पर तैरते रहते हैं। इन पत्तों पर जब जल की बूँदें ठहरती हैं तो चाँदी के मोतियों के समान लगती हैं और जब प्रात:काल में सूर्य की किरणें इन पर पड़तीं हैं तो ये स्वर्णिम आभायुक्त हो जाती हैं। इनका यह रूप देखकर मेरा मन बहुत प्रसन्न होता है। वैसे मेरे इन पत्तों को लोग 'पुरइन' कहते हैं। कमल के पौधे को कमलिनी, पद्मिनी तथा नलिनी कह कर भी पुकारते हैं। मेरा तना जिसके अंदर कई नलियाँ होती हैं, 'मृणाल' कहलाता है।

मेरे पुष्प में कई कोमल पंखुड़ियाँ होती हैं जो मेरे केसर के छत्ते को गोल घेरा बना कर घेरे रहती हैं। ये पंखुड़ियाँ सूरज के उदय होने के साथ-साथ खुलती और सूरज के अस्त होने पर स्वयं बंद हो जाती हैं। मेरी केसर की सुगंध काले भँवरों को बहुत भाती है। कोई-कोई भँवरा तो इतना मस्त हो जाता है कि उसे इस बात का भान ही नहीं रहता है कि सूरज डूब चुका है और मुझे घर लौटना है। लेकिन मेरी पंखुड़ियाँ बंद हो जाती हैं और भँवरा रातभर के लिए कैद हो जाता है।

जैसे-जैसे दिन बीतते हैं मेरे छत्ते में बीज बनने लगते हैं। पंखुड़ियाँ भी सूख कर गिरने लगती हैं। कुछ दिनों बाद मेरे बीज पक जाते हैं। तब इस छत्ते को 'कमलगट्टा' कहते हैं। इस कमलगट्टे को तोड़ कर लोग अपने घर ले जाते हैं और काले परंतु कठोर आवरण वाले बीजों को निकाल लेते हैं ताकि बीज बोकर दुबारा कमल के पौधे उगा सकें।

राजेश, अब तुम्हें क्या बताऊँ, आदमी बड़ा शरारती होता है। एक दिन उसको सूझा कि चना-चबैना की तरह इन बीजों को भून कर देखता हूँ। अत: उसने मेरे बीजों को भी भून डाला। गर्मी पाकर मेरे बीज चटखे और खिल-खिल कर बिखर गए। श्वेत रंग का भाग सामने था। आदमी ने उसे मखाना नाम दिया और उसे सूखी मेवा मान लिया। फिर उसका उपयोग खीर में तथा तरह-तरह की नमकीनों में करने लगा। मेरे पत्तों का उपयोग भी पत्तलों के रूप में करते हैं तथा जड़ों को 'कमल-ककड़ी' कह कर सब्जी बना लेते हैं।

मैं अपने आपको बहुत सौभाग्यशाली मानता हूँ क्योंकि माता लक्ष्मी और माता सरस्वती ने मुझे अपने आसन के रूप में चुना है। लेकिन माता लक्ष्मी को लाल और माता सरस्वती को श्वेत रंग में ही भाता हूँ। इसीलिए माता लक्ष्मी को तो कमला और पद्मा नामों से भी पुकारा जाता है।

जब किसी सरोवर में हजारों की संख्या में हम एक साथ खिलते हैं तो हमारी मनोहारी छटा को देखकर लोग मंत्र मुग्ध होकर निहारते ही रह जाते हैं। एक राजनीनिक पार्टी ने तो अपने झंडे में भी स्थान दिया है। इतना ही नहीं दिल्ली में बहोई संप्रदाय ने अपने उपासना मंदिर की डिजाइन ही कमल के रूप में बनाई हैं। इसीलिए उसे 'लोटस टेंपल' कहा जाता है।

मेरा उपयोग पूजा और श्रृंगार में भी किया जाता है। शुभ मानकर दीवारों पर भी उकेरा जाता हूँ और किसी-किसी सिक्के पर भी तुम मुझे पा सकते हो। सच पूछो तो मैं उसदिन बहुत प्रसन्न हुआ था जिस दिन भारत सरकार ने मुझे 'राष्ट्रीय फूल' स्वीकार कर मेरा मान बढ़ाया था।

राजेश, अंत में तुम्हें एक बात और बताता हूँ कि तुम्हारे हाथ में, मैं गुलाबी रंग में हूँ लेकिन तुम मुझे श्वेतकमल, रक्तकमल, नीलकमल और स्वर्णकमल के साथ-साथ विभिन्न रूपों में भी पा सकते हो। सच तो ये है कि दुनिया ने मुझे जो सम्मान दिया है उसे पाकर मेरा जीवन धन्य हो गया है।

सम्पर्क : *मथुरा (उ.प्र.)*
मो. 9456882131

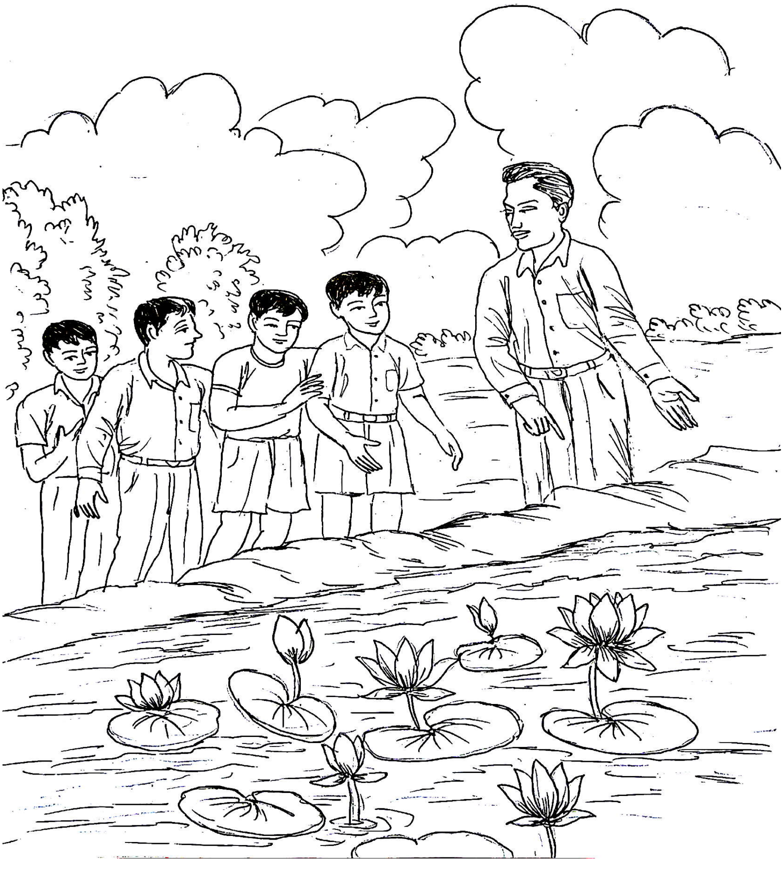

रामगोपाल 'राही'

घास की आत्मकथा

बच्चों का उद्यान उसमें बच्चे खेलने आए हुए थे। कोई चकरी पर बैठ घूमने लगा। कोई झूला-झूलने लगा, कुछ बच्चे झूले के पास लगी बैंच पर बैठ गए। कुछ बच्चे रिसकनी (फिसलपट्टी) पर हँस-हँस फिलस रहे थे।

बरसात के दिन थे दरवाजा खुला रह गया। यह देख दो गाय, बछड़े, बैल, भैंस, बछिया, सांड आदि पशु उद्यान के अंदर चले आए। बरसात के कारण से उद्यान में बड़ी-बड़ी घास उगी थी। घास गाय-भैंस आदि तन्मयता से चरने लगे।

तभी बैंच पर बैठे बच्चों ने पीछे देखा। घास चर रहे गाय बछड़े बछिया भैंस के घास चरने से घस-घस की आवाज हो रही थी। आवाज सुन। बच्चों का ध्यान पशुओं के चरने से घस-घस हो रही आवाज की ओर गया। बच्चे ही तो ठहरे, घस-घस सुन हँस-हँस कर स्वयं भी घस-घस बोलते रहे। मस्ती में हँसते रहे बार-बार में यही बोलते रहे, इतने में अदृश्य घास स्वयं बोली, सुन उद्यान के सारे बच्चे एकत्रित हो गए।

घास भी स्वयं घस-घस बोलने लगी।

बच्चों ने सुना, चौंके, इधर-उधर देखा। आपस में बोले- 'कौन बोल रहा है, यह आवाज कहाँ से आ रही है?' इतने में घास फिर बोली-'बच्चों! जानते हो इस घस-घस-घस से ही मेरा नाम घास पड़ा है।' आवाज सुन बच्चे फिर इधर-उधर देखने लगे और बोले-'घास बोल रही हो?' उत्तर मिला- 'हाँ, मैं घास बोल रही हूँ।' सुन बच्चे बोले- 'घास को तो यह पशु खा रहे हैं।'

सुन घास ने कहा- 'हाँ, पालतू पशुओं के खाने के काम ही आती हूँ मैं।'

अदृश्य आवाज के प्रति बच्चे उत्सुकता से उसे सुनते रहे। घास बोलती रही- 'मानव जीवन का आधार घास ही है। फिर कहा अन्न का आधार घास ही होती है।' घास ने फिर कहा- 'आप सब तृण समझ घास की उपेक्षा कर फेंक देते हो।'

घास की बात सुन बच्चों ने फिर उत्सुकता से पूछा- 'तुम धरती पर कैसे आ जाती हो?'

बच्चों ने अपनी बात दोहराते हुए कहा-'तुम धरती पर कब से हो।'

घास ने कहा-'जब से सृष्टि है तभी से हूँ।'

घास ने अपने विस्तार की बात समझाते हुए बताया–'दुनिया में मेरे घास के बड़े–बड़े मैदान है।' फिर समझाते हुए बताया– मुझे अंग्रेजी में ग्रास, लैटिन में ग्रेमेन कहते हैं। बच्चे सुन आश्चर्य करने लगे। अरे घास अंग्रेजी भी जानती है?

घास बोली– 'मैं एक पत्ती घास हूँ, जिसमें एक दल होता है।' फिर कहा–'सबसे पहले धरती पर मैं ही आई, उगी थी। हरी–भरी होने से धरती की सुंदरता बढ़ी जानते हो मेरे साथ ही पेड़–पौधे आए साथ में अपने हवा लाए। जिससे धरती सुंदर और सार्थक हो गयी, इसी क्रम में घास खाने वाले जीवों की उत्पत्ति हुई।' घास ने आगे कहा– 'मेरे दुनिया में काफी मैदानी जंगल है।'

इस पर कुछ बच्चे सोचकर बोले– 'दुनिया में तुम्हारे इतने बड़े जंगल है, मैदान है तो फिर घास का और भी उपयोग होता होगा?'

इस पर घास ने प्रसन्न होकर कहा–'तुम ठीक कहते हो।' घास फिर बोली–'मैं अपने बारे में तुम्हें और भी बहुत सारी जानकारी देती हूँ।'

'सुनो! मैं कभी भी बिना हिचकिचाहट के निर्भयता से हर कहीं उग आती हूँ। मैं धरती की हरी और सुनहरी चुनरिया हूँ। मेरे उगते ही धरती पर हरियाली हो जाती है। एक बड़ी बात सृष्टि में जीव–जगत में आशा–विश्वास की जनक अंकुरित हरे रंग की घास ही होती है।'

फिर कहा– 'गेहूँ, जौ, बाजरा, मक्का, ज्वार सभी अन्न के दाने मुझ घास में ही लिपटे होते हैं।'

अन्न के बारे में घास ने बड़ी प्रेरक अतीत की बात बताई। कहा– 'उपनिषद् में कथन है 'कस्माद भूतानि जायन्ते' अर्थात् विश्व किस वस्तु से उत्पन्न हुआ उत्तर भी उसी में लिखा है। 'अन्नाद भूतानि जायन्ते' अर्थात् यह जगत अन्न से उत्पन्न हुआ। अन्न से जीवन, द्रव्य बनता है, जिससे शरीर चलता है।'

साथ ही कहा– 'अन्नं वै प्राणा:' घास ने श्लोक सुनाते हुए कहा–

अन्नेन रक्षितो देहूं, देहेन प्राणस्तथा,/प्राणेन रक्षितो धर्म: अन्नं रक्षति सर्वहि।।

अर्थ बता अपनी बात आगे बढ़ाते हुए घास ने कहा– 'तरह–तरह की सभी घास गैसिनी कुल के अंतर्गत ही आती हैं और जानते हो गन्ना (ईख) यहाँ तक की बाँस भी घास ही हैं।'

बच्चे घास की बात सुन और भी उत्सुकता से सुनने लगे–'घास तो बड़े ज्ञान की बात कर रही है।'

घास ने फिर अपनी कहानी आगे बताई बोली– 'बच्चों मैं तृण अवश्य हूँ, किन्तु मेरा समाज व मानव जीवन में बहुत महत्त्व है।' फिर कहा– 'पूजा अनुष्ठान में दूर्वा, द्रोब ही रखी जाती है।' फिर बोली– 'तुमने देखा होगा मैं सूखी या पुआल भूसी के रूप में पालतू पशुओं का आहार हूँ। जिसे खा पालतू पशु दूध देते हैं, जिससे सुबह–सुबह आपके घरों में चाय बनती है। पशुओं का चारा मेरी बालियों से ही होता है। इससे भूसा बनता है। खाद में काम आने लगी हूँ। मेरे हरे भरे रहने से आसपास उद्यान बहुत मनोरम और उपयोगी होते हैं। हरी घास पर लेट सारी व्यथा भूल जाते हैं। बहुत शीतल होती हूँ मैं। लॉन में मेरा उपयोग सभी जानते हैं। रात को ओस के मोती मुझ पर गिर चमकते हैं, सबको प्यारे लगते हैं। सुबह–सुबह मुझ पर नंगे पाँव घूमने वालों के नेत्र रोग ठीक कर देती हूँ मैं! घास यहीं नहीं रुकी/कहा– जानते हो दुनिया में मेरे बड़े–बड़े मैदान हैं। उत्तरी अमेरिका में प्रेयरीज, दक्षिणी अमेरिका में पेन्मया, ऑस्ट्रेलिया के डाऊन, दक्षिणी अफ्रीका के सवन्ना बैड मेरे प्रसिद्ध मैदान हैं।'

अब घास की बात सुन बच्चे बोले-'हम जाएँगे, जल्दी-जल्दी बताओ तुम्हारे और क्या-क्या उपयोग है?'

अब घास जल्दी-जल्दी बोलने लगी-'कई मैदानों में बड़ी-बड़ी उगती हूँ। लम्बी घास को कागज की लुगदी के लिए उगाया जाता है। घास कई तरह की होती है, मैं जिंजर घास, लेमन घास, तेलीय घास। घास से सुगंधित तेल निकाले जाते हैं। कपूर घास उत्तम प्रकार की होने से, घास से पहले जनेऊ भी बनती थी।'

बच्चों को याद दिलाया-'हनुमान चालीसा में हनुमान जी के 'काँधे मूँज जनेऊ साजे' की बात आयी है। मूँज घास के तने का निचला भाग सरकंडा से सेंठा, कुर्सी, मुड्डे (मोढ़े), मेज, टोकरी, पर्दे, चिक, कलम आदि बनते हैं। घास छप्पर छाने में भी काम आती है। विशेष बात बताऊँ खस घास की जड़ से सुगंधित इत्र बनता है।' सुन बच्चे बोले-'ये इत्र क्या होता है? घास ने कहा सुगंधित तेल जैसा ही होता है। खस इत्र तो बनता ही है साथ ही चिक, पंखे, टोकरी व ढक्कन बनते हैं। सुगंधित साबुन बनते हैं। घास बीज से लाल रंग का तेल निकलता है जो भी इत्र बनाने के काम आता है।'' अपनी उपयोगिता के अंत में कहा-'घास अगर नहीं हो मानव जीवन दूभर हो जाए। पालतू दूध देने वाले बोझा ढोने वाले पशु जिंदा भी नहीं रहें। घास भूसी, के रूप में दूध देने वाले गाड़ियाँ खींचने वाले पशुओं के जीवन का आधार हूँ, और सबसे बड़ी राज की बात भी सुन लो मैं घास तृण अवश्य हूँ पर पर्यावरण पोषक हूँ। पर्यावरण को समृद्ध बनाती हूँ।'

सुन बच्चों ने कहा-'यह तो बढ़िया बात है, घास हो पर सचमुच बहुत उपयोगी हो।'

बच्चों में जिज्ञासा थी सोच रहे थे कुछ और सुनें पर... अब घास की आवाज नहीं आ रही थी। बच्चों ने पलट जो देखा घास चर रही गाय, भैंस, बेल, बछड़ा-बछिया सभी तृप्त अर्थात् भर पेट घास चर चले गए थे, उन्हीं के साथ बोलती हुई घास की आवाज बंद हो गई। बच्चे असमंजस में ही रहे।

बच्चे ठहरे-उधर देखने लगे आपस में कहने लगे। घास बोलते-बोलते पल भर में कहाँ, किधर चली गई।

सम्पर्क : *बूँदी (राजस्थान)*

नीलम राकेश

सुनो सुनो मैं तुलसी हूँ

मैं तुलसी हूँ। सदियों से तुम्हारे घर के आसपास ही नहीं, तुम्हारे घर के आँगन में रहती आई हूँ। पिछले कुछ सालों से पता नहीं क्यों तुम सब ने मुझे नज़रअन्दाज़ करना शुरू कर दिया। इसलिए मुझे लगा अपने नन्हें मुन्ने दोस्तों को मुझे अपने बारे में बताना चाहिए।

मेरा नाम तुलसी है। हम दो बहने हैं, रामा तुलसी और श्यामा तुलसी/आम तौर पर हमें तुलसी ही कहा जाता है। वैसे मेरा बॉटनिकल नाम ऑसीमम सैक्टम है। तुमने चरक संहिता और सुश्रुत संहिता का नाम तो सुना ही होगा उसमें भी मेरा उल्लेख है।

मेरे जन्म की कथा सुनना चाहोगे? तो सुनो भागवत पुराण में लिखा है कि शिव के तेज से उत्पन्न बालक जालंधर एक पराक्रमी दैत्य राजा बना और उसका विवाह दैत्यराज कालनेमी की पुत्री वृंदा के साथ हुआ। वृंदा भगवान विष्णु की परम भक्त थी। वृंदा पतिव्रता स्त्री थी। उसकी शक्ति के कारण कोई जालंधर को मार नहीं सकता था। जालंधर के आतंक से मुक्ति के लिए श्री विष्णु ने छल से वृंदा के पतिव्रत धर्म को नष्ट किया। परिणामस्वरूप जालंधर का वध हो सका। जब वृंदा को सच्चाई पता चली तो उसने श्री विष्णु को शिला होने का श्राप दिया और स्वयं सती हो गई। जहाँ वृंदा भस्म हुई वहाँ पर तुलसी का पौधा उगा। देवताओं ने विष्णु के सालिग्राम रूप से तुलसी का विवाह कराया। तभी से देव-एकादशी के दिन तुलसी विवाह की परंपरा चली आ रही है।

क्या तुम्हें मेरे गुणों के बारे में कुछ पता है? अगर तुमको अपना पाठ जल्दी याद नहीं होता है तो मेरी चार-पाँच पत्तियाँ रोज़ पानी के साथ निगल लिया करो, और देखना कमाल, यह दिमाग की कार्य क्षमता को बढ़ा देती है। जिससे याददाश्त तेज हो जाती है। सर्दी जुकाम में मेरी पत्तियाँ बहुत फायदेमंद हैं। इसके अतिरिक्त मेरी पत्तियाँ और मंजरी मिलकर साइनोसाइटिस में आराम पहुँचाती हैं। तुम्हारे पूर्वज मेरे गुणों के बारे में अच्छी तरह से जानते थे इसलिए उन्होंने मुझे धर्म के साथ जोड़ दिया। ऐसा करने के पीछे उनकी मंशा यही थी कि हर घर में तुलसी का पौधा हो जिससे कि घर का वातावरण शुद्ध बना रहे और मेरे औषधीय गुणों का लाभ हर परिवार को मिले।

कहीं चोट लग जाती है तो तुलसी के पत्ते को फिटकरी के साथ मिलाकर लगाने से घाव तुरंत ठीक हो जाता है। तुलसी में मौजूद एंटी-बैक्टीरियल तत्व घाव को पकने नहीं देता। इसके पत्ते को तेल में मिलाकर लगाने से जलन भी कम होती है। तुलसी त्वचा संबंधी बीमारियों के लिए फायदेमंद है। इसका

इस्तेमाल करने से चेहरे पर कील-मुहासे खत्म हो जाते हैं। तुलसी के पत्ते का इस्तेमाल करने से साँस की दुर्गंध को दूर करने में काफी हद तक मदद मिलती है।

और बच्चों! तुम्हें बताऊँ, मुझे मोक्षदायिनी भी कहा जाता है। जिन घरों के आँगन में मेरा पौधा लगाकर उसे पूजा जाता है, ऐसा माना जाता है कि उस घर पर ईश्वर की कृपा बनी रहती है। मृत्यु के समय गंगाजल में तुलसी के पत्ते मिलाकर पिलाने से ऐसा माना जाता है कि व्यक्ति को मोक्ष प्राप्त होता है। साथ ही मेरे अन्दर के कीट-नाशक गुणों के कारण घर के अंदर का वातावरण शुद्ध बना रहता है। जिससे घर में रहने वालों की सेहत बेहतर बनी रहती है।

यूँ तो भारत के सभी प्रदेशों में मेरी पूजा की जाती है। मेरे पौधे के चारों ओर गाय के गोबर से लिपाई करके रंगोली बनाई जाती है। दक्षिण के राज्य ओडिशा में बैसाख महीने के प्रथम दिन, एक मिट्टी के बर्तन में सुराख करके, उसमें पानी भरकर तुलसी के पौधे के ठीक ऊपर टाँग दिया जाता है जिससे की बूँद-बूँद कर पानी पौधे को मिलता रहे। ऐसी मान्यता है कि गर्मी के इस महीने में जो तुलसी के पौधे को जल देगा, उसे मोक्ष प्राप्त होगा। देखा तुमने, तुम्हारे पूर्वजों ने कितनी समझदारी के साथ पौधे की गर्मी से सुरक्षा की व्यवस्था कर दी।

बच्चों! आज जरूरत है केवल मेरे ही नहीं, प्रकृति के हर अंग की रक्षा करने की। आज पर्यावरण की स्थिति चिंतनीय है। हम सबका भविष्य उससे जुड़ा हुआ है। मेरे प्यारे दोस्तो! अपने पूर्वजों की तरह प्रकृति की रक्षा की जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठा लो। मुझे विश्वास है जिस दिन तुमने ये जिम्मेदारी उठा ली सब कुछ पहले की तरह अच्छा हो जाएगा।

सम्पर्क : *लखनऊ (उ.प्र.)*
मो. 8400477299

रोचिका अरुण शर्मा

मैं नर्सरी हूँ

मैं नर्सरी हूँ हरी-भरी, रंग-बिरंगी, खिली-खिली, महकती सी। आपने क्या समझा? मैं स्कूल की नर्सरी कक्षा हूँ? हा हा हा। नहीं प्यारे, मैं तो हूँ पौधों की नर्सरी। मतलब, वह स्थान जहाँ पेड़-पौधों की छोटी-छोटी पौध तैयार की जाती है। हाँ, आप यूँ कह सकते हैं कि मैं पौधों का प्ले-ग्रुप भी हूँ और नर्सरी भी हूँ।

जब आप स्कूल के प्ले ग्रुप एवं नर्सरी में जाते हैं तो कभी प्रार्थना सभा, कभी खेल-कूद का मैदान, कभी कहानी और कभी सैंड प्ले के लिए जाते हो। इनके अलावा योगा, गीत-संगीत एक्टिविटी ये सब आपके व्यक्तित्व में निखार लाने के लिए ही तो करवाया जाता है।

ठीक उसी तरह मेरे यहाँ बीज, कलम या छोटी पौध की बुवाई, रोपाई, गुड़ाई, कटाई, सिंचाई आदि की जाती है। कई बार पौधों में शुरुआत में ही कीड़े लग जाते हैं तो यहाँ इन पर कीट नाशक का छिड़काव भी किया जाता है। नन्हें पौधे तैयार कर उन में निखार लाने के लिए उन्हें हर प्रकार की सुविधा देकर पूरी देखभाल की जाती है। ताकि नयी पौध स्वस्थ, सुन्दर, शानदार एवं जानदार होकर स्वादिष्ट फल एवं महकते हुए फूल दें। ज्यादा छोटी पौध तो प्लास्टिक की काले रंग की थैलियाँ जिनमें थोड़ी-थोड़ी दूरी पर छेद होते हैं उनमें उगाई जाती है और जिन पौधों की जड़ें मजबूत होती हैं और आकार भी थोड़ा बड़ा होता है उन्हें गमलों में लगाया जाता है।

विभिन्न ऋतुओं के अनुसार मेरे यहाँ नयी पौध तैयार होती है। जैसे ही ये पौध पूरी तरह से बड़े गमलों या जमीन में लगाने के लिए तैयार हो जाती हैं इन्हें बिक्री के लिए रख दिया जाता है।

जिन पौधों को धूप की आवश्यकता होती हैं उन्हें आउटडोर प्लांट्स कहते हैं और खुले में रखा जाता है, जैसे तुम्हारे आउटडोर गेम्स। लेकिन इसके विपरीत कुछ पौधे ऐसे होते हैं जिन्हें पनपने के लिए धूप से बचाव जरूरी है। इन्हें इनडोर प्लांट्स कहते हैं, जैसे तुम्हारे बोर्ड गेम्स। इनके लिए मेरे यहाँ हरे रंग के जालीदार कपड़े से एक कमरा सा तैयार किया हुआ होता है। जिससे पौधों को रोशनी तो मिलती है किन्तु धूप छन कर बहुत हल्की सी आती है।

जब मेरा क्षेत्रफल बड़ा होता है तो पौधों में पानी का छिड़काव भी बड़ा कठिन हो जाता है। ऐसे में मैं अपने यहाँ आधुनिक फव्वारा लगवा लेती हूँ जिन्हें चालू करने पर पानी का छिड़काव स्वत: ही होता है, जैसे बादल पानी बरसाते हैं न ठीक वैसे ही।

आजकल फ़्लैट की बालकनी में रखने के लिए साधारण गमलों के साथ बालकनी रेलिंग प्लान्टर, हैंगिंग प्लान्टर और गमले रखने के लिए स्टैंड भी रखने लगी हूँ। ताकि पौधे रखने के शौक़ीन लोगों को एक ही जगह सब सामान उपलब्ध हो जाए। विला या बंगलों में खूब खुली जगह होती है, इसलिए लॉन में लगाई जाने वाली दूब एवं फल-फूल के अलावा सब्जियों की पौध, बीज एवं खाद भी मेरे यहाँ उपलब्ध होते हैं। इनके अलावा कैक्टस, सैकुलेंट्स, आदि भी मेरी ख़ास पहचान बनाते हैं। क्यूँकि आजकल लोग इन्हें घरों में सुन्दर सिरामिक गमलों में सजाने लगे हैं। छुट्टी के दिन कई बार लोग सपरिवार मेरे यहाँ आते हैं, उनके चेहरे सुन्दर फूलों को देख खिल जाते हैं।

हर पौध के पास एक टैग कार्ड लगा होता है, जिस पर पौधे या फूलों का नाम एवं दाम दोनों लिखे होते हैं। तुम जैसे प्यारे-प्यारे बच्चे उन पौधों के नाम पढ़ते हैं तो बहुत हर्षित होते हैं। क्यूँकि कुछ नाम तो उन्होंने सिर्फ अपनी पुस्तकों में ही पढ़े होते हैं। कई बार बच्चे फूलों को छू-छू कर भी देखते हैं। उनका कोमल स्पर्श पाकर फूल भी मुस्कुरा उठते हैं। बच्चे अपने माता-पिता से जिद करके ढेर सारे पौधे ले जाते हैं क्यूँकि उनके लिए तो हर फूल होता है प्यारा और ख़ास, जैसे तुम सब मेरे लिए हो ख़ास।

हाँ, एक बात बताना तो मैं भूल ही गयी। फूलों का रस पीने रंग-बिरंगी तितलियाँ भी अकसर आ ही जाती हैं। उन तितलियों को देख बच्चे रोमांचित हो उठते हैं और उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ पड़ते हैं। मैं उनकी अठखेलियाँ देख मुस्कुरा उठती हूँ। एक बात तुम जरूर सोच रहे होगे मैं आधी अंग्रेजी, आधी हिंदी क्यूँ बोल रही हूँ। क्यूँकि मैं जानती हूँ तुम सब चुन्नू-मुन्नू नयी पौध समान हो। आजकल बच्चे ऐसी ही भाषा समझते हैं।

मेरा तो काम ही है छोटी-छोटी पौध को उनकी आवश्यकता के अनुसार सुविधा प्रदान करना। इस छुट्टी तुम भी मुझ से मिलने आना मेरे दोस्त। मैं पौधों से मिलने वाली शुद्ध हवा, सुन्दर महकते हुए फूल, रंगीन तितलियों के संग तुम्हारा स्वागत करने को आतुर हूँ।

सम्पर्क : चेन्नई
मो. 9597172444

अलका प्रमोद

प्रतीक्षा है तुम्हारी

दोस्तों, तुम सोच रहे होगे, यह आवाज कहाँ से आ रही है? अरे इधर देखो, मैं हूँ 'रेजीडेंसी'। मैं, उत्तर-प्रदेश की राजधानी लखनऊ में हज़रतगंज के पास वर्ष 1800 से खड़ा हूँ। माना मेरी आयु दो सौ साल से भी अधिक है पर मैं आज तुमसे दोस्ती करना चाहता हूँ, तुमको अपनी कहानी सुनाना चाहता हूँ।

नवाब आसिफुद्दौला ने मुझे बनवाना शुरू किया और नवाब साजिद अली शाह ने पूरा किया। उस समय हमारे देश पर अंग्रेजों का राज्य था और ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रतिनिधि नवाब के दरबार में नियुक्त होते थे। उन्हीं अधिकारियों के रहने के लिये मुझे बनाया गया, इसीलिये मेरा नाम रेजीडेंसी पड़ा, यानी कि रहने की जगह।

आज मैं बहुत बूढ़ा हो चुका हूँ और जर्जर भी पर मैं हमेशा ऐसा नहीं था। एक समय में मेरी बहुत शान थी। मेरे अंदर 5-6 भवन थे, एक बैंक्विट हाल, एक डॉक्टर फेयरर का घर, एक बेगम की कोठी, मस्जिद, चर्च, ट्रेजरी हाउस, पोस्टऑफिस और एक बड़ा सा बरगद का पेड़ था। अरे हाँ, एक तहखाना भी था जहाँ गर्मी में मेरे अंदर रहने वाले लोग आराम करते थे। बैंक्विट हाल में तो ऐसा शानदार यूरोपियन फर्नीचर और चाइनीज सजावटी सामान था, मानो किसी राजा का महल हो। यही नहीं, इस हाल के बीच में एक पानी का फव्वारा भी था, जहाँ पार्टी होती थी। अहा! गर्मियों में कितना आनंद आता था, वहाँ बैठने वालों को।

मेरे चारों ओर बहुत चहल-पहल रहती थी, अंग्रेज अधिकारी और उनकी मैडम, बच्चे, खूब मजे करते थे, पार्टी करते थे। लेकिन मेरा नाम इसलिये प्रसिद्ध नहीं है। देश को स्वतंत्र कराने के लिये होने वाली लड़ाई में, मेरा भी योगदान है। मेरा नाम आज भी स्वतंत्रता के लिये हुई क्रान्ति के लिये याद किया जाता है।

भले ही नवाब ने मुझे अंग्रेजों के रहने के लिये बनवाया था पर जब क्रान्ति का बिगुल बजा तो एक युद्ध मेरे चारों ओर भी हुआ।

हमारे देशवासी उस समय अपने देश को अंग्रेजों के शासन से स्वतंत्र करवाने के लिये बेचैन थे। ऐसे समय में जब अंग्रेजों ने नवाब वाजिद-अली-शाह को कलकत्ता तक खदेड़ दिया तब अवध प्रदेश-वासियों के मन में विद्रोह पैदा हो गया। सबने मिल कर विरोध का निर्णय लिया और उन्होंने मेरे अंदर रहने वाले अंग्रेजों को घेर लिया।

सबसे पहले बेगम हजरतमहल के प्रमुख सहायक जियालाल के नेतृत्व में आक्रमण किया गया। फिर 1857 में सैयद बरकत अहमद के नेतृत्व में आक्रमण हुआ, उसके बाद हमारे देश के वीर क्रान्तिकारियों ने मेरे चारों ओर से आक्रमण कर अंग्रेजों को 17 जुलाई से 1 नवम्बर, 1886 दिनों तक बन्दी बनाये रखा। घमासान युद्ध हुआ, अंग्रेज और कुछ क्रान्तिकारी भी मारे गये। लगभग 2000 अंग्रेजों की कब्र मेरे अंदर दफन है। यह साक्ष्य है इस बात का कि क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिये थे। सर हेनरी लारेंस को मेरे सामने ही क्रान्तिकारियों ने गोली मारी थी। वर्ष 1857 की क्रान्ति के बारे में तुमने अवश्य सुना होगा, उसमें इस घेरेबन्दी की भी बड़ी भूमिका थी। तुमको पता है, यह मेरे शरीर पर इतने सारे जो निशान हैं, वह किसी ने डिज़ाइन नहीं बनाई, वह तो गोलियों के चिह्न हैं। मैंने हजारों गोलियाँ और बम के गोले अपने शरीर पर झेले थे, उसी के चिह्न हैं। मैंने इतना दर्द सहा पर उफ तक नहीं की, डटा खड़ा रहा, क्योंकि मेरे देश के वीर, अंग्रेजों को इस देश से भगाने के लिये, उन पर आक्रमण कर रहे थे।

वर्ष 1947 में भारत स्वतंत्र हो गया, मैं बूढ़ा हो गया तो बीच में मुझे सब भूल गये थे। मैं अकेला जर्जर और दुखी रहता था। सब मुझे भूतहा कहने लगे थे और अफवाह फैल गयी कि मेरे अंदर भूत रहते हैं। जबकि सच तो यह था कि मुझे अकेला पा कर लुटेरे मेरे अंदर रहने लगे थे। वही सबको डराते थे, जिससे कोई उधर न आये। मैं सबको सच बताना चाहता था, पर मैं कैसे बताता? उधर तो कोई आता ही नहीं था।

वह तो अच्छा हुआ कि सरकार का ध्यान मेरी ओर गया और मैं इतना महत्त्वपूर्ण था कि सरकार ने मुझे संरक्षित इमारत बना दिया और मेरी देखभाल करने लगी। माना मैं पहले जैसा नहीं रहा, टूट-फूट गया हूँ, पर तुम आओ तो, तुम देखोगे कि अभी भी मैं कितना शानदार लगता हूँ। आज कल मेरे लान में कितने सुंदर फूल लगा दिये गये हैं। बहुत सारे लोग मेरे पास, सुबह-सुबह अपना स्वास्थ्य बनाने के लिये, टहलने आते हैं। मुझे बहुत अच्छा लगता है, जब लोग मुझे देखने आते हैं। मेरे साथ फोटो खिंचवाते हैं। तुम्हें पता है, मेरे आँगन में प्रकाश और ध्वनि का कार्यक्रम भी होता है। मेरे अंदर ही एक संग्रहालय भी है जिसमें 1857 की क्रान्ति की ढेर सारी निशानियाँ रखी हैं।

मुझे गर्व होता है कि अपने देश की स्वतंत्रता के लिये लड़ने वाले वीर क्रान्तिकारियों को मेरे कारण अंग्रेजों को हराने में सफलता मिली। दोस्तों, मेरा मन है कि तुम भी मुझसे मिलने आओ। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।

सम्पर्क : *लखनऊ (उ.प्र)*
मो. 9839022552

भगवती प्रसाद गौतम

मैं हूँ मुकंदरा का राजा...एमटी-1

दोस्तो, आज मैं प्रस्तुत करता हूँ, अपने ही जीवन की रोचक और रोमांचक कहानी। पर कौन हूँ मैं? शायद नहीं समझे। अरे, मैं हूँ मुकंदरा का राजा...एमटी-1, बिल्ली प्रजाति का वह बाघ, जिसका वैज्ञानिक नाम है 'पेंथेरा टाइग्रिस', जिसके बिना दरा राष्ट्रीय उद्यान का यह इलाका सूना ही हो चला था।

मुकंदरा में मेरे पाँव कैसे पड़े और एमटी-1 जैसा नाम क्यों मिला, वह एक अलग ही मजेदार किस्सा है। मगर पहले बताता चलूँ कि 'बाघ बचाओ' (सेव द टाइगर) योजना के अंतर्गत भारत में 50 टाइगर रिज़र्व हैं, जिनमें से मुकंदरा, रणथंभौर और सरिस्का राजस्थान में संचालित हैं, लेकिन 'मुकंदरा हिल्स टाइगर रिज़र्व' ही ऐसा राष्ट्रीय उद्यान है जो पहले रिज़र्व बना और उसमें टाइगर आया बाद में। 'रिज़र्व' वह क्षेत्र होता है जहाँ बाघ बिना किसी मनुष्य के दखल के रह सकता है, घूम-फिर सकता है, शिकार कर सकता है और अपना परिवार बढ़ा सकता है।

मुकंदरा हिल्स टाइगर रिज़र्व में राजस्थान के चार जिले कोटा, बूँदी, झालावाड़ और चित्तौड़ शामिल हैं। सुना है, यहाँ वर्ष 1950 में 70 बाघ थे जिनकी अंतिम दहाड़ 1980 तक सुनी गई। तब से लेकर 2016-17 तक बस सन्नाटा छाया रहा। मैं कब, कहाँ जनमा, यह तो पता नहीं, मगर यही वह समय था जब मैं टी-91 के नाम से रणथंभौर में अपने दबदबे के लिए संघर्ष कर रहा था। कभी किसी से जबर्दस्त लड़ाई हुई तो कभी घात लगाए शिकारियों, तस्करों से सामना।

ऐसे में ही 19 नवंबर 2017 को मैं रास्ता भटक गया और बचते-बचाते जा पहुँचा रामगढ़ (बूँदी) सेंचुरी में। वहाँ जैसे-तैसे लगभग पाँच माह गुजरे, पर वनविभाग के कर्मचारियों ने मुझे पहचान लिया। बस, मेरी चौकसी बढ़ गई और काफी सोच-विचार के बाद मुझे मुकंदरा में बसाने का निर्णय किया गया।

यद्यपि मेरे जैसे हिंसक जीव का स्थान परिवर्तन कोई सरल काम नहीं था, फिर भी वनविभाग की योजना के अनुसार 3 अप्रैल 2018 को कुछ डॉक्टरों, अधिकारियों और कुशल वनकर्मियों की टीम की देखरेख में सबसे पहले मुझे ट्रैंक्विलाइज़ (बेहोश) किया गया, मजबूत पिंजरे में लिटाया और उसे एक ट्रक में रखवाया गया।

सुरक्षा की दृष्टि से रामगढ़ से मुकंदरा के दरा अभयारण्य तक की 130 किमी की दूरी तय करने, साथ ही सेफ कॉरीडोर (गलियारा) बनाने के लिए पुलिस की तीन जीपें पिंजरेवाले ट्रक के आगे और चार पीछे चलती रहीं। लगता था जैसे कोई शाही सवारी निकल रही हो।...और उसी दिन दोपहर लगभग 12:30 बजे मुझे दरा राष्ट्रीय उद्यान के एनक्लोज़र (घेरा) में प्रवेश करा दिया गया। यहाँ एकदम नए स्थान पर पहुँचने और होश आने के बाद लगभग आठ-दस मिनट तक मैं भौंचक्का-सा देखता रहा। और तो और, पिंजरा खुलने के दो घंटे बाद तक भी नीचे उतरने की हिम्मत नहीं जुटा सका।

...आखिर ज्यों ही मुकंदरा की धरती पर पाँव पड़े, मुझे नया नाम मिला...'एमटी-1', जिसका साम्राज्य 8000 हेक्टेयर भू-भाग पर फैला हुआ है। दूर-दूर तक धोंक, रोहिड़ा, तेंदू, बबूल, पलाश,

खेजड़ा, खैर, बेर, करोंदी, पीपल, बेहड़ा समेत कई तरह के पेड़ और घनी झाड़ियाँ हैं। इसी सघन परिवेश में बसे हैं 13–14 गाँव। यही नहीं, यहाँ पेंथर, भालू, साँभर, बंदर, चीतल, भेड़िए, नीलगाय, चिंकारा, खरगोश, ऊदबिलाऊ सहित लगभग 2000 वन्य प्रजातियाँ भी वास एवं विचरण करती हैं, लेकिन मेरी बात ही न्यारी है। मैं ठहरा बिल्ली प्रजाति का सबसे बड़ा माँसाहारी जीव, जिसकी उम्र 8–10 वर्ष होती है, पर चिड़िया घरों में कुछ और बढ़ जाती है। वैसे सच यह है कि हमें जीवन का असली आनंद तो घने जंगल के प्राकृतिक वातावरण में ही मिलता है।

हमारी प्रमुख श्रेणियाँ हैं बंगाल, सुमात्रन, साइबेरियन, कैस्पियन और मलयन टाइगर। यों मुझे एक शर्मीला आलसी प्राणी माना जाता है, लेकिन अपनी दृढ़ता, फुर्ती और अपार ताकत के कारण मुझे यानी रॉयल बंगाल टाइगर को राष्ट्रीय पशु का दर्जा प्राप्त है। 29 जुलाई को विश्व बाघ दिवस भी मनाया जाता है।

आपको आश्चर्य होगा कि मेरी दहाड़ तीन किमी तक सुनी जा सकती है। यों दौड़ने की रफ्तार है 49–65 किमी, किंतु मैं जल में 5–7 किमी तक तैर भी सकता हूँ। मेरी टाँगें इतनी मजबूत होती हैं कि मौत के बाद भी कुछ समय तक खड़ा रह सकता हूँ।...और हाँ, मेरा प्रिय भोजन है भैंस, सुअर, हिरण आदि। दिनभर सुस्ताते हुए शिकार के लिए रात का इंतजार करता हूँ क्योंकि अँधेरे में मेरी देखने की क्षमता छः गुना बढ़ जाती है।

वैसे, मुकंदरा को अपनी दहाड़ से आबाद करने के बाद कई दिनों तक मुझे अकेले ही रहना पड़ा, मगर फिर रणथंभौर से ही आई एक बाघिन...एमटी–2, जिससे मेरी पक्की दोस्ती हुई। उसने दो शावकों को जन्म दिया। कुनबे की इस बढ़ोतरी पर वन्यजीव प्रेमियों में अनायास ही खुशी की लहर दौड़ गई। उन्हें विश्वास है, अन्य लोगों का भी साथ व समर्थन मिले तो मेरी उपस्थिति ही मुकंदरा और इसके पर्यावरण की सुरक्षा की गारंटी दे सकती है।

सम्पर्क : *कोटा (राज.)*
मो. 9461182571

कीर्ति गाँधी

मैं हूँ खलनायक

भन-भन-भन-भन करता हूँ,
रातों की नींद उड़ाता हूँ,
छः टाँगों वाला हूँ,
बीमारियाँ फैलाता हूँ,
बूझो तो मैं कौन हूँ?

बच्चों, तुमने सही पहचाना मैं हूँ 'मच्छर'। मेरा साइंटिफिक नाम कलिसिडी (culicidae) है और अंग्रेजी में मुझे मॉस्किटो (mosquito) कहते हैं।

खाली टायर में बारिश का पानी भर गया था। उसी में मेरी माँ मच्छर ने मेरे साथ मेरे सैकड़ों भाई-बहनों को अंडों के रूप में पैदा किया। हम आपस में गुच्छे के रूप में चिपके हुए थे। जब मैं अंडे के रूप में आया, तो नरम, सफेद, सिगार की आकृति का छोटा सा था। एक दिन में ही मेरा रंग सफेद से काला हो गया। दो दिन बाद मैं अंडे को फोड़कर लार्वा के रूप में पानी की सतह पर आ गया। जहाँ मैं उल्टा लटके हुए अपनी सिफॉन ट्यूब(siphon tube) की मदद से साँस लेता रहा। फिर करीब दो हफ्ते बाद प्यूपा में तब्दील हो गया। इसके बाद मैं पूरे मच्छर के रूप में विकसित हुआ। इस तरह चार चरणों में मेरा जीवन चक्र पूरा हुआ। प्यूपा की खाल छोड़कर थोड़ी देर पानी की सतह पर रुका। जहाँ मेरा शरीर मजबूत हुआ और पंख सूख गए। फिर उड़ आया, मैं मनुष्य का खून चूसने।

एक मजे की बात बताऊँ तुम्हें जो लगता है न, कि मैं तुम्हारे कान में भन-भन का गाना गाता हूँ, दरअसल वह मेरे पंखों की आवाज है। उड़ने के लिए मुझे तेजी से पंख फड़फड़ाने होते हैं। जिससे भन-भन का शोर होता है। जब कान के नजदीक होता हूँ, तो यह तुम्हें सुनाई देता है अन्यथा नहीं। मैं ज्यादा दूर तक नहीं उठ सकता और ना ही ज्यादा तेज उड़ पाता हूँ।

मैं मादा मच्छर हूँ। इसलिए दो से तीन हफ्तों तक जिंदा रहूँगी। नर मच्छर तो 10-12 दिन में मर जाते हैं। वह इंसान का खून भी नहीं पीते बल्कि फूल पत्तों का रस पीकर जिंदा रहते हैं। मुझे अंडे पैदा करने के लिए नमी और ऊष्मा की जरूरत है, इसलिए मैं इंसानों को काटती हूँ। मेरे दाँत नहीं हैं, बल्कि मेरे पास एक पैनी सूँड़ जैसी है, जिसे तुम्हारी चमड़ी में गड़ाकर खून चुसती हूँ। उसी समय मैं अपने मुँह

की लार तुम्हारे शरीर में डाल देती हूँ। किसी बीमार के शरीर से खून चूसकर जब हम स्वस्थ शरीर का खून चूसते हैं, तो बीमारी के जीवाणु स्वस्थ शरीर में पहुँचा देते हैं। मैं मुख्यतः मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया, पीला ज्वर रोग फैलाता हूँ।

मुझे बच्चों की मुलायम त्वचा पर काटने में बड़ा मजा आता है। चूँकि बच्चों में रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है, इसलिए मैं तुम्हें बीमारी का शिकार जल्दी बना देता हूँ। मुझ से बचना चाहते हो तो पूरी बाँह के कपड़े पहना करो। रात को मच्छरदानी में सोया करो। अपने घर के आसपास पानी को भरा हुआ, पड़ा मत रहने दो। गड्ढों को बंद करो। कूड़े करकट का ढेर हटाओ। कूलर आदि में पानी पड़ा मत रहने दो। एक सप्ताह तक यदि कहीं पानी भरा पड़ा है, तो उसमें लाखों मच्छर पैदा हो सकते हैं। जितनी स्वच्छता रखोगे, मैं तुमसे उतना दूर रहूँगा।

वैसे मैं पूरे विश्व में पाया जाता हूँ। कहीं कम तो कहीं ज्यादा। जहाँ ज्यादा की तादाद में रहता हूँ, ज्यादा बीमारियाँ फैलाता हूँ। युद्ध में जितने लोग नहीं मरते उससे ज्यादा मेरे द्वारा काटे जाने से हुई बीमारियों से मरते हैं। जिस घर के दरवाजे-खिड़कियों में जाली नहीं लगी रहती, मैं उस घर में चुपके से दाखिल हो जाता हूँ। दिनभर अँधेरी जगह, पर्दे के पीछे, सोफे, बैड, टेबल आदि के नीचे छुप जाता हूँ। फिर रात में इंसान के खून पीने निकल पड़ता हूँ। बच्चों इस तरह मैं तुम्हारा दोस्त नहीं बल्कि दुश्मन हूँ। अगर स्वस्थ जीवन चाहते हो, तो तुम मुझसे बचकर रहना और नायक बनकर मेरे खात्मे का प्रयत्न करना क्योंकि खलनायक हूँ मैं।

सम्पर्क : दुर्ग (छत्तीसगढ़)
मो. 7987276462

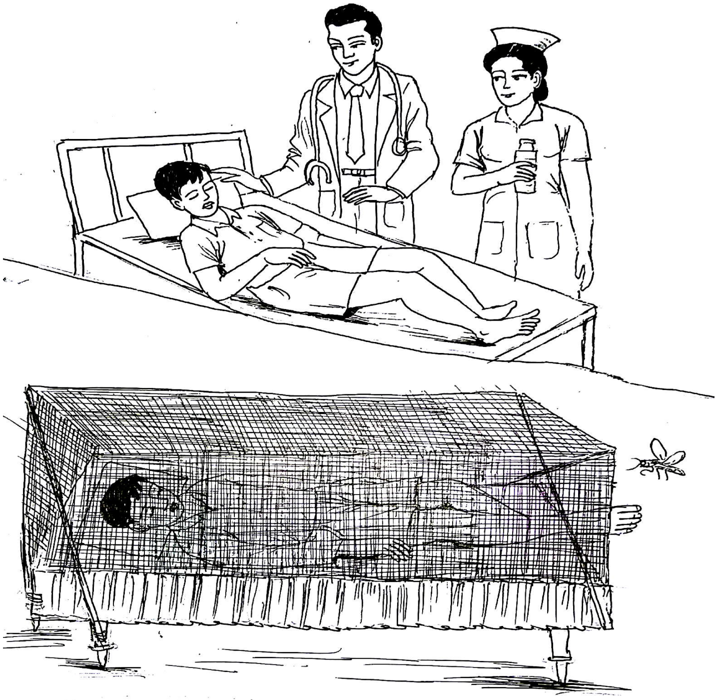

संध्या तिवारी

मियाँ मिट्ठू

बच्चों, जब से कंक्रीट के जंगल और गैजेट्स की दुनिया घास-पत्ती की तरह उग आई है, तब से मुझे नेपथ्य में धकेल दिया गया है। नहीं तो- मैं तोता, पद्मावत का हीरामन था कभी। कादम्बरी का वैशम्पायन भी मैं तोता ही था। मण्डन मिश्र के द्वार का मैं ही शुकसारिका था। महादेव के द्वारा पार्वती को सुनाई जाने वाली अमरकथा का हुंकारा भरने वाला शुक मैं ही हुआ करता था। दादी-नानी की कथाओं के भयंकर दानव के प्राणों का रखवाला एक ऐसा तोता, जिसकी गर्दन उमेठते ही दानव का अंत हो जाता था। किसी जमाने में मैं फिल्मी गीतों और गल्प कथाओं में भी नट की भूमिका करता था। मैं प्राचीन भारत के पक्षीकुल का ही जाना-पहचाना जीव था। मैं साहित्य का नायक भी हुआ करता था।

दुख तो यह है आज बच्चों की कॉमिक्स तक में मेरी भूमिका 'न' के बराबर हो गई है। आज तुम्हें अपनी भूलीबिसरी कहानी सुनाता हूँ। यह तब की बात है जब गैजेट्स नहीं थे। मनोरंजन के लिए वीणा वादन, शिकार खेलना, पशु-पक्षी पालन आदि होता था। लोग घरों में मुझे मेरी मीठी-मीठी बातों के कारण पालते और मिट्ठू कहकर पुकारते थे।

एक दिन की बात है मैं अपने झुंड के साथ वृक्ष की डाल पर बैठा अपनी मनमोहनी आवाज में अपनी पत्नी शुकी से प्रेमालाप कर रहा था। उसी वृक्ष के कोटर में जिसे मैंने और मेरी पत्नी तोती ने अपनी कठोर रक्तिम चोंच से कुरेद-कुरेद कर बनाया था। उस घोंसले में चार-पाँच बच्चे बैठे थे और दो-तीन बच्चे आसपास ही छोटी-छोटी उड़ाने भर कर कलरव कर रहे थे। मैं और मेरा खगकुल बहुत खुश था। एक दिन एक सुंदर राजकुमारी की नजर मुझ पर पड़ी। वह मुझे देखकर बहुत प्रसन्न हुई और उसने मुझे पाने की इच्छा अपने पिता यानी राजा को बताई। पिता ने बहेलिए से कहकर मुझे पकड़ मँगाया। मैं अपने परिवार से बिछड़ कर बहुत दु:खी हुआ, लेकिन अब क्या कर सकता था। दो तीन दिन मैं बहुत उदास रहा।

राजकुमारी ने मुझे रत्नजटित सोने के बड़े से पिंजरे में रखा। वह मुझसे हर समय कुछ न कुछ बातें करती रहती थी। धीरे-धीरे मैं उसकी बातें समझकर दोहराने लगा। उसके साथ मुझे बहुत स्नेह हो गया। मैं चाहता वह जहाँ भी जाये मुझे भी ले जाये। अगर कभी राजकुमारी मुझे अकेला छोड़ती तो मैं पिंजरे में फड़फड़ाकर टें-टें करने लगता। क्योंकि मुझे अकेलापन बर्दाश्त नहीं होता। बच्चों, मैं एक झुंड में रहने वाला प्राणी जो ठहरा।

राजकुमारी और उसके दास दासी मुझे मियाँ मिट्ठू कहकर ही बुलाते। वैसे मेरे और भी नाम हैं जैसे पट्ठू, टुइयाँ, सुग्गा, सुआ, शुक, रक्ततुण्ड, दाड़िमप्रिय आदि। राजकुमारी मुझे बहुत सी बातें सिखाती थीं। मैं भी वे बातें सीखकर हू-ब-हू उसकी नकल करता। जब वह मुझे खाने के लिए फल देती तो मैं पंजे से पकड़ कर निवाले की तरह अपनी चोंच में डालता, इसे देख राजकुमारी खुश होकर अपनी माँ से कहती देखो माँ, पक्षियों में केवल तोता ही ऐसे मनुष्यों की तरह खाता है। मेरे हरे-हरे रंग के पंख राजकुमारी को बहुत भाते और जब वह सुआपंखी रंग की पोशाक पहनकर मेरे सामने आती तो मुझे बहुत प्यारी लगती। मालूम है तुमको, भारत में ही लगभग पचास तरह की नस्ल के तोते होते हैं और दुनिया में तकरीबन एक सौ साठ किस्म के।

परदेशी तोतों में काकातुआ सफेद, मैकॉ नीले रंग का, बजरीका तोते नीले, पीले, हरे रंगों के चित्तीदार होते हैं, जो देखने में बहुत सुंदर लगते हैं। रोज़ेला भी कम सुंदर नहीं होता इसका सिर लाल, सीना पीला और डैना तथा दुम नीली रहती है। काकाटील का शरीर ऊदा और सफेद तथा सिर पीला होता है। हमारे देश में भी तोतों की परबत्ता, ढेलहरा, टुइयाँ, मदनगोर आदि कई प्रजातियाँ हैं, लेकिन हम सभी लगभग हरे रंग के होते हैं। तुम्हें पता है, मैं चील की तरह बहुत ऊँचा नहीं उड़ पाता लेकिन मेरी उड़ान लहरदार और तेज होती है, और मैं पक्षियों में सबसे बुद्धिमान पक्षी गिना जाता हूँ।

हाँ तो मैं कह रहा था कि, राजकुमारी के राजमहल में मुझे कोई कष्ट नहीं था सिवाय आजादी के। एक दिन एक दानव की नज़र राजकुमारी पर पड़ी। दानव राजकुमारी को पाने के लिए तड़प उठा। एक दिन राजकुमारी अपने झरोखे में खड़ी मुझे पढ़ा रही थी, तभी दानव अपने विशाल पंजे में उसे झपटकर उड़ा। उड़ते समय उसका पैर मेरे पिंजरे से टकराया और पिंजरे का दरवाज़ा खुल गया। दरवाजा खुलते ही मैंने उस दैत्य का पीछा किया और यह जानकर कि राजकुमारी को दैत्य ने कहाँ छुपाया है वापस राजमहल आकर मैंने राजा को बताया। राजा ने दैत्य को मारकर राजकुमारी को छुड़ा लिया।

मेरी बुद्धिमानी का जब राजकुमारी को पता लगा तो उसने मुझे बहुत दुलारा और अँगुली से मेरा सिर सहलाते हुए धीरे से कहा मेरा प्यारा मिट्ठू। उसने फिर मुझे पिंजरे में कैद नहीं किया। लेकिन मैं राजकुमारी से दूर नहीं जाना चाहता था तो मैंने राजकुमारी के झरोखे के सामने वाले पेड़ पर अपना डेरा डाला।

कुछ दिन बाद मुझे मेरी पत्नी भी मिल गई, और हमारे बहुत से साथी तोते वहाँ झुंड बनाकर रहने लगे। अब राजकुमारी भी खुश थी और हम भी बहुत खुश थे।

सम्पर्क : *पीलीभीत (उ.प्र.)*
मो. 7017824495

सरिता गुप्ता

काग़ज़ की आत्मकथा

मैं काग़ज़ हूँ ...आज मैं तुम्हें अपनी आत्मकथा सुनाने जा रहा हूँ। शिक्षा के इस दौर में मेरा विशेष महत्त्व है। रंग-बिरंगी किताबें, अखबार, लिफ़ाफ़े, पैकिंग पेपर सब मैं ही हूँ। मैं अलग-अलग रूप में सब का साथ निभाता हूँ। इस फैशन के दौर में मेरे रंग-रूप में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। पहले बच्चे किताबों पर मुझे भूरे, मटमैले से रंग में भी प्रेम से स्वीकार करते थे, लेकिन आज मैं कभी गुलाबी, कभी पीला, कभी हरा और भी न जाने कितने रंगों में चमकता-खिलता बिल्कुल ऐसे नजर आता हूँ, जैसे बग़ीचे में खिले रंग-बिरंगे फूल।

मैं अपने आप को तब बहुत गौरवान्वित अनुभव करता हूँ, जब छोटे-छोटे बच्चे मुझे प्यार से छूते हैं और अपनी चित्रकारी से मुझे सजाते हैं। मैं अंदर तक खिल उठता हूँ, जब मुझे ज्ञानवर्धक सूक्तियों से सजाया जाता है। रामायण हो या महाभारत, कुरान हो या बाइबल मेरे बिना सब अधूरे हैं।

मैं अपनी महत्ता जानता हूँ, फिर भी ज़रा भी अहंकार नहीं करता क्योंकि अगर मैं सबसे मिलकर नहीं रहा, तो अकेले पड़े-पड़े सड़ जाऊँगा। मैं जानता हूँ, परोपकार से बड़ा कोई धर्म नहीं। इसलिए मैं सबके काम आता हूँ। जो जब चाहे, जैसे चाहे, मेरा इस्तेमाल कर सकता है। सबकी खुशी से मैं खुश होता हूँ।

दोस्तो! मुझे तब बहुत दुख होता है, जब काम निकलने के बाद लोग मुझे फाड़कर, पैरों से रगड़कर, सड़कों पर, नदियों में तथा कक्षा में बिखरा देते हैं। इससे गंदगी फैलाने का इल्ज़ाम मेरे सिर आ जाता है। मैं स्वयं को तब बहुत अपमानित महसूस करता हूँ। मैं तुम्हारा सच्चा दोस्त हूँ, हर तरह से तुम्हारा साथ देने में खुशी का अनुभव करता हूँ। पता है, जब बच्चे क्राफ्ट का काम करते हैं तो मुझे कैंची से, ब्लेड से काटते हैं; कभी चिपकाते हैं, कभी फाड़ते हैं। मैं तब भी ज़रा दुखी नहीं होता क्योंकि मैं जानता हूँ, नया रूप धारण करने के लिए कष्ट तो उठाना ही पड़ता है। कष्टों को सहूँगा, तभी तो नया आकार मिलेगा मुझे।

आज से नहीं, सदियों से लोगों की जरूरत हूँ मैं। कभी कोई मेरी पुड़िया बनाकर मुझ में चने खाता है, कभी कोई मुझे नाव बनाकर पानी में चलाता है। कभी कोई हवाई जहाज बनाकर आकाश में ऊपर उड़ाता है। मैं हर तरह से बच्चों के साथ खुशी का अनुभव करता हूँ, लेकिन तब मुझे बहुत दुख होता है, जब लोग बिना कारण ही बैठे-बैठे मुझे पेंसिल की नोक से रोंदते हैं। मेरे ऊपर अपना गुस्सा निकालते हैं, कुछ भी लिखते हैं और फाड़ देते हैं। लोग मेरी अहमियत नहीं समझते। वे भूल जाते हैं कि ज़रूरत पड़ने

पर एक छोटा-सा काग़ज़ भी बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। जब भी लोग कुछ भूलने लगते हैं, तो मेरे ऊपर ही ज़रूरी बातें लिखकर अपनी याददाश्त को मजबूत बनाते हैं। जब ज़रूरत पड़ती है, तो मैं एक छोटी-सी पर्ची के रूप में भी लोगों की बातों को याद रखने में उनका सहयोग करता हूँ। प्रेमी जन मेरे ऊपर पत्र लिखकर अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करते हैं, प्रेम का इज़हार करते हैं। मैं मन-ही-मन बहुत खुश होता हूँ, लेकिन जब लोग आँसुओं से मुझे भिगोते हैं, तो मेरा हृदय अंदर तक फट जाता है।

मैं सभी के राज़ को राज़ रखता हूँ। किसी की बात किसी से नहीं कहता, लेकिन अंदर ही अंदर दुखी होता हूँ, जब लोग मुझे कूड़े के रूप में इधर-उधर फैलाकर नदियों को प्रदूषित करते हैं या आसपास के वातावरण को गंदा करते हैं। मैं काग़ज़ हूँ, अगर मैं पुराना हो गया हूँ, बेकार हो गया हूँ, तो मुझे इकट्ठा करके किसी रद्दी वाले को भी बेच दोगे, तो मैं लिफाफे बनकर लोगों की सहायता करूँगा। जब मैं बिल्कुल गल जाता हूँ, तो भी मुझे खड़िया में मिलाकर सुंदर मूर्तियाँ बनाने के काम में लाया जाता है और मैं पुन: नए रूप में तुम्हारे सम्मुख आ जाता हूँ। मैं सभी से प्रार्थना करता हूँ कि मुझे व्यर्थ में न फाड़ें, न काटें न बर्बाद करें, न इधर-उधर फेंकें।

हाँ, तो बस आज इतना ही। फिर कभी और भी बातें करेंगे। तब तक के लिए, विदा।

सम्पर्क : दिल्ली
मो. 9811679001

अनीता गंगाधर

बोलती कलम

दोपहर को आराम से बैठ मिति होमवर्क कर रही थी, तभी उसका छोटा भाई मानिक उसके पास आकर बैठ गया और उसके ज्योमेट्री बॉक्स में से मुझे निकाल कागज पर जैसे ही उसने अपनी कलाकारी शुरू की, मुझे ज़ोर से गुदगुदी होने लगी। मैं उसके हाथ से छूट जमीन पर हँसते-हँसते लोटपोट होने लगी। मुझे इस प्रकार स्वत: ही जमीन पर लुढ़कते हुए मिति बड़े अचरज से देखने लगी।

मैंने अपने को कुछ सँभाल कर बोलना शुरू किया तो उसके आश्चर्य का कोई ठिकाना ही नहीं रहा। उसे अपने आँख और कान पर बिलकुल विश्वास नहीं हुआ कि यह मैं बोल रही हूँ। फिर मैंने उससे कहा, 'हाँ! यह मैं ही हूँ, तुम्हारी प्यारी कलम, चलो आज मैं तुम्हें अपने हँसने का कारण बताते हुए तुम्हें अपनी सारी आत्मकथा सुनाती हूँ।'

मिति की कौतुहल और जिज्ञासा मिश्रित मुखाकृति पर आते-जाते भावों का आनंद लेते हुए मैंने कहना शुरू किया, 'चलो कुछ पीछे चलते हैं, चूँकि मैं आदिकाल से चली आ रही हूँ इसलिए मेरे जन्म का सटीक दिवस तो मुझे याद नहीं लेकिन पौराणिक तथ्य एवं कहानियाँ मेरे जन्म के साक्ष्य हैं।'

सनातन काल में लिखने के लिए मोरपंख, चिड़ियों के पंख या लकड़ी का इस्तेमाल करते थे। एक खास तरह की लकड़ी के एक सिरे को नुकीला बनाकर उसे स्याही में डुबो-डुबो कर हमारे शास्त्र को भोजपत्रों पर सँजोया जाता था ताकि हम हमारी संस्कृति को अच्छे से सहेज पाएँ।

यहाँ मैं तुम्हें अपने जन्म की एक पौराणिक कथा जरूर बताना चाहूँगी। महर्षि वेदव्यास ने वर्तमान में 'महाभारत' के नाम से प्रसिद्ध अपने विशाल ग्रंथ 'जय संहिता' को लिपिबद्ध करने का निश्चय किया। महर्षि चाहते थे कि सम्पूर्ण महाभारत एक ही कलम से लिखी जाए। इस हेतु उन्होंने प्रथम पूज्य गणेश जी से लेखक व लेखनी की समस्या से निजात दिलाने की प्रार्थना की। गणेश जी ने न केवल स्वयं ही ग्रंथ को लिपिबद्ध करने की ज़िम्मेदारी को स्वीकार कर लिया बल्कि इस कार्य हेतु अपना एक दाँत तोड़कर उसे ही कलम के रूप में प्रयुक्त किया। इस प्रकार मेरा जन्म गणपति के गजदंत से होना एक शास्त्रसम्मत प्रामाणिक तथ्य है।

कालांतर में ईस्वी सन 1884 में एविस वॉटरमैन ने फाउंटेन पेन पेटेंट कराया परंतु इससे पहले 1702 ई. में फ्रांस के रोम बायोने ने ही मेरे स्वरूप में परिवर्तन कर स्याही से मेरे सम्बन्धों को एक नया

रूप दे दिया था। स्याही से मेरा रिश्ता बहुत गहरा है। यदि स्याही न हो तो मेरा अस्तित्व होते हुए भी निरर्थक और बेजान है। हाँ! बेजान शब्द बिल्कुल सटीक है। मैं शरीर हूँ तो स्याही मेरे लिए प्राण है। मैं रग हूँ तो यह मुझमें दौड़ने वाला रुधिर है। स्याही के बिना मेरा जीवन शून्य है। मेरी और स्याही की दोस्ती पक्की होते-होते इतनी गहरी हो गई कि अब मुझे उसमें डुबोने की जगह स्याही मेरे अन्दर ही भरी जाने लगी और इससे तुम्हारा लेखन कार्य भी तो बहुत सरल हो गया है।

मेरे जीवन के अद्भुत पलों में सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण तो वे पल होते हैं जब बच्चों के जन्म की छठी की रात बेमाता के आगे मुझे और खाली नोटबुक को रख दिया जाता है। रात को बेमाता आकर जब मुझे अपने अलौकिक हाथों से पकड़कर नवजात का भविष्य लिखती हैं तो मुझे अपनी सार्थकता और उपयोगिता देखकर मेरा हृदय विस्मय से भर जाता है।

कुछ बड़ा होने पर जब यह बालक अपने नन्हें-कोमल हाथों से मुझे पकड़ता है, उस दिन मुझे जो अपार आत्म संतुष्टि मिलती है। उसे शब्दों में बयाँ करना बड़ा कठिन है। अपने बड़े भाई बहनों को लिखते देख छोटे बच्चे जब मुझे उनके हाथों से छीनते हैं, तो मुझे इतनी गुदगुदी होती है कि मैं हँसते-हँसते लोटपोट हो जाती हूँ। वे नन्हें बालक-बालिका कोमल हाथों से पकड़ते हैं और टेढ़ी-मेढ़ी लाइनें खींचते हैं, उसमें मुझे आत्मिक सुकून मिलता है। बस उसी पल अपना जीवन पूर्ण प्रतीत होता है।

कई बार स्याही मुझसे कहती भी है कि मैं ना होऊँ तो तुम बेकार हो। उसका कहना सही है, लेकिन तभी मैं उसे समझाती हूँ कि मेरे बिना वह भी इस महत्त्वपूर्ण स्थान को नहीं पा सकती है। हमें कभी भी अहंकार नहीं करना चाहिए और सब से मिलजुल कर रहना चाहिए। कहा भी गया है अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।

मैं कलम आपके जीवन आरम्भ से लेकर सम्पूर्ण जीवन तक किसी न किसी रूप में आपके साथ रहती हूँ। चाहे आपका विद्या अध्ययन आरम्भ हो रहा हो या आप प्रथम बार अपने जीवन की परीक्षा दे रहे हों। चाहे आप अपने जीवन का कोई विचार, कहानी, कविता किसी भी रूप में कोई भी नया कार्य आरम्भ करते हों, मैं हर उस कार्य की साक्षी रहती हूँ और ताउम्र आपका साथ देती हूँ।

अंत में मैं कलम आपके उज्जवल भविष्य एवं आपके हस्ताक्षर अमिट बनने की कामना व आशीर्वाद के साथ अपने लेखन को, अपनी कथा को यहीं विराम देती हूँ।

सम्पर्क : *अजमेर (राज.)*
मो. 9414708372

विमला भंडारी

सुई डोरे की दोस्ती

बात पुरानी है। हमारी दोस्ती की भी एक कहानी है। बरसों पहले हमें जोड़ा गया। फिर एक गिठान डालकर हमारे बीच दोस्ती कराई गई थी। यह बात उस समय की है जब हम दोनों एक दूसरे को पहचानते भी नहीं थे।

हमें मिलाया इसलिए गया कि उसे हमसे काम लेना था। या इस तरह से भी कहा जा सकता है कि हमारे बिना वह काम नहीं कर सकता था। तब वह मुझे एक लुहार की दुकान से और उसे जुलाहे की दुकान से ले आया था। उसका काम था लोगों के कपड़े सिलना।

अब तक लोग कपड़ा लपेट-ओढ़ कर तन ढक लेते थे। पर कुछ कामगारों ने वस्त्र सिलने का कौशल सीख लिया था। उन्हें चाहे दर्जी कह लो या टेलर या सिलाई मास्टर। खैर मैं तो अपनी सुविधा के लिए उसे दर्जी ही कहता रहा हूँ अब तक। तो मैं यह बता रहा था कि हमारी और उसकी दोस्ती उसी दर्जी ने कराई थी।

अब तो मेरा नाम भी जान गये हो। हाँ, बिल्कुल ठीक समझा। मैं सुई और उसका नाम था धागा था।

इतने दिनों वह और मैं दोनों अकेले ही घूमते-फिरते थे। वह भी किसी से लिपटकर या उलझकर ऐसे ही नष्ट हो जाता था और मैं भी इधर-उधर गिर जाती थी तो मुझे ढूँढ़ना बहुत मुश्किल हो जाता था। जब से हमारा साथ हुआ तो दर्जी का काम आसान हो गया और हमें भी जीने का मकसद मिल गया। कभी कपड़े पर बटन टाँकने में तो, कभी किसी कपड़े पर फूल, बेल-बूटे बनाने में हमारी दोस्ती का सदुपयोग होने लगा। फैशन की दुनिया हम से ही जिंदा है।

हमारी दोस्ती एक शक्ति के रूप में सामने आई। हमारी दोस्ती को पहचान मिली। कई लोग हमारी दोस्ती से आजीविका कमाने लगे। हमें सहेज कर रखा जाने लगा।

वह और मैं अब साथ-साथ एक ही डिब्बी में बंद रहते हैं। काम करते हैं तो दोनों मिलकर के करते हैं। मुझे कभी अकेला नहीं छोड़ा जाता। हमेशा मेरी पूँछ में धागे को पिरोकर उसके अंतिम छोर में गिठान बाँध दी जाती है। यह बँधी हुई गिठान ही है हमारी मित्रता की कहानी और मिसाल भी।

दोस्ती हो तो ऐसी उसमें निष्ठा भी कैसी, मैं यानी सुई अपनी नोक से कपड़े को छेदती हुई आगे बढ़ती जाती है। और पीछे-पीछे दोस्ती निभाता हुआ धागा चलता जाता है। मेरे बनाए गए आधार को वह

सिलता चलता है। ना कभी कोई प्रश्न करता है ना कभी मेरा विरोध करता है। बस केवल मेरा अनुसरण करता चलता है। प्रेम में लीन हुआ आगे देखता है ना पीछे बस मेरे पीछे-पीछे चलता रहता है। जब हम मिलकर कार्य करते हैं तो उसका सौंदर्य ही निराला होता है। मैं तो यही कहूँगा कि भई! मिलकर चलो। मिलकर रहो। दोस्ती करो तो सुई धागे सी करो। खुद भी प्रेम से रहो और दूसरे के भी काम आओ।

हाँ कभी-कभी, धागा आपस में उलझ जाता है। तब मेरी जिम्मेदारी हो जाती है कि मैं उसकी हर उलझन को दूर करूँ। तब मेरी नोक उसकी उलझन को सुलझाने में मदद करती है।

कई बार ऐसा भी होता है कि मेरे कितने भी समझाने के बावजूद उसकी उलझन दूर नहीं होती। तब उसे तोड़कर पृथक कर दिया जाता है। किंतु वह मुझे से कभी भी पृथक नहीं होता। मेरे बिना उसका अस्तित्व अधूरा है और उसके बिना मैं भी तो कहाँ काम कर सकता हूँ। हम दोनों की दोस्ती इस दुनिया में अमर है और दोस्ती की बेमिसाल उदाहरण है। तभी किसी कवि ने लिख दिया-

'मत कर बहू जोड़ा, सुई पीछे डोरा (धागा)'

(अर्थात् बहू वही करेगी जो सास को करता देखेगी या उसे सिखाएगी)

सम्पर्क : सलूंबर (राजस्थान)
मो. 9145815390

सुमन बाजपेयी

मैं हूँ आपका प्यारा दोस्त

सड़क पर तेज दौड़ती बसें, गाड़ियाँ, ट्रक, स्कूटर, धीमी गति से चलती साइकिलें और ई-रिक्शा, मैं सब को देखता हूँ। नहीं, मेरे पास कोई जादुई शीशा नहीं है, वह तो मैं फुटपाथ पर बैठा होता हूँ, इसलिए यह नजारा देख पाता हूँ। मेरे साथ मेरे बहुत सारे भाई-बहन भी होते हैं और हमसे मिलने बच्चे आते हैं, अपने मम्मी-पापा या किसी बड़े के साथ। हम सब के बहुत प्यारे-प्यारे रंग हैं—लाल, गुलाबी, पीला, सफेद—और कोई बहुत लंबा है और तो कोई मोटा, कोई नाटा है तो कोई छोटा और कोई एकदम छुटकू है पिद्दी जैसा। कोई-कोई मँझोले कद का भी है। लेकिन सब ही सुंदर लगते हैं और हमेशा मुस्कुराते रहते हैं।

ऐसा नहीं है कि मैं सिर्फ फुटपाथ पर ही मिलता हूँ। बड़े-बड़े मॉल, शॉपिंग कॉम्पलेक्स, रोशनी से चमकती आलीशान दुकानों और घरों के पास बनी खिलौनों की दुकानों में भी मैं सजा होता हूँ। बच्चे मुझसे बहुत प्यार करते हैं, इसलिए मुझे अपने साथ खरीदकर ले जाते हैं। उनके पसंदीदा उपहारों में से एक हूँ। जब किसी बच्चे का जन्मदिन होता है, तो मुझे ही उपहारस्वरूप दिया जाता है।

मुझे अपने साथ ले जाते हुए बच्चों के चेहरों पर छाई खुशी देखने लायक होती है। वे मुझे अपनी गोदी में बिठाते हैं, मुझसे बातें करते हैं। मैं आपको बता नहीं सकता कि उन बच्चों के बीच रहना मुझे कितना अच्छा लगता है। कोई बच्चा मुझे अपने साथ सुलाता है तो कोई अपने कमरे में सजा देता है। कई बच्चे तो मुझे अपने साथ पार्क भी ले जाते हैं। बस तब थोड़ा दुख होता है, जब मैं पुराना हो जाता हूँ, मेरे कपड़े फट जाते हैं, मेरा रंग खराब हो जाता है और वे मुझे कूड़े में फेंक देते हैं। लेकिन मैं इसी बात से खुश हो लेता हूँ कि जब उनके साथ था तो वे मेरा बहुत ख्याल रखते थे।

वैसे तो मैं जंगल का प्राणी हूँ और वहाँ बहुत मस्त होकर घूमता हूँ। लेकिन फिर मुझे एक खिलौने का रूप दे दिया गया। उसके बाद तो मैं दुनिया भर में बहुत ही लोकप्रिय हो गया और मुझे एक नया नाम मिला 'टेडी बियर।' मैं बताऊँ आपको मुझे टेडी बियर नाम कैसे मिला बहुत ही रोचक कहानी है।

अमेरिका के छब्बीसवें राष्ट्रपति थेयोडोर रूजवेल्ट का नाम तो अवश्य सुना होगा। वह एक बार मिसीसिपी गए थे। अपनी उस यात्रा के दौरान जब वह शिकार कर रहे थे तो उन्हें एक तड़पता घायल भालू पेड़ से बँधा दिखाई दिया। उन्होंने आदेश दिया कि उसका शिकार न किया जाए, क्योंकि घायल पशु का शिकार करना, शिकार के नियमों के खिलाफ है। बाद में उन्होंने भालू को मारने का आदेश दिया ताकि उसे दर्द से छुटकारा मिल सके। इस बात की हर जगह चर्चा हुई। कार्टूनिस्ट क्लिफोर्ड बेरीमेन ने इस

घटना पर वॉशिंगटन पोस्ट के लिए एक कार्टून बनाया। कार्टून में जो भालू उन्होंने बनाया था, वह लोगों को खूब पसंद आया। यह देख खिलौने का स्टोर चलाने वाले मॉरिस मिचटॉम ने भालू के रंग रूप का एक खिलौना बना दिया। राष्ट्रपति रूज़वेल्ट से इजाज़त लेकर इस खिलौने का नाम टेडी बियर रखा गया क्योंकि रूज़वेल्ट का उपनाम टेडी था। और तब से मैं बच्चों का दोस्त बन गया। पहला टेडी बियर म्यूजियम इंग्लैंड के पीटरफील्ड, हैंपियर में आज भी रखा हुआ है। मेरे नाम पर अमेरिका, कनाडा, जापान, जर्मनी, ब्रिटेन आदि देशों में टेडी बियर उत्सव भी मनाया जाता है।

खिलौनों के रूप में ही नहीं, मेरे असली रूप को भी सब पसंद करते हैं। एक जमाना था जब गली-गली में मेरा नाच देखने के लिए भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। मदारी मुझे नचाता था और मैं खूब मस्ती करता था। फिर यह चलन खत्म हो गया, लेकिन चिड़ियाघर में जब बच्चे मुझे देखकर ताली बजाते हैं तो मैं नाचने लगता हूँ। वहाँ मुझे सुरक्षा की दृष्टि से बाड़े के अंदर रहना पड़ता है, लेकिन जंगल में तो हम अपनी मनमर्जी से रहते हैं। वैसे मैं बहुत ही शर्मीला प्राणी हूँ। दिन के समय किसी गुफा या झाड़ी में सुस्ताता हूँ और सूरज ढलने के बाद खाने-पीने के लिए निकलता हूँ। सर्दियों का अधिकांश समय मैं जमीन में खोदे गए गड्ढों, माँद, गुफा या खोखले पेड़ों में सोकर बिताता हूँ।

मैं एक बड़े शरीर वाला पशु हूँ। मेरे हाथ-पैर मजबूत हैं और पूरे शरीर में बाल होते हैं। चाहे टेडी बियर के खिलौने के रूप में हूँ या जीवित प्राणी के रूप में, मैं इतना पसंद किया जाता हूँ कि मेरे ऊपर कहानियाँ और कविताएँ लिखी जाती हैं। कार्टून फिल्में बनती हैं और यही वजह है कि बच्चे मुझे देख डरते नहीं हैं, बल्कि ताली बजाकर कहते हैं 'नाच भालू नाच।' तब मैं शरमा जाता हूँ। पर सच कहूँ तो नाचने में मुझे भी बहुत मजा आता है।

सम्पर्क : दिल्ली
मो. 9810795705

अंजीम अंजुम

मैं हावड़ा ब्रिज हूँ

हर एक जन्म नवीनता का द्योतक है। एक उन्नति का सूचक है। नवीन उपलब्धियों की एक दृष्टि है। और विपुलता एवं आशाओं की सृष्टि है। सच मेरे जन्म को लेकर भी एक ऐसी अवधारणा तुम्हें मिलेगी। तुम मुझे जानते हो न, मैं हुगली नदी पर बना वही विख्यात केंटरलीवर पुल हूँ जिसका जन्म कोलकाता और हावड़ा को आपस में जोड़ने के लिए हुआ था। रास्ते को सुगम बनाने के लिए हुआ था। लेकिन मेरी कहानी बस इतनी सी ही नहीं है। मेरी कहानी मेरे जन्म से काफी समय पहले की है।

तुम्हें पता होगा पहले नदियों के एक किनारे से दूसरे किनारे पर जाने के लिए नावों का प्रयोग होता था। मेरे जन्म से पहले कोलकाता और हावड़ा के लोग आपस में नावों के माध्यम से हुगली नदी को पार किया करते थे। धीरे-धीरे लोगों की संख्या बढ़ने लगी। नावों की आवश्यकता भी अधिक हुई। नावें कम रहीं तो बंगाल सरकार ने सन् 1871 में हावड़ा ब्रिज अधिनियम बनाया। इसके तहत हुगली नदी को पार करने के लिए एक पुल का निर्माण कार्य करना आवश्यक बताया।

बस यहीं से शुरू होती है मेरे जन्म की कहानी। तब सन् 1874 में सर ब्रेडफोर्ड लेसली ने सर्वप्रथम पीपे के पुल का निर्माण करवाया। इस पुल के द्वारा दोनों शहरों को जोड़कर आना-जाना आसान हो गया। उसे बनाने में कुल 22 लाख की लागत आयी। यह पुल 1528 फीट लम्बा था और यह 62 फीट चौड़ा था। तब आवागमन यात्रियों के लिए काफी आसान हुआ। मुझे इस समय तक कोई नाम नहीं दिया गया था। लेकिन मेरे जन्म के साथ ही विकास की गति अब बढ़ने लगी थी। हावड़ा को 1906 में स्टेशन की सौगात मिली। इससे आने वाले लोगों की संख्या बढ़ी।

इस बढ़ती संख्या ने अब आवश्यक कर दिया कि एक और बड़े पुल का निर्माण हो। तब सन् 1936 में मेरे वर्तमान स्वरूप के निर्माण के लिए जर्मनी की एक कम्पनी ने सबसे कम लागत में पुल बनाने की जिम्मेदारी ली। लेकिन तब तक द्वितीय युद्ध के हालात बन चुके थे। अत: ब्रिटेन की क्लिवीलैण्ड ब्रिज एण्ड इंजिनियरिंग कम्पनी लिमिटेड को यह मौका मिला और तब सन् 1936 में मेरा निर्माण कार्य शुरू हुआ। मेरी इस अद्भुत संरचना को बैथवैट वर्न एण्ड जेसौफ कंस्ट्रक्शन कम्पनी ने तैयार किया था।

मुझे 2000 फीट की लम्बाई दी गई। 1500 फीट की दूरी पर दो पिलर बनाये गये। बस यहीं से मैं लोगों की आँखों में खास हो गया। तुम जानते हो मैं अन्य पुलों के समान बजरी सीमेण्ट की संरचना नहीं हूँ। मैं एक केंटरलीवर पुल हूँ। मुझे बनाने में केवल स्टील लगी थी। मेरे निर्माण में 26 हजार 500 टन

स्टील की आवश्यकता पड़ी। मेरे निर्माण में प्रयोग आयी अधिकतर स्टील भारत की टाटा कम्पनी ने ही उपलब्ध करवायी थी। मुझे आज खुशी होती है कि मेरा निर्माण बेशक विदेशी कम्पनियों द्वारा हुआ हो, लेकिन मुझमें समस्त तत्व अपने हिन्दुस्तानी हैं। आज मुझे स्वयं पर गर्व है कि मैं हिन्दुस्तानी तत्वों की अनूठी संरचना हूँ। आपको बता दूँ कि मुझे बनाने में 'टिसकोर्म' मिश्रधातु का उपयोग किया गया।

मेरा निर्माण कार्य सन् 1942 में पूरा हुआ। मेरे जन्म के समय द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका अति दुखदायी थी। मैंने इस विभीषिका को अपनी आँखों से देखा। द्वितीय विश्वयुद्ध की बमवारी को झेला। हाँ तुम इस पर यकीन नहीं करोगे, लेकिन जापानी जहाजों ने उस समय मुझे ध्वस्त करने के लिए बम गिराये। एक बम मेरे अति निकट गिरा था। मैं छोटा था। उस बम के धमाके से मैं सहम गया था। उस दिन मैंने लोगों की आँखों के डर को अपने अंदर पिया था। यह ईश्वरीय संयोग था कि मैं बच गया था।

तब तक मेरा कोई उपयोग नहीं था। कोई भी मेरे ऊपर से नहीं गुजरता था। तब इस युद्ध की विभीषिका को देखते हुए 3 फरवरी सन् 1943 में मुझे बिना किसी उद्घाटन के जनता के लिए खोल दिया गया। सही बात थी। इसके अलावा अंग्रेजी हुकूमत के पास कोई ओर चारा भी नहीं था। मैंने जहाँ द्वितीय विश्वयुद्ध में आँखें खोलीं, वहीं बचपन के शुरुआती दिनों को भारत के स्वाधीनता आंदोलन में काटा। मैंने गाँधी बाबा की लाठी की ठक-ठक को अपने ऊपर पाया। तो नेताजी सुभाष को खून देने वालों की चरण धूलि को अपने माथे पर लगाने का मुझे सौभाग्य मिला। नेहरू और सरदार पटेल को मैंने अनेक बार नमन किया। उनके चरणों को मैंने अपने माथे पर सँवारा। मैंने गुरुवर रवीन्द्रनाथ के गीतों को सुना तो बंकिम चंद्र चटर्जी के वंदेमातरम की स्वर लहरियों पर अपने हर बार कदमों को बढ़ाने का प्रयास किया।

मैं स्वाधीनता आन्दोलन 'करो या मरो' नारे का गवाही भी रहा। आजाद भारत के तिरंगे को मैंने जाने कितनी बार प्रणाम किया है। लेकिन मेरे जीवन में जितना यह सब था, उससे अधिक मैंने दुख भी भोगा। बंगाल के अकाल की विभीषिका को मैंने अपनी आँखों से देखा। लोगों को भूख से तड़पते और दम तोड़ते लोगों की लाशों को मैंने हुगली के तट पर चिताओं में समाते हुए देखा है। जाने कितनी आपदाओं और संकटों का मैं साक्षी रहा हूँ। इतना ही नहीं, कितने सुखद पलों को लोगों ने अपने में सँजोया है। तभी तो अनेक फिल्मकारों ने मुझे पसंद किया। सत्यजीत रे ने तो अनेक फिल्मों में मुझे दर्शाया है। रिचर्ड एटनबरो और मणिरत्नम को मेरे साथ एक अलग ही सुकून मिलता था।

सन् 1965 में मुझे एक अलग नाम मिला। प्रथम एशियाई नोबेल विजेता, कवि एवं बांग्ला साहित्य के प्रबुद्ध रचनाकार श्री गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के नाम पर मुझे रवीन्द्र सेतु नाम दिया गया। मुझे यह नाम बहुत भाया। लेकिन जनता की जुबान पर वही मेरा बचपन का प्यारा नाम हावड़ा ब्रिज ही चढ़ा रहा और वह आज भी उसी अंदाज से बोलते हैं।

आपको बता दूँ मेरा रूप सिर्फ दिखावे के लिए ही नहीं है। क्योंकि आवश्यकता व उपयोग की वस्तु को सभी अपना मानते हैं। आज मैं सबकी पसंद इसीलिए हूँ क्योंकि आज एक लाख से ज्यादा गाड़ियाँ एवं पाँच लाख पैदल यात्री रोजाना मुझ पर होकर गुजरते हैं। कुछ निरालापन भी मेरी संरचना में है। तुम्हें बता दूँ गर्मियों में मेरी लम्बाई तीन फीट तक बढ़ जाती है। आपको बड़ा ही आश्चर्य हो रहा होगा यह कैसे संभव है। यही तो विशेषता है मेरी।

एक बार एक छोटा जहाज भी मुझसे टकरा चुका है। यह बड़ा हादसा था। लेकिन 'जाको राखे साईयाँ मार सके न कोय'। हादसा टल ही गया। कुछ क्षति नहीं हुई। शायद इसीलिए मुझे 'स्टील बॉडी' कहते हैं। उस समय मेरी मरम्मत भी हुई।

यूँ तो सभी को सुंदर बनने की एक चाहत होती है। मेरी भी यह चाहत रही। और इस चाहत को सरकार ने जाना और मुझ पर एक बार पेंट भी करवाया गया। पता है मेरे शरीर को चमकाने के लिए पूरे 65 लाख रुपये का पेंट का खर्चा आया। तुम सभी को आश्चर्य भी होगा कि मुझको रंगीन करने के लिए 26500 लीटर पेंट भी खर्च हुआ। मुझको रंगीन रोशनी से सजाने के लिए लाईटें भी लगाने का निर्णय भी लिया जा रहा है। मुझे तो इस बात को सोच-सोच कर आश्चर्य हो रहा है कि इस रोशनी में नहाने के लिए मुझ पर कितना खर्चा होगा?

मेरे बारे में अनेक बातें भी प्रचलित हैं जो शायद आपने भी सुनी होंगी। मेरे बारे में कहा जाता है कि मेरी एक ऐसी चाबी थी जिससे मुझे आवश्यकता पड़ने पर दो भागों में खोल दिया जाता था। लेकिन मुझे तो कभी याद नहीं कि मैं इस तरह से कभी खोला गया या बंद किया गया हूँ। मुझ तो ये कोरी अफवाह ही लगती है।

आज की व्यस्त जिंदगी का भी मैं एक साक्षी रहा हूँ। लेकिन मुझे दुख होता है कि आज का इंसान लापरवाह हो चुका है। मेरे खम्भों पर पान की पीक थूकता है। इससे मेरे खम्भे गंदे व कमजोर होते जा रहे हैं।

आज कलकत्ता ने ही नहीं पूरे भारत ने मुझे आत्मसात किया है। मुझे अपना माना है। मुझे अपनी शान मानकर सम्मान दिया है। यह मेरे जीवन के लिए अकल्पनीय है। मैं आज स्वयं गौरव का अनुभव करता हूँ कि मैं आज गंगा माँ की पावन धारा का आचमन करता हूँ, हिमगिरी के उन्नत भाल को देख पाता हूँ, सच मैं आज भारत भू का एक अंश होकर भी सर्वांग हूँ। मुझे स्वयं पर आज गर्व है।

सम्पर्क : *मथुरा (उ.प्र.)*
मो. 7017328211

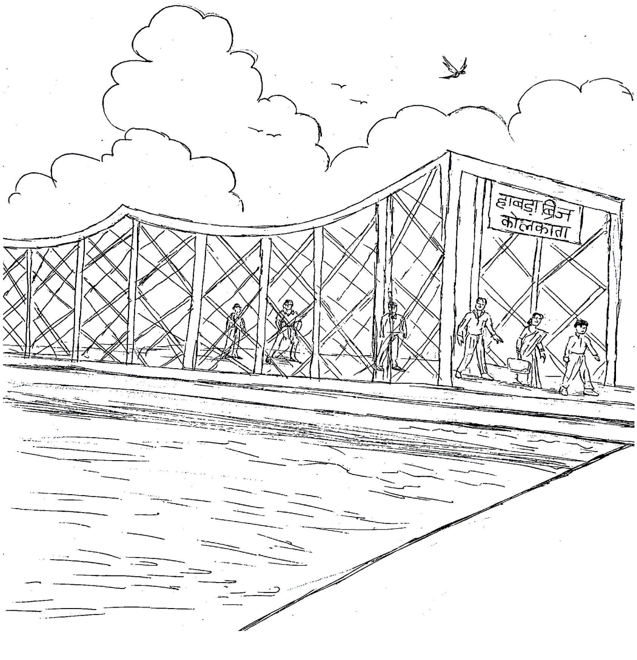

सुकीर्ति भटनागर

आत्म-कथा एक मकान की

यह उन दिनों की बात है, जब इस कॉलोनी में आबादी के नाम पर दो-तीन मकान ही बने थे। मैं आभारी हूँ अपने मालिक श्री सत्य प्रकाश जी का जिन्होंने इस वीरान पड़े स्थान पर मेरे निर्माण काल में अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करते हुए मुझे यह सुन्दर रूप प्रदान किया। तभी तो जो भी मुझे देखता, यही कहता 'वाह ! कितना आलीशान मकान है।'

आज भी उस दिन को याद कर मेरा मन बल्लियों उछलने लगता है जब गृहप्रवेश से पहले मुझे दुल्हन की भाँति सजाया गया था, पूजा की गई थी, बहुत-से अतिथि आये थे और प्रीतिभोज हुआ था। बस उसी दिन से मैं मकान न रह कर हँसता-चहकता घर हो गया था। धीरे-धीरे मेरा हर कमरा कीमती सामान से सजा दिया गया। रेशमी पर्दों के पीछे से झाँकता मेरा स्वरूप कितना मोहक दिखाई देता था, मैं बता नहीं सकता।

यह उत्तर दिशा वाला कमरा मेरे मालिक-मालकिन का है, जहाँ की खिड़की से गुलमोहर का पेड़ बहुत ही सुन्दर दिखाई देता है। और यह छोटा कमरा मालकिन का पूजा-घर है, जहाँ से हर समय धूप-अगरबत्ती की सुगन्ध आती रहती है। यह सामने वाला कमरा जो कभी खिलौनों से सजा रहता था, आहना, शायना और अतुल का, अरे लो, बच्चों की बात करते ही मुझे हँसी आने लगी है। दोनों बच्चियाँ तो कभी चैन से बैठती ही नहीं थीं, कभी मेरी दीवारों पर फूल-पत्तियाँ बनातीं, तो कभी कार्टून।

कितनी-कितनी गुदगुदी होती थी ना तब मुझे। उनका भाई अतुल भी कम नटखट नहीं था। कभी मेरी दीवारों पर गेंद मार-मार कर खेलता तो कभी स्कूल जाते समय जान-बूझ कर पानी की बोतल को झुलाते हुए चलता, जो मुझसे टकराती रहती। हाँ, उस समय मुझे हल्की-सी चोट तो लगती थी पर बुरा नहीं लगता था। जब भी चार-पाँच वर्ष के अंतराल में मेरा रंग-रूप फीका पड़ने लगता तो फिर से मेरे शरीर को नए रंगों के परिधान पहना कर मुझे सजाया जाता। उस समय सबका उत्साह देखते ही बनता था। रंगों के चयन की बात को लेकर सबमें नोक-झोंक होती। मैं मन-ही-मन प्रसन्न होता अपने प्रति उनके लगाव को देख कर। पर कई बार मेरे कमरों में कुछ ऐसे रंग करवा दिए जाते जो मुझे पसन्द नहीं आते थे। लेकिन हाँ, बड़ी बेटी आहना के विवाह के समय जिन इन्द्रधनुषी रंगों से मुझे सजाया गया वे मुझे बहुत अच्छे लगे और आज तक जाने कितनी बार मुझे उन्हीं शरबती रंगों से सराबोर किया गया। फलस्वरूप सभी जान-पहचान वालों के बीच मेरे ये रंग ही मेरी पहचान बन गए। ये फाटक के दोनों ओर लगे बड़े-बड़े ग्लोब भी उसी समय लगवाये गये थे जिनका प्रकाश अँधेरे में चाँदनी की तरह दूर-दूर तक फैला रहता है।

इन बीते वर्षों में जाने कितने मौसम आए और गए, और इस बीच मुझमें भी कई बदलाव आए। उस दिन की बात करते हुए कलेजा दर्द से फटने लगता है जब मेरी ऊपरी मंजिल पर दो कमरे बनवाने की बात सोची गई, ताकि बेटे अतुल के बच्चे एकांत में अपनी पढ़ाई कर सकें। इसके लिये जब ड्राइंगरूम के बाहर से सीढ़ियाँ बननी आरम्भ हुईं तो रोशनदानों में बने चिड़ियों के घोंसले टूट गए, वे घोंसले जिन में से फुदक-फुदक कर निकलते बच्चे मुझसे बातें करते थे, छोटी-छोटी उड़ान भरते कमरे के साथ लगे नीम के पेड़ पर जा बैठते थे। पर उस पेड़ को भी समूल नष्ट कर दिया गया क्योंकि उसकी हरी-भरी शाखाएँ सीढ़ियाँ बनने में बाधा डाल रही थीं। तब मैं कितना अकेलापन महसूस करने लगा था। ना चिड़ियों की चहचहाहट ही बची थी, ना ही गिलहरियों की उछल-कूद। कमरे में आती-जाती धूप और हवा प्रभावित हुई सो अलग। किन्तु मैं यह बात भली प्रकार समझता हूँ कि परिवार की आवश्यकताओं को देखते हुए मुझ में कुछ बदलाव लाने जरूरी हो गए थे। वैसे भी परिवार के अथाह प्यार के सामने मेरे सब कष्ट गौण हो जाते हैं।

समय के साथ-साथ अब तो मेरे आस-पास संगमरमर और कीमती टाइलों से सजे नए-नए आकार वाले बहुत-से मकान बन गए हैं, जिनके बीच घिरा मैं बहुत ही पुराने फैशन का दिखता हूँ। पर आधुनिक शैली से निर्मित मकानों की भव्यता से प्रभावित हो कर मेरे मालिक ने कभी भी मुझे छोड़ कर जाने की बात नहीं सोची और ना ही मेरे रूप को परिवर्तित करने की चेष्टा की। इसी बात का संतोष है मुझे कि मेरा और मेरे मालिक का आत्मीय सम्बन्ध आज भी यथावत् बना हुआ है। इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है मेरे लिए। मैं भी एक बेटे की तरह उनका ध्यान रखने की चेष्टा करता हूँ। जिस प्रकार बालपन में बच्चे मेरी दीवारों का सहारा लेकर चलते थे, आज इस बुढ़ापे में मेरे मालिक-मालकिन को भी उसी प्रकार के सहारे की आवश्यकता है, जो मैं उन्हें सहर्ष प्रदान कर रहा हूँ।

सम्पर्क : पटियाला (पंजाब)
मो. 814673344

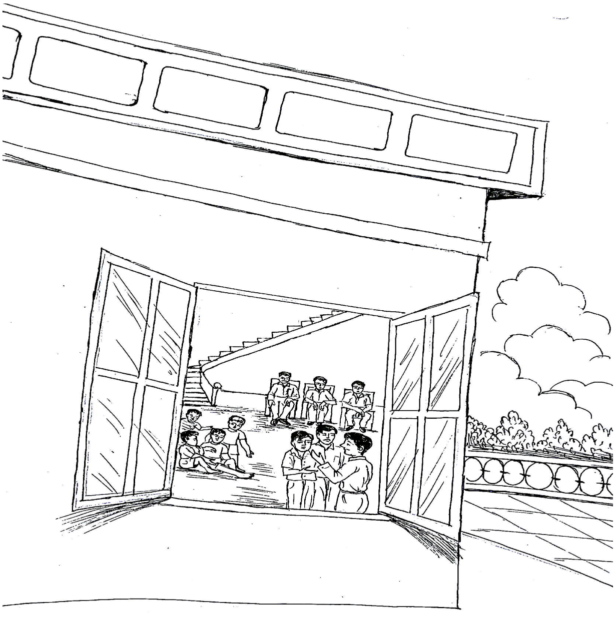

डॉ. शील कौशिक

मैं भी घर का हिस्सा हूँ

यूँ तो मैं भी ड्राइंग रूम, डाइनिंग रूम, बैडरूम, रसोई की भाँति घर का हिस्सा हूँ। मेरा जन्म भी इन सबकी भाँति नक्शा बनाने के साथ ही हो गया था। बच्चो! मेरा नाम है कबाड़खाना। मुझे लोग 'अटाला' कहकर भी बुलाते हैं। सुनकर चौंक गए न? भला मेरी भी आत्मकथा हो सकती है क्या? हमेशा ऐसा ही होता है मेरे साथ। कबाड़ख़ाना नाम सुनते ही सब उपेक्षा से देखते हैं। पूरे घर में रंग-रोगन होने पर, बचे हुए रंग से मेरी दीवारों को पोता जाता है।

मैं भी जिन चीजों की घर में कदर नहीं होती थी, उन्हें प्यार से सँभाल कर रखता था। पर मुझे कई बार तो उनकी हालत देख कर रोना आता है। जब तक वे सुंदर व उपयोगी थे... घर की शोभा थे। उन्हें सँभालकर रखा गया। जर्जर होने पर उन्हें मेरे हवाले कर दिया गया। एक पते की बात बताऊँ जीवित हो या निर्जीव सभी का जीवन और अंत निश्चित है। मेरे दोस्तों इसलिए हमें अहंकार नहीं करना चाहिए।

कोई समझे या न समझे, हूँ तो मैं भी घर के अन्य कमरों जैसा ही। पता भी है, दादा-परदादाओं की अनगिनत वस्तुएँ मेरे पास धरोहर के रूप में सुरक्षित हैं। उनकी पुरानी घड़ियाँ, रेडियो, टेप रिकॉर्डर, हुक्का, बड़े-बड़े बर्तन, टोकनी, देगचियाँ, परात, हाथ की चक्की आदि को मैं सहेजे हूँ। कभी-कभी तो मुझे अपने ऊपर गर्व होता है। मैं पीढ़ियों तक का लेखा-जोखा, घर के सदस्यों की कितनी ही खट्टी-मीठी यादें समेटे हूँ। इन्हें देखकर कभी-कभी बंटी की दादी की आँखें नम हो जाती हैं, तो कभी खुशी से छलक जाती हैं। कभी-कभी मेरा भी मन करता है कि मैं भी अन्य कमरों की तरह घर का जीवंत हिस्सा बनूँ। ड्राइंग रूम की भाँति मैं भी कीमती, सुंदर सामान से सजा रहूँ... मेहमानों की हँसी-ठठ्ठा के संग खिलखिलाऊँ या फिर डाइनिंग रूम की तरह स्वादिष्ट व्यंजनों की सुगंध से सराबोर रहूँ...बैडरूम की तरह बंटी तथा घर के अन्य सदस्यों को अपनी गोद में सुला सकूँ। बंटी के साथ दादी की कहानी मैं भी सुन लूँ।

उस दिन टीवी खराब हुआ तो मालकिन ने झट से कह दिया, 'क्या करेंगे अब इसे ठीक करवा कर? हमें वैसे भी नए फीचर वाला 56 इंची एलईडी लेना है, इसे कबाड़ घर में पटक दो।'

कई महीनों तक मेरी ओर कोई झाँक कर भी नहीं देखता। कोई झाड़-पौंछ नहीं होती। कभी-कभार कोई कबाड़ वाला गली में आवाज लगाता है, तब मालिक अखबारों की रद्दी बेचने के लिए मुझे खोलता है। तब मुझे कुछ चैन मिलता है। विशेष रूप से जब सोमू कबाड़ी वाली गाड़ी का भोंपू सुर में गाता

है– 'घर में पड़ा कबाड़ निकालो.....मच्छरों से छुटकारा पा लो......पैसे कमा लो, जेब में डालो...आ गया सोमू कबाड़ वाला... आ गया...' तब मैं बहुत खुश होता हूँ, बिलकुल वैसे ही जैसे बंटी इम्तिहान का बोझ सिर से उतरने पर खुश होता है। वह मेरा भी कुछ न कुछ बोझ कम कर देता है। वह मुझे मेरा मित्र प्रतीत होता है। बंटी तुम्हारी परीक्षा का तो फिर भी अंत है, परंतु मेरी परीक्षा कभी खत्म नहीं होती। ठसाठस सामान से भरे होने के कारण मेरा साँस लेना भी दुभर हो जाता है। मैं बीमार हो जाता हूँ। ऐसे में, मैं चीखता-चिल्लाता हूँ। मैं अपनी व्यथा किसे सुनाऊँ? किसी के पास न तो समय है और न ही मेरे प्रति दयाभाव। मैं चाहता हूँ जैसे घर के अन्य कमरों की प्रतिदिन देखभाल की जाती है... घर के हर सदस्य के शरीर की वार्षिक जाँच कराई जाती है... ऐसे ही महीने में एक बार मेरी भी जाँच अवश्य होनी चाहिए।

फिर भी मैं सोचता हूँ कि मैं इनके लिए कितना उपयोगी हूँ। मेरा हृदय कितना विशाल है। वरना तो सारा घर अस्त-व्यस्त व बदसूरत हो जाए, हर जगह अनुपयोगी सामान बिखरा रहे। घर के सारे टूटे-फूटे नकारा सामान जैसे ड्राइंग रूम का टूटा सोफा, डाइनिंग रूम की टूटी कुर्सियाँ, बैडरूम का पुराना टीवी, कंप्यूटर व अन्य इलेक्ट्रॉनिक सामान, रसोईघर के पुराने टूटे-फूटे बर्तन, कुकर... बंटी के पुराने खिलौने आदि से उत्पन्न नकारात्मकता को मैं अपने तक सीमित रखता हूँ। बहुत से लोगों को पता नहीं है कि अनुपयोगी निर्जीव वस्तु की अपनी नकारात्मक ऊर्जा होती है, जिसके कारण घर के सदस्य मानसिक परेशानियाँ झेलते हैं... लक्ष्मी का आगमन रुक जाता है और इस तरह 'कबाड़ कर देता है, जीवन का कबाड़ा'।

कई लोग इस नाकारा सामान को छत पर खुले में फेंक देते हैं, जिससे यह डेंगू, मलेरिया के मच्छरों का प्रजनन स्थान भी बन जाता है। वास्तुशास्त्र के हिसाब से मेरा स्थान दक्षिण-पश्चिमी निश्चित किया हुआ है। समझदार लोग मुझे इसी कोने में ही स्थापित कर कबाड़ को व्यवस्थित रखते हैं।

बच्चों, यह सत्य है कि जिस दिन कबाड़ी घर आता है मेरे लिए वह जश्न का दिन होता है। विशेष रूप से दिवाली से पूर्व घर की सफाई की जाती है। तब मेरी भी सुध ली जाती है। उस दिन जब मेमसाहब ने बंटी की पुरानी साइकिल घर में काम करने वाली महरी की लड़की को दी। उसका चेहरा फूल-सा खिल उठा। उसे प्रसन्न देखकर मैं भी खुश हुआ था।

एक मजेदार किस्सा सुनाऊँ बच्चो! एक बार घर में चोर घुस आए। चोर सभी कमरों को खँगाल रहे थे। मेरे आगे द्वार पर ताला न लगा देख फटाफट मुझे खोला गया। द्वार के साथ खचाखच सामान सटा पड़ा था। जैसे ही दरवाजा खुला, भड़भड़ा कर कुछ सामान लुढ़क कर नीचे फर्श पर गिरा और कुछ चोर के ऊपर। वह उई ई ई ई करके चिल्लाया। आवाज सुनकर घरवाले जाग गए और चोरों को पकड़ कर पुलिस के हवाले कर दिया गया। उस दिन सब हैरान थे कि मैंने चोरों को पकड़वा दिया। अपनी प्रशंसा सुनकर उस दिन मैं अपनी ही पीठ ठोकने लगा।

बच्चों! मुझे इस बात का संतोष है कि चाहे मेरा रूप, आकार, रंग कैसा भी हो, घर के अन्य कमरों की भाँति मेरी उपयोगिता सदा बनी रहती है।

सम्पर्क : *सिरसा (हरियाणा)*
मो. 9416847107

गुडविन मसीह

पुस्तकालय की आत्मकथा

''मेरे प्यारे-प्यारे साथियो! मैं तुम सबको अपना दोस्त बनाना चाहती हूँ। बनोगे मेरे दोस्त? अरे, तुम सब मुझे ऐसे क्यों देख रहे हो? मैं सचमुच तुम सबसे दोस्ती करना चाहती हूँ, प्लीज, मेरे दोस्त बन जाओ न। सुनो, मुझसे दोस्ती करके तुम सबको बहुत मजा आयेगा। मेरे पास तुम्हारे लिए ढेर सारी प्यारी-प्यारी, मजेदार, रोचक, मनोरंजक, ज्ञानवर्धक किताबें हैं, जिनमें राजा-रानी की, दादा-दादी और नाना-नानी की, परियों की, पेड़-पौधों की, बाग-बगीचों की, खेत-खलिहानों की, फूलों की, तितलियों की, भँवरों की, पशु-पक्षियों की, नदियों की, पहाड़ों की, और बादलों की रोचक, मनोरंजक और दिल को छू लेने वाली मजेदार कहानियाँ हैं। सिर्फ कहानियाँ ही नहीं, तुम सबके खेलने के लिए बहुत सारे वीडियो गेम्स हैं, देखने और सुनने के लिए बच्चों के नाटक और कार्टून्स फिल्म हैं। मैं सच कह रही हूँ मुझसे दोस्ती करके तुम सबको बहुत मजा आयेगा। उन किताबों को पढ़कर तुम्हारा ज्ञान ही नहीं, विज्ञान की नॉलेज भी बढ़ेगी। ...क्या कहा, मैं तुम सबको अपना परिचय दूँ तभी तुम मुझसे दोस्ती करोगे? कोई बात नहीं, मैं तुम्हें अपना परिचय देती हूँ। साथियो, मैं लाइब्रेरी हूँ। वही लाइब्रेरी, जहाँ तुम सब एक साथ, एक ही कमरे में बैठकर, सारी दुनिया की सैर कर सकते हो।

मैं तुम्हें सारी दुनिया से मिलवा सकती हूँ। मैं तुम्हें बता सकती हूँ कि पूरी दुनिया में कितने देश हैं, कितने राज्य हैं। उन देशों और राज्यों की क्या-क्या बोली-भाषा है। कैसी संस्कृति है, कैसा रहन-सहन, कैसा खान-पान है, किस देश की कैसी वेश-भूषा है। किस देश का मौसम कैसा रहता है, कहाँ अधिक जाड़ा पड़ता है, कहाँ अधिक गर्मी पड़ती है? कहाँ अधिक बर्फ पड़ती है और किस देश में अधिक बारिश होती है? किस देश की जलवायु कैसी है और वहाँ कौन-कौन-सी फसलें उगाई जाती हैं? वो भी मुफ्त में, बस मेरा सदस्य बनकर। दोस्तो, तुम जो मनचाही किताबें पैसों से नहीं खरीद सकते हो, वो मेरे सदस्य बनकर मुफ्त में पढ़ सकते हो।

''दोस्तो, मुझे ज्यादातर लोग लाइब्रेरी के नाम से जानते हैं, पर यह मेरा अंग्रेजी नाम है, हिन्दी में तो मुझे पुस्तकालय कहते हैं। यानी वो स्थान, जहाँ मेरे कई पाठक मित्र एक साथ बैठकर दुनिया भर की पुस्तकों, समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं को अपनी रुचि अनुरूप पढ़ सकते हैं।

मैं आपको बता दूँ कि मेरा निर्माण ऐसी जगह किया जाता है, जहाँ, ध्वनि प्रदूषण न के बराबर होता है। अर्थात् शहर के किसी ऐसे क्षेत्र में जहाँ मोटर-वाहनों और रेल गाड़ियों आदि का आवागमन का

कोलाहल न के बराबर होता है। मेरा निर्माण बड़े क्षेत्रफल में बहुत ही सुन्दर ढंग से करवाया जाता है। मुझे और मेरी दीवारों को आधुनिक रंग-रोगन और साज-सज्जा से सुसज्जित करवाया जाता है। मेरे चारों तरफ बड़े-बड़े हवादार और रोशनीदार कमरे बनवाये जाते हैं, जिनमें बड़ी-बड़ी खिड़कियाँ लगवायी जाती हैं। कमरों के बीचों-बीच एक बड़ा हॉल होता है, जिसके बीचों-बीच लम्बी बड़ी-सी मजबूत मेज बिछाई जाती है। मेज के चारों तरफ पाठकों के बैठने के लिए बहुत सारी कुर्सियाँ या फिर लम्बी-लम्बी बैंचें बिछाई जाती हैं। जिन पर कई दर्जन लोग एक साथ बैठ सकते हैं।

मेरे कमरों के अन्दर बड़ी-बड़ी रैकदार अलमारियाँ खड़ी की जाती हैं, जिनके अन्दर अलग-अलग विषयों की किताबें रखी जाती हैं। सभी अलमारियों के दरवाजों को शीशे का बनाया जाता है, ताकि अन्दर रखी किताबों के नाम और विषय पाठकों को आसानी से दिखाई दे जायें और वह उन्हें पढ़ने के लिए आसानी से निकाल सकें।

मेरे अन्दर का वातावरण बहुत ही शांत, स्वच्छ और प्रदूषणरहित रखा जाता है। पर्याप्त रोशनी और हवा के लिए बिजली के आधुनिक बल्ब और पंखे (कहीं-कहीं ए.सी.) लगे होते हैं। मेरे अन्दर की दीवारों पर चरित्र निर्माण की सूक्तियाँ, स्लोगन लिखे जाते हैं, तैल चित्र, महापुरुषों के चित्र, लैण्ड स्कैप और प्रकृति के सुन्दर व आकर्षक चित्र टाँगे जाते हैं, ताकि मेरे आस-पास का वातावरण सुन्दर बना रहे।

मेरी इमारत के बाहरी ढाँचे को भी बहुत खूबसूरत ढंग से बनवाया जाता है। मेरी इमारत के चारों तरफ हरियाली का विशेष ध्यान रखा जाता है। तरह-तरह के फूलों वाले पेड़-पौधे लगवाये जाते हैं ताकि मेरे आस-पास का वातावरण वैज्ञानिक दृष्टि से सुन्दर, स्वच्छ और स्वस्थ बना रहे। दोस्तो, समय के अनुसार मेरा स्वरूप भी बदलता जा रहा है। मेरा बहुत तेजी से डिजिटलीकरण हो रहा है। मैं अब ऑनलाइन भी उपलब्ध रहती हूँ। कहीं-कहीं तो मेरा मोबाइलीकरण भी हो गया है, जिसे चलती-फिरती लाइब्रेरी कहा जाता है।

मैं तुम सबको भारत की राजधानी दिल्ली में मेरा जन्म 27 अक्टूबर, सन् 1951 में हुआ, जिसका उद्घाटन भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने किया था और मेरा नाम दिल्ली सार्वजनिक पुस्तकालय रखा गया था। दिल्ली में मेरे अन्दर कई लाख ग्रंथ समाये हुए हैं, जिनमें मुख्य रूप से नवीनतम विश्वकोश, गैजेट, शब्द कोश और संदर्भ साहित्य के अतिरिक्त दुनिया भर की पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ, बाल साहित्य की पुस्तकें हैं। वहाँ पर बाल पाठकों के लिए अलग से बाल पुस्तकालय विभाग हैं। पुस्तकों के अलावा इस विभाग में तरह-तरह के खिलौने, लकड़ी के अक्षर और चित्रादि उपलब्ध हैं। समय-समय पर तुम बच्चों के सर्वांगीण विकास हेतु, बाल फिल्म प्रदर्शनी, वाद-विवाद प्रतियोगिता, नाटक एवं निबन्ध प्रतियोगिताएँ भी आयोजित की जाती हैं।

कहो दोस्तो, मेरे बारे में जानकर तुम सबको कैसा लगा? अच्छा लगा न! तो फिर देर किस बात की है, कर लो मुझसे दोस्ती, बन जाओ मेरे दोस्त। क्या कहा, आज से तुम सब मेरे दोस्त हो गये? अरे, वाह, तुम सबकी दोस्त बनकर मैं भी आज बहुत खुश हूँ।''

सम्पर्क : *बरेली (यू.पी.)*

मो. 9897133577, 6398322391

रवि अतरोलिया

तिरंगे की कहानी

मैं आपका अपना राष्ट्रध्वज बोल रहा हूँ। मेरे बारे में आपको सम्पूर्ण जानकारी नहीं दी गई? क्यों नहीं दी गई? कौन जिम्मेदार है? यह प्रश्न आज औचित्यहीन है। अत: अपने बारे में आप सभी को बताने के लिए अब मैं स्वयं आपके सामने आया हूँ। गुलामी की काल स्याह रात के अंतिम प्रहर जब स्वतंत्रता के सूर्य के निकलने का संकेत प्रभात बेला ने दिया, उस दिन 22 जुलाई 1947 को भारत की संविधान सभा कक्ष में पं. जवाहरलाल नेहरू ने मुझे विश्व एवं भारत के नागरिकों के सामने प्रस्तुत किया, यह मेरा जन्म पल था। मुझे भारत का राष्ट्रध्वज स्वीकार कर सम्मान दिया। इस अवसर पर पं. नेहरू ने बड़ा मार्मिक हृदयस्पर्शी भाषण भी दिया तथा माननीय सदस्यों के समक्ष मेरे दो स्वरूप, एक रेशमी खादी व दूसरा सूती खादी से बना ध्वज प्रस्तुत किया। सभी ने करतल ध्वनि के साथ मुझे स्वतंत्र भारत के राष्ट्रध्वज के रूप में स्वीकार किया।

आजादी के दीवानों के बलिदान व त्याग की लालिमा मेरी रगों में बसी है, इन्हीं दीवानों के कारण मेरा जन्म संभव हुआ। 14 अगस्त 1947 की रात 10.45 पर कांउसिल हाउस के सेन्ट्रल हाल में श्रीमती सुचेता कृपलानी के नेतृत्व में वंदे मातरम् के गायन से कार्यक्रम शुरू हुआ। संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद व पं. जवाहरलाल नेहरू के भाषण हुए, इसके पश्चात् श्रीमती हंसाबेन मेहता द्वारा अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्रप्रसाद को मेरा सिल्क वाला स्वरूप सौंपा गया और श्रीमती हंसाबेन मेहता ने कहा कि- 'आजाद भारत में पहला राष्ट्रध्वज जो इस सदन में फहराया जायेगा, वह भारतीय महिलाओं की ओर से इस राष्ट्र को एक उपहार है।' सभी लोगों के समक्ष मेरा यह पहला प्रदर्शन था। 'सारे जहाँ से अच्छा व जन-गण-मन' के सामूहिक गान के साथ यह समारोह सम्पन्न हुआ।

23 जून 1947 तो मुझे आकार देने के लिए एक अस्थाई समिति का गठन हुआ था, जिसके अध्यक्ष थे डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा समिति में उनके साथ थे- अब्दुलकलाम आजाद, श्री के.एस. पाणीकर, श्रीमती सरोजिनी नायडु, श्री के.एम. मुंशी, श्री राजगोपालाचारी और डॉ. बी.आर. अंबेडकर। विस्तृत विचार विमर्श के बाद मेरे बारे में निर्णय लिया गया और संविधान सभा में स्वीकृति प्राप्ति हेतु पं. जवाहरलाल नेहरू को अधिकृत किया, जिन्होंने 22 जुलाई 1947 को सभी की स्वीकृति प्राप्त की और मेरा जन्म हुआ।

पं. नेहरू ने जो मेरे मानक बताये जिन्हें आपको जानना आवश्यक हैं (जिसका उल्लेख भारतीय मानक संस्थान के क्रमांक आई.एस.आई. 1-1959, संशोधन 1968 में किया गया।) उन्होंने कहा भारत का राष्ट्रध्वज समतल तिरंगा होगा, यह आयताकार होकर इसकी लंबाई-चौड़ाई का अनुपात 2:3 होगा, तीन समान रंगों की आड़ी पट्टिका होगी। सबसे ऊपर केसरिया, मध्य में सफेद तथा नीचे हरे रंग की

पट्टी होगी, सफेद रंग की पट्टी पर मध्य में सारनाथ स्थित अशोक स्तंभ का चौबीस शलाकाओं वाला चक्र होगा, जिसका व्यास सफेद रंग की पट्टी की चौड़ाई के बराबर होगा।

मेरे (राष्ट्रध्वज) निर्माण में जो वस्त्र उपयोग में लाया जाएगा, वह खादी का होगा तथा यह सूती, ऊनी या रेशमी भी हो सकता है, लेकिन शर्त यह होगी कि राष्ट्रध्वज का सूत हाथ से काता जायेगा एवं हाथ से बुना जायेगा। इसमें हथकरघा सम्मिलित है। सिलाई के लिए खादी के धागों का ही प्रयोग होगा। आपको बताऊँ मेरे कपड़े का निर्माण स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के एक समूह द्वारा पूरे देश में एकमात्र उत्तरी कर्नाटक जिला धारावाड़ के गरम नाम गाँव जो बैंगलुरू-पूना रोड पर स्थित है किया जाता है। इसकी स्थापना 1954 में हुई। नियमानुसार मेरे (राष्ट्रध्वज) खादी के एक वर्ग फीट कपड़े का वजन 205 ग्राम होना चाहिये। हाथ से बनी खादी, जिसका प्रयोग मेरे (राष्ट्रध्वज) निर्माण के लिये होता है, वह यही केन्द्र है। परन्तु अब राष्ट्र ध्वजों का निर्माण क्रमशः अर्डीनेंश क्योरिंग फेक्ट्री, शाहजहाँपुर, खादी ग्रामोद्योग आयोग मुम्बई एवं खादी ग्रामोद्योग, दिल्ली में होने लगा है, तथा निजी निर्माताओं द्वारा भी राष्ट्र ध्वज निर्माण पर कोई प्रतिबंध नहीं है, लेकिन राष्ट्रध्वज के गौरव व गरिमा को दृष्टिगत रखते हुए यह आवश्यक है, कि केवल आई.एस.आई. (भारतीय मानक संस्थान) की मुहर लगी हो।

मेरे (राष्ट्रध्वज के) रंगों का अर्थ स्पष्ट किया कि-'केसरिया रंग साहस और बलिदान का, सफेद रंग सत्य और शांति का तथा हरा रंग श्रद्धा व समृद्धि का प्रतीक होगा तथा चौबीस शलाकाओं वाला नीला चक्र 24 घंटे सतत् प्रगति तथा प्रगति भी ऐसी कि नीला अनन्त विशाल आकाश एवं नीला अथाह गहरा सागर।'

आपको लगता है कि आप भी अपने घरों व दुकानों पर राष्ट्रध्वज वर्षभर फहराएँ, लेकिन जब तक मेरे मान-सम्मान सहित फहराने का ज्ञान प्रत्येक नागरिक को न हो जाए, तब तक आपको यह छूट कैसे दी जाए? अब आपको वैधानिक रूप से 365 दिन (वर्षभर) ससम्मान ध्वजारोहण का अधिकार फरवरी 2002 से प्राप्त हो गया है। वर्ष भर न सही आप निम्न तिथियों पर मेरा ध्वजारोहण सूर्योदय के समय करके, सूर्यास्त के समय ससम्मान उतार सकते हैं, किन्तु मोटर-कारों पर साधारण नागरिक को राष्ट्रीय ध्वज फहराने पर प्रतिबंध है।

मेरे प्यारे भारतवासियों!

आपको ऐसी बात बताने जा रहा हूँ, जिससे मैं तो व्यथित हूँ ही, आपके लिये भी यह बात हृदयघाती होगी। आपको मैंने बताया था कि 22 जुलाई 1947 को पं. जवाहरलाल नेहरू ने संविधान सभा में मेरे दो स्वरूप क्रमशः सूती खादी एवं सिल्क को लेकर गये थे तथा मुझे अंगीकार किया था। 14 अगस्त 1947 को रात्रि में श्रीमती हंसाबेन मेहता ने मुझे फहराने हेतु तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. प्रसाद को सौंपा था और वहीं सिल्क का ध्वज 16 अगस्त 1947 को सुबह 8.30 बजे लाल किले से भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा ध्वजारोहण किया गया था।

इस मायने से मेरा वह स्वरूप ऐतिहासिक बन गया था, जिससे हर भारतवासी स्मरण स्वरूप बार-बार देखने की कामना रखते होंगे, किन्तु दुःख की बात है कि तत्कालीन लोगों द्वारा मेरे स्वरूप को कहीं रखकर भुला दिया गया और स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि मेरा वह स्वरूप (ऐतिहासिक राष्ट्रध्वज) कहाँ है? किसी को पता नहीं और न ही मुझे खोजने में तत्परता या रुचि दिखाई जा रही है। मेरी आपसे प्रार्थना है कि 16 अगस्त 1947 को लाल किले से फहराए राष्ट्रध्वज को खोजें।

डॉ. गिरीशदत्त शर्मा

कहानी राष्ट्रीय ध्वज की

संसार में प्रत्येक देश अपनी पहचान बनाने स्वाभिमान रखने और अपना अस्तिव कायम रखने के लिए अपनी सर्वोत्तम, सुन्दर उपयोगी सबल, शक्तिशाली वस्तु को राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करता रहा है जिससे उसका सम्मान, गरिमा और सुरक्षा बनाए रखने के साथ राष्ट्र में एकता और समभाव बना रहे। मैं भी आपके देश के राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में एक ध्वज हूँ।

मेरा अस्तित्व प्राचीन काल से ही रहा है परन्तु समय परिस्थिति, प्रशासन व्यवस्था आदि के कारण मेरा स्वरूप बदलता रहा है। भगवान राम के काल में मैं केसरिया रंग का तिकोने आकार का था। महाभारत काल में भी मेरा रंग और आकार यही था परन्तु मेरे हृदय पटल पर पवनपुत्र हनुमान जी का चित्र अंकित था। समय के साथ-साथ शासन व्यवस्था बदली तो मेरा स्वरूप भी बदल गया। मुगल शासकों ने मेरा भगवा रंग हटाकर हरा रंग अपनाया और उस पर चाँद-सितारे अंकित कर दिए। जब यहाँ अंग्रेज आए उन्होंने मुझे एक नए यूनियन जैक के रूप में परिवर्तित कर दिया। लगातार विदेशी शासन व्यवस्था से तंग आकर आजादी के सिपाही अपने एक स्वतंत्र ध्वज की कल्पना कर त्याग, बलिदान और वीरता के प्रतीक मुझे भगवा रंग में फिर से प्रतिष्ठित करने का प्रयास करते रहे।

इसी के परिणाम स्वरूप सबसे पहले 1904 में कोलकाता के ग्रीन पार्क में जब बंग भंग विरोध का आंदोलन चल रहा था उस समय पुन: शचीन्द्र बोस द्वारा मेरा रूप बदल दिया गया और मुझे भगवा, पीले और हरे रंग की तीन आड़ी पट्टियों में संयोजित कर सभा में फहराया गया। इनमें भगवा पट्टी में वन्दे मातरम् शब्द अंकित था। बताया जाता है कि उस समय लाल, पीली और हरी संयोजित पट्टियों के रूप में मुझे केवल पेरिस और बर्लिन में ही फहराया गया।

22 अगस्त 1904 को वीर कामा जी ने वीर सावरकर जी तथा श्याम जी कृष्ण वर्मा के साथ मिलकर जर्मनी में मुझे एक नए रूप में ही प्रस्तुत किया। इसमें हरा भगवा और लाल केवल तीन रंग की आड़ी पट्टियों का संयोजन था। उसमें हरी पट्टी मुस्लिम सम्प्रदाय के लिए तथा उस पर अंकित आठ कमल ब्रिटिश इण्डिया प्रांतों के प्रतीक थे। मध्य में भगवा पट्टी पर वन्दे मातरम् तथा नीचे की लाल पट्टी पर बाँए कोने में चन्द्रमा तथा दाँयी ओर सूर्य अंकित किया गया था। विदेशी धरती पर यह भारतीय झण्डे के रूप में फहराया जाने का मेरा पहला रूप था। इसी समय मैडम कामा ने भी मुझे कुछ परिवर्तित रूप में प्रस्तुत किया। उपर्युक्त तथा मैडम द्वारा प्रस्तुत मेरे रूप में केवल इतना अन्तर था कि मैडम ने पुष्पों के स्थान पर सात तारों को अंकिता किया जो भारतीय सप्त ऋषियों के प्रतीक रूप में थे।

इस समय राष्ट्रीय आन्दोलन एक निश्चित आकार ले चुका था जिसके अन्तर्गत स्वतंत्रता प्रेमी लोकमान्य तिलक, डॉ. एनिबेसेंट ने सन 1917 में होम रूल (अपना शासन) की घोषणा की और इस अधिवेशन में मुझे एक नए स्वरूप में प्रस्तुत किया। इनमें पाँच पट्टियाँ लाल रंग में तथा चार पट्टियाँ हरे रंग में

आड़े रूप में प्रस्तुत करते हुए इसके बीच में सात तारे सप्तऋषियों के प्रतीक के रूप में दर्शाए गए। इसके बाएँ कोने पर यूनियन जैक तथा दाँए कोने पर चाँद सितारे अंकित किए गए। परन्तु मुझ पर यूनियन जैक अंकित होने पर वाद विवाद की प्रतिक्रिया हुई क्योंकि लोगों को राजनीतिक रूप से यह स्वीकार्य नहीं था।

महात्मा गाँधी इस समय तक अफ्रीका से भारत आ चुके थे। वहाँ उन्होंने भारतीयों के साथ जो दुर्व्यवहार देखा उसके विरोध में अंहिसा के आन्दोलनात्मक रूप को जीवन में चरितार्थ करने लगे थे। अत: सन 1921 में बेजवाड़ा (वर्तमान विजयवाड़ा) में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति का एक महा सम्मेलन आयोजित हुआ। इसमें आन्ध्र प्रदेश के एक युवक ने केवल लाल और हरे रंग-रंग की कुल दो पट्टियों को संयोजित कर मेरे नए रूप में महात्मा जी के सम्मुख प्रस्तुत किया। गाँधी जी ने इसमें लाल और हरे रंग की पट्टियों को दो बड़े सम्प्रदायों का प्रतीक मानते हुए श्वेत रंग की तीसरी पट्टी जोड़कर उस पर प्रगति सूचक चरखा चिन्ह जोड़ने का सुझाव दिया। तत्पश्चात् सुझाव के अनुरूप सफेद रंग की पट्टी सबसे ऊपर रखी गई। परन्तु 1931 में आयोजित अधिवेशन में इस पर काफी विवाद हुआ और इसे अमान्य घोषित कर दिया गया। उसी समय कराची में अखिल भारतीय कांग्रेस मिति में एक ऐसा ध्वज बनाने का प्रस्ताव पारित किया गया जो सभी सम्प्रदायों को मान्य हो। इसके लिए एक समिति का गठन हुआ जिसमें समस्त सम्प्रदायों की भावनाओं को ध्यान रखते हुए मुझे नए रूप में प्रदर्शित किया। इसमें तय हुआ कि मेरा स्वरूप केवल केसरिया रंग का हो जिसके ऊपर बाँए कोने में लाल रंग का चरखा बना हो। परन्तु लोगों को मेरा यह रूप भी पसन्द नहीं आया और मुझे अमान्य घोषित कर दिया।

इसी वर्ष अखिल भारतीय कांग्रेस समिति ने एक अधिवेशन में मेरे बारे में एक प्रस्ताव पारित कराते हुए कहा कि मेरे में तीनों रंगों की पट्टियाँ पूर्ववत ही रहें परन्तु उनमें कोई साम्प्रदायिक अर्थ का प्रतीक न हो। इस प्रस्ताव के अनुसार ध्वज में भगवा रंग साहस और बलिदान, श्वेत रंग सत्य और शान्ति तथा हरा रंग विश्वास और समृद्धि का सूचक हो। इसके मध्य में चरखा बना हो जो आर्थिक और औद्योगिक समृद्धि का प्रतीक है।

स्वतंत्रता आन्दोलन के गर्म दल का नेतृत्व नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के हाथों में था। उन्होंने भी मुझे अपनी भावना और आकांक्षा के अनुरूप मेरे रूप में कुछ परिवर्तन करते हुए मणिपुर स्थान पर फहराया। उन्होंने मेरे ऊपर आजाद हिन्द लिख कर चरखे के स्थान पर दहाड़ता हुआ शेर प्रदर्शित किया। परन्तु गाँधी जी की अहिंसात्मक विचारधारा के अनुरूप न होने की स्थिति में इसे सर्वसम्मति से स्वीकार नहीं किया गया।

अन्त में 22 जुलाई 1947 को मेरे स्वरूप में परिवर्तन करते हुए सर्व स्वीकार्य रूप में प्रस्तुत किया गया। इसमें बराबर लम्बाई चौड़ाई की केसरिया, श्वेत और हरे रंग की तीन पट्टियों को जोड़कर मध्य में चरखा की जगह 24 तीलियों वाला सम्राट अशोक का धर्म चक्र लिया गया। चक्र की गोलाई पट्टी की चौड़ाई के बराबर रखते हुए नीले रंग से प्रदर्शित है। मेरा आकार 3 बाय 4 निर्धारित किया है तथा निर्माण खादी वस्त्र से किया गया हो। आजादी प्राप्ति 14 अगस्त 1947 को मध्य रात्रि में हमारे प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने मुझ लाल किले की प्राचीर से फहराया तब मुझे विश्व के सबसे बड़े प्रजातांत्रिक राज्य का ध्वज होने का गौरव प्राप्त हुआ। तब से आज तक प्रत्येक राष्ट्रीय पर्व पर मुझे बड़े ही सम्मान और गौरव के साथ फहराया जाता है।

तुरशन पाल पाठक

मैं हूँ पौष्टिक आहार

अचानक डुगडुगी बज उठी–सुनो, सुनो ध्यान से सुनो, 'मैं हूँ पोष्टिक आहार'। आज तुम्हारे पास, तुम्हारी भलाई के लिए अपनी कथा सुनाने आया हूँ।

तुम दुनिया के किसी भी हिस्से में क्यों न रहते होओ, यदि मेरा उपयोग ठीक से नहीं करोगे तो बेमौत ही मारे जाओगे।

मैं तो डुगडुगी बजाकर सबको आगाह कर रहा हूँ कि बिना सोचे–समझे, चटोरी जीभ के स्वाद के लिए जो भी अच्छा लगे वह अनाप–शनाप क्यों खाए जा रहे हो। अरे भाई, यह पेट है, तुम्हारा अपना पेट, कोई कूड़ेदान नहीं। आज तुम इसे चाहे जितना भर लो, कल यह फिर से भरने के लिए खाली हो जाएगा।

कहीं ऐसा न हो कि पेट को भराभर भरते रहने से आप मोटे होकर दिल की बीमारी या कम खाने से 'कुपोषण' के कारण अकाल मौत की गोद में चले जाएँ। अपनी भलाई के लिए मुझ पौष्टिक आहार को पहचानिए। मेरा संतुलित सदुपयोग कीजिए और दीर्घजीवी होकर जीवन का आनंद लीजिए।

बच्चों, यदि तुम मुझे जानना चाहते हो तो इस कथा को ध्यान से पढ़ो। मेरे बारे में बहुत कुछ जान जाओगे।

एक छोटे से कसबे में एक संपन्न डॉक्टर परिवार रहता था। परिवार के सभी सदस्य हट्टे–कट्टे थे। इसीलिए वे देखने में भरे–पूरे, खाते–पीते घर के लगते थे। लेकिन डॉक्टर साहब की बेटी लक्ष्मी खाने–पीने में बड़ी आलसी थी। इसीलिए घर में सब कुछ होते हुए भी बड़ी दुबली–पतली थी।

धीरे–धीरे लक्ष्मी बड़ी हुई तो डॉक्टर साहब को उसके विवाह की चिंता होने लगी। कई अच्छे परिवारों में दुबली–पतली होने की वजह से लक्ष्मी का विवाह नहीं हो सका। अत: डॉक्टर साहब ने यह सोचकर कि गाँव की शुद्ध हवा और बदले वातावरण में शायद लक्ष्मी का स्वास्थ्य अच्छा हो जाए, शहर से दूर एक गाँव में एक पढ़े–लिखे होनहार लड़के विष्णु से लक्ष्मी की शादी कर दी।

गाँव के शुद्ध और बदले वातावरण में भी लक्ष्मी के खाने–पीने में कोई परिवर्तन नहीं आया। लक्ष्मी तो खाने–पीने में लापरवाह और चिड़चिड़े स्वभाव की पहले से ही थी, ससुराल में भी कोई बड़ी–बूढ़ी उसके खान–पान पर विशेष ध्यान देने वाली नहीं थी। अत: उसके स्वास्थ्य पर और भी बुरा असर पड़ने लगा। वह बचपन से ही रो–रोकर दूध पीती थी और डाँट खाकर चिड़िया के चुग्गे की तरह थोड़ा–

सा खाना खाती थी। हाँ, खट्टी-मीठी चीजें जैसे कैथ, इमली, कच्ची अमियाँ, बाजार के चूरन, मसाले के चने, चाट-पकौड़ी, हींग के बड़े, टॉफियाँ और ऐसी ही अन्य चीजों को चाव से खाती थी। इससे उसका जीभ का स्वाद तो पूरा हो जाता था पर न तो पेट भरता था और न ही उसे शरीर के लिए आवश्यक पोषक आहार मिल पाते थे। गाँव में ये चटपटी चीजें आसानी से मिलती नहीं थीं। अत: गाँव में उसके खाने में और भी कमी आ गई। और वह ज्यादा कमजोर हो गई।

तुम जानते ही हो कि घड़ी या खिलौनों में चाबी न भरी हो तो वे बंद हो जाते हैं। इसी तरह तुम्हारे शरीर को ठीक से चलने के लिए ऊर्जा आदि की आवश्यकता होती है जो तुम्हें खान-पान से मिलती है। खान-पान की कमी से शरीर भी बैटरी डाउन खिलौने की तरह मरा-मरा सा चलता है। लक्ष्मी का हाल भी कुछ ऐसा ही हो गया था।

समय बीता और लक्ष्मी अपने पति विष्णु के साथ दिल्ली आ गई। चार-पाँच वर्षों में ही वह तीन पुत्रों की माँ बन गई। कमजोर माँ के बच्चे भी कमजोर हुए। सबसे बड़ा बेटा अतुल बहुत दुबला-पतला था। चलते-चलते गिर जाता था। उसे अनेक फोड़े-फुंसियों के रोग घेरे रहते थे। अन्य दो बेटे अरुण और अनुज भी बहुत अधिक स्वस्थ नहीं थे। लक्ष्मी अपनी कमजोर संतान को देखकर बहुत दुखी होती थी।

शर्म के मारे अब वह लाख बुलाने पर भी अपने माता-पिता के यहाँ नहीं जाती थी। वह अपने आपसे ही घृणा करने लगी थी। तब उसके प्रति विष्णु ने उसे धीरज बँधाया और समझाते हुए कहा कि जैसे कोई हमेशा ही तंदुरुस्त नहीं रहता वैसे ही कोई हमेशा रोगी भी नहीं रहता। जो समय रहते उपचार करता है वह अवश्य ठीक हो जाता है।

अब लक्ष्मी ने प्रतिज्ञा की कि मैं अपना और अपने बच्चों का स्वास्थ्य ठीक होने पर ही अपने माता-पिता के यहाँ जाऊँगी। विष्णु ने तालियाँ बजाकर लक्ष्मी की प्रतिज्ञा का स्वागत किया।

बीते हुए जीवन को याद करके लक्ष्मी बचपन से अब तक की खान-पान की अपनी आदतों को कोसने लगी और अपने बेटों को तंदुरुस्त बनाने के लिए अचूक रामबाण तरीके खोजने लगी।

विष्णु रोज ही नए डॉक्टरों के चक्कर लगाने लगा लेकिन उनकी महँगी फीस और दवाओं की बातें सुनकर जब वह अपनी जेब में थोड़े से पैसे देखता तो वापस लौट आता। एक दिन उसे एक तरकीब सूझी।

वह दफ्तर के कार्य से बाहर जाने का बहाना करके अपनी ससुराल, डॉक्टर ससुर जी के पास पहुँच गया।

ससुर जी ने पूछा, 'विष्णु जी, अकेले ही आए हो, बेटी लक्ष्मी को साथ नहीं लाए।'

विष्णु ने कहा, 'अब तो आपकी बेटी लक्ष्मी मय अपने बेटों के पूरी तरह तंदुरुस्त होकर ही आपके यहाँ आएगी।'

यह सुनकर उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

डॉक्टर ससुर जी ने कहा, 'बेटी लक्ष्मी और उसके बच्चे बीमार नहीं हैं। वे तो कुपोषण के शिकार हैं। यदि लक्ष्मी स्वयं पौष्टिक आहार खाना और बच्चों को खिलाना सीख ले तो सब कुछ ठीक हो जाएगा और मेरी भी एक चिंता दूर हो जाएगी।

वहाँ दो–तीन दिन ठहरकर विष्णु ने लक्ष्मी और बच्चों के खान–पान की भरपूर जानकारी ले ली। अब विष्णु जी एक तरह से संतुलित पौष्टिक आहार के विशेषज्ञ बनकर घर लौटे।

रात के समय भोजन के बाद जब लक्ष्मी और बच्चे इकट्ठे हुए तो बच्चों ने अपने पिता विष्णु से कहानी सुनाने को कहा। विष्णुजी जैसा ससुराल से सीखकर आए थे उन्होंने बच्चों और लक्ष्मी को कहानी के बजाय पौष्टिक आहार की ओर से उसकी आत्मकथा कुछ इस तरह सुना डाली–

कोई पूछे कि तुम खाना क्यों खाते हो तो तुम उत्तर दोगे–भूख लगती है इसलिए खाते हैं। यह उत्तर तो ठीक है, लेकिन वास्तविकता यह है कि तुम्हें अपनी बढ़वार (ग्रोथ) के लिए, कार्य करने से टूटे–फूटे अंगों को बदलने के लिए, घिसे और क्षतिग्रस्त हुए भागों की मरम्मत के लिए, शरीर के सभी अंगों को चलाने तथा शारीरिक और मानसिक परिश्रम करने हेतु ऊर्जा आदि के लिए भोजन की आवश्यकता होती है।

वैसे हर खाद्य–पदार्थ आहार होता है लेकिन उत्तम पौष्टिक आहार वह होता है जिसमें तुम्हारे शरीर की जरूरतों को पूरा करने के सभी पौष्टिक तत्त्व मौजूद हों, जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज और पानी आदि।

तुम जानते ही हो कि तुम्हारी आवश्यकता की ये चीजें हर खाद्य पदार्थ में नहीं होती हैं और हर व्यक्ति के खाने की रुचियाँ भी भिन्न होती हैं। कोई शाकाहारी है तो कोई माँसाहारी। कोई रोटी पसंद करता है तो कोई चावल। किसी को रबड़ी अच्छी लगती है तो किसी को आइसक्रीम।

इसलिए लोगों की रुचियों के अनुसार ऐसे खाद्य पदार्थ चुने जाते हैं जिनसे उनके भोजन में ये सभी आवश्यक चीजें मिल जाएँ। यही मिले–जुले खाद्य–पदार्थ 'पोषक आहार' कहलाते हैं। इन्हें खाने से तुम्हारा शरीर, मन तथा बुद्धि स्वस्थ रहते हैं।

अब तक तुम यह जान गए होंगे कि सभी जीवधारी अपनी बढ़वार करते हैं, जैसे बच्चे बढ़कर युवा बनते हैं और युवा प्रौढ़ बनते हैं। पेड़–पौधे तथा अन्य सभी जीवधारी भी इसी तरह बढ़ते हैं। इनकी इस बढ़वार का भोजन से सीधा संबंध है। भोजन मिले तो बढ़वार खूब होती है और न मिलने से यह कम हो जाती है जो आगे चलकर पूरी तरह रुक भी सकती है।

प्रोटीन शरीर में माँस बढ़ाने वाला तत्त्व है और पौष्टिक आहार में इसका कार्य बढ़वार में सहायता करना होता है। छोटे बच्चों को प्रोटीन की बहुत आवश्यकता होती है। फिर भी भोजन के एक तिहाई भाग से अधिक प्रोटीन नहीं लेना चाहिए। अधिक उम्र होने पर प्रोटीन की जरूरत घट जाती है। इसलिए 25–30 वर्ष की आयु के बाद इसे घटाते जाना चाहिए।

अधिक प्रोटीन लेने से इसका जो भाग पच नहीं पाता है वह अम्लता पैदा करता है। इसमें अम्लपित्त और कई अन्य रोग हो जाते हैं। अतः प्रोटीन संतुलित मात्रा में लेना चाहिए। प्रोटीन सभी तरह की दालों, दूध, अंडा, गोश्त, मछली आदि में भरपूर पाया जाता है। थोड़ी मात्रा में यह चावल, गेहूँ और सब्जियों में भी पाया जाता है। दूध का प्रोटीन सर्वोत्तम होता है। इसलिए दूध और दूध के बने पदार्थ रुचिपूर्वक खाने चाहिए।

जब तुम कोई कार्य करते हो तो तुम्हारे अंग भी मशीन की तरह घिसते हैं। तुम्हारे रक्त का लाल

रंग, लाल रंग की कोशिकाओं के कारण होता है। ये कोशिकाएँ रक्त में कार्य करते-करते बहुत जल्दी टूटती-फूटती रहती हैं। तुम्हें जानकर आश्चर्य होगा कि लगभग छः सप्ताह के अंदर इनके स्थान पर रक्त में पूरी तरह से नई लाल कोशिकाएँ आ जाती हैं।

साँप की केंचुली की तरह तुम्हारे शरीर की त्वचा (चमड़ी) भी उतरती रहती है और उसके स्थान पर नई त्वचा बनती रहती है। इन कार्यों और शरीर में घिसे-पिटे अंगों को बदलने के लिए भी पौष्टिक भोजन में प्रोटीन आवश्यक होता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि शरीर में टूट-फूट हो जाती है। लेकिन त्वचा और रक्त की लाल कोशिकाओं की तरह शरीर के अंगों की भी टूट-फूट हो जाती है। लेकिन त्वचा और रक्त की लाल कोशिशकाओं की तरह शरीर के टूटे-फूटे अंगों को बदला नहीं जा सकता। ऐसी स्थिति में उनकी मरम्मत करनी होती है। जब बच्चे खेलते हैं तो कभी चोट लग जाती है, कभी कोई अंग कट जाता है या कोई घाव हो जाता है। इन और ऐसी ही शारीरिक टूट-फूट को ठीक करने के लिए भी प्रोटीन युक्त पौष्टिक भोजन आवश्यक होता है।

बात यहीं खत्म नहीं हो जाती। जब तुम चलते-फिरते हो या दौड़ते, हाथ हिलाते, बात करते, खाना खाते अथवा सोते हो तो इन सब कार्यों के लिए भी ऊर्जा आवश्यक होती हो जो तुम्हें भोजन में खाए जानेवाले पदार्थों से मिलती है।

सभी वनस्पति खाद्य पदार्थों में यह ऊर्जा सूर्य की धूप से प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा इकट्ठी होती रहती है। माँस, मछली तथा अंडों में भी यही ऊर्जा होती है जो उनमें इन पदार्थों को देने वाले जीवों द्वारा वनस्पतियाँ खाने से पहुँचती रहती है।

यहाँ यह बताना जरूरी है कि प्रायः पेड़-पौधे अपने स्थान पर खड़े-खड़े हवा, पानी, धूप तथा जमीन से अपने भोजन के मौलिक पदार्थ प्राप्त करते हैं। पौधे हवा से कार्बनडाइऑक्साइड तथा पृथ्वी से पानी, लवण तथा अन्य खनिज लेते हैं। प्रकृति के इन कच्चे मालों से वे अपने शरीर की आवश्यकता के कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन तथा अन्य आवश्यक पोषक पदार्थ बना लेते हैं। लेकिन मनुष्य और अन्य चल प्राणी ऐसा नहीं कर पाते। तभी प्रतिदिन तुम्हें और अन्य जीवधारियों को भोजन करने की जरूरत रहती है।

प्रोटीन की तरह पौष्टिक आहार में कार्बोहाइड्रेट का भी अपना महत्त्व है। इसे स्टार्च भी कहते हैं। स्टार्च से तुम्हें शक्ति या ऊर्जा मिलती है। इसे भी शरीर की आवश्यकता से अधिक नहीं लेना चाहिए। दुबले-पतले लोगों को अपना शरीर तगड़ा और स्वस्थ रखने के लिए कुछ अधिक स्टार्च की आवश्यकता होती है। चर्बी चढ़े मोटे लोगों को स्टार्च की आवश्यकता नहीं होती है। औसत दर्जे के लोगों को अपने काम के अनुसार स्टार्च लेना चाहिए।

जो लोग अधिक शारीरिक परिश्रम करते हैं, जैसे पैदल चलना, मजदूरी करना, बोझा ढोना, नाव चलाना आदि, उन्हें अधिक स्टार्च चाहिए, ताकि उन्हें काम करने की शक्ति मिलती रहे। जो लोग बैठकर काम करते हैं, जैसे दफ्तरों में कुर्सी पर बैठकर काम करना या दुकान पर बैठे रहना आदि, उन्हें स्टार्च की आवश्यकता तो होती है लेकिन कम मात्रा में।

गेहूँ, जौ, चावल, शकरकंद आलू, शक्कर, मकई, बाजरा, जड़वाली सब्जियाँ आदि सभी में अधिकतर स्टार्च ही होता है।

स्टार्च तुम्हारे मुँह की लार से पचता है। लार मिलने पर वह चीनी या ग्लूकोज में बदल जाता है। तभी तो सूखी रोटी भी अच्छी तरह चबाई जाने पर मीठी लगने लगती है।

स्टार्च शरीर में अपने असली रूप के बजाय चर्बी में बदलकर इकट्ठा होता है। यही कारण है कि अधिक स्टार्च खानेवाले बेडौल और मोटे हो जाते हैं। इससे शरीर के भीतरी कोमल अंगों पर दबाव बढ़ जाता है। वे कमजोर हो जाते हैं और तुम्हें रोगी बना देते हैं।

तुम्हारे देश में अनेक लोग भोजन में स्टार्च अधिक लेते हैं, इसीलिए वे अस्वस्थ रहते हैं। स्वस्थ रहने के लिए भोजन में स्टार्च के साथ हरी सब्जियाँ, फल, दूध, दही और दालें आदि भी होनी चाहिए।

कुछ लोग वसा अर्थात् घी, तेल, मक्खन और चर्बी आदि भी शरीर की जरूरत से ज्यादा खाने की बातें करते हैं। वे सोचते हैं वसा अधिक खाने से बलवान हो जाएँगे। संभवत: उन्हें मालूम नहीं है कि आवश्यकता से अधिक खाई गई वसा शरीर में इकट्ठी नहीं होती। उसे भी अधिक प्रोटीन तथा स्टार्च की तरह दूषित पदार्थ के रूप में शरीर से बाहर निकलना पड़ता है। अधिक वसा खानेवालों के पाचक अंगों और मल बाहर निकालने वाले अंगों का काम बढ़ जाता है। वे कमजोर हो जाते हैं।

वसावाले पदार्थ तुम्हारे लिए इसलिए आवश्यक होते हैं, क्योंकि वसा में ऊर्जा इकट्ठी होती है। शरीर में चर्बी के रूप में इकट्ठी इस वसा से तुम्हें आवश्यकता पड़ने पर आकस्मिक ऊर्जा मिलती है, सर्दी-गरमी से बचाव होता है, अम्ल और खटाई से होने वाली हानियों से आँतों की रक्षा होती है। वसा या चिकनाई खाने से तुम्हें वसा में घुलनशील विटामिन प्राप्त होते हैं जिनसे शरीर के स्वस्थ और निरोगी रहने में सहायता मिलती है।

हालाँकि घी आदि से भोजन स्वादिष्ट हो जाता है, रुचिपूर्वक खाया जाता है लेकिन घी, तेल तथा चर्बी-वाला भोजन भारी होता है और देर में पचता है। इसकी भोजन में अधिक मात्रा तुम्हारी समूची पाचन-क्रिया को ही उलट-पुलट देती है। अत: अधिक मात्रा में चिकनाई और मिर्च-मसाले की चटपटी, घी-तेल में तली चीजों से बचना चाहिए और यदि खानी ही पड़ें तो उनकी मात्रा इतनी संतुलित लेनी चाहिए जिससे पाचन-क्रिया पर किसी भी तरह का बुरा असर न पड़े।

तुम्हारे भोजन में चिकनाई के लिए घी, मक्खन, वनस्पतियों तथा मूँगफली, तिल, सरसों, नारियल आदि के तेलों का तो इस्तेमाल किया जाता है परंतु इनके अतिरिक्त सूखे नारियल, अखरोट, बादाम, पिस्ता, काजू, तिल के बीज, मूँगफली और सोयाबीन भी भोजन में चिकनाई देने वाले अच्छे खाद्य पदार्थ हैं।

बिना मक्खन निकाला दूध तथा इस दूध के खोए और चूर्ण के अतिरिक्त बकरे के माँस, उसके जिगर, मुर्गी के अंडे और मछली के सेवन से अन्य चीजों के अलावा चिकनाई भी मिलती है।

मेरा (पोषक आहार का) एक महत्त्वपूर्ण भाग विटामिन कहलाता है। तुम सोच रहे होगे कि विटामिन क्या होते हैं? हमने तो कभी देखे भी नहीं हैं।

तुम्हारा सोचना भी ठीक है। विटामिन कोई दिखाई देनेवाली चीज नहीं है। ये भी अन्य पोषक

तत्त्वों की तरह अति आवश्यक पोषक तत्त्व हैं, जो तुम्हारे खाद्य पदार्थों में प्राकृतिक तौर पर पाए जाते हैं।

विटामिट एक तरह से भोजन के प्राण होते हैं। इनसे तुम्हें जीवनी शक्ति, रक्त में पौष्टिक रस, दीर्घ जीवन, हट्टा-कट्टा शरीर, शरीर की वृद्धि, संक्रामक रोगों से बचने की ताकत, नेत्रों को ज्योति, पाचन तंत्र को दृढ़ता, ज्ञान तंतुओं को बल, रक्त को साफ रखने की शक्ति, त्वचा को चमक, पेशियों तथा हड्डियों को मजबूती प्रदान करने जैसे महत्त्वपूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं।

ऐसे उपयोगी विटामिनों का नाम उनके वास्तविक नामों के बजाय बड़ा सरल रखा गया है। वे अपने गुणों तथा कार्यों के अनुसार हैं और ए, बी, सी, डी, ई, एफ आदि नामों से पुकारे जाते हैं।

विटामिनों को पानी और चिकनाई में घुलनशीलता के अनुसार दो भागों में बाँटा जा सकता है। विटामिन ए, डी, ई, तथा के, चिकनाई में घुलनशील होते हैं।

दूध तथा दूध से बने पदार्थों, हरी सब्जियों, फलों, माँस, अंडों, अनाज, दालों आदि में विटामिन पाए जाते हैं। इन्हें उबालने, काटकर धोने, मसालों के साथ घी आदि में भूनने, तेज चक्की से पीसने, छिलकों को उतार के फेंकने आदि से विटामिन नष्ट हो जाते हैं। इसीलिए फल, सलाद आदि को कच्चा ही खाना चाहिए। सब्जियों को अधिक भूनना और तलना नहीं चाहिए। आटे आदि को भूसी निकालकर नहीं खाना चाहिए।

वनस्पति घी, गाय, भैंस तथा सुअर की चर्बी, तिल, सरसों, अलसी तथा बिनौले के तेल, चोकर निकले आटे, मशीन से पालिश किए चावल, जैम, जैली, मुरब्बा, आग में पकाए फल, सूखी साग-तरकारियों तथा खौलाकर खूब औंटाए गए दूध आदि में कोई विटामिन नहीं होता है।

विटमिन 'ए' शरीर का ऐसा पोषक है जो शरीर की बढ़वार करता है, उसे संक्रामक रोगों से बचने की ताकत प्रदान करता है। इससे नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। इसकी कमी से बच्चों का शरीर कमजोर हो जाता है और उनके दाँत देर से निकलते हैं। उन्हें निमोनिया, क्षय तथा खाँसी जैसे रोग घेरे रहते हैं।

यह विशेषत: दूध, दही, मक्खन, घी, मठा आदि में पाया जाता है। किन्तु पालक, बंदगोभी, टमाटर, मूली, फूलगोभी, गाजर, आलू, नीबू, पपीता, केला, माँस, मछली का तेल, अंडे की जर्दी, हरी पत्तीवाले शाक आदि में भी पाया जाता है। अत: शरीर की बढ़वार और उसे निरोग रखने के लिए भोजन में इन चीजों का सेवन करना चाहिए।

विटामिन 'बी' मुख्यत: हमारे पाचन-तंत्र को ठीक और सबल रखता है। इसकी कमी से हाजमे की खराबी पैदा होती है और आलस आने लगता है, कब्जियत हो जाती है या दस्त लगते हैं, बेरी-बेरी रोग के कीटाणु पनपने लगते हैं और रोगी बना देते हैं।

शाक-सब्जियों में विटामिन 'बी' नहीं के बराबर होता है। यह अनाजों में होता है और छिलके के नीचे चोकर से ढका रहता है। इसलिए भूसी या कना अलग किए अनाज तथा पालिश किए चावल में नहीं पाया जाता है। अत: अनाजों और दालों को छिलके सहित तथा बिना पालिश किए चावल खाने चाहिए।

खमीर, ताजी पालक, कच्ची फूलगोभी, पत्तागोभी, टमाटर, सेब, केला, खजूर तथा नाशपाती आदि विटामिन 'बी' के अच्छे स्रोत हैं। यह पानी में घुलनशील होता है। अत: विटामिन 'बी' के खाद्य पदार्थों के भोजनों का पानी फेंकने के बजाय उपयोग में लाना चाहिए।

विटामिन 'सी' साधारण स्वास्थ्य तथा रक्त को साफ करने और मसूड़ों तथा दाँतों को मजबूत बनाने में मदद करता है। यह तुम्हें साहसी और हिम्मती बनने की शक्ति देता है। इसकी कमी से स्कर्वी नामक रोग हो जाता है, जिससे मसूड़े पक जाते हैं और उनसे पस तथा खून आने लगता है। सिर चकराने लगता है। शरीर पर झुर्रियाँ और लाल-हरे चकते पड़ जाते हैं। थोड़े परिश्रम में ही थकान होने लगती है।

दालों तथा अनाजों में विटामिन 'सी' नहीं होता लेकिन गेहूँ, चना आदि को भिगो देने पर उनके अंकुरों में यह बन जाता है। पत्तागोभी और संतरे में यह बहुत होता है। टमाटर, प्याज शलजम, गाजर, मटर, नीबू और नीबू जाति के खट्टे फलों में यह काफी मात्रा में पाया जाता है।

विटमिन 'सी' और कैल्शियम का आपस में बड़ा संबंध है। दोनों एक-दूसरे की कमी को पूरा करते हैं।

विटामिन 'डी' हड्डियों को मजबूत, माँसपेशियों को दृढ़ बनाता है और आँतों की दीवारों को ताकत पहुँचाता है। यह उन सभी चीजों में मिलता है जिनमें विटामिन 'सी' और कैल्शियम होते हैं। इसकी कमी से हड्डियाँ और दाँत कमजोर हो जाते हैं। छोटे बच्चों में इसकी कमी होने पर बच्चे चिड़चिड़े हो जाते हैं। वे गोद में लेने से रोने लगते हैं। उनके नाखून खराब हो जाते हैं। उन्हें सूखा रोग हो जाता है।

इसे सूर्य किरण विटामिन भी कहा जाता है। खाने की चीजों की तरह तुम्हारा शरीर भी धूप में कुछ देर नंगे रहने से इसे प्राप्त कर लेता है। विटामिन डी, सी तथा कैल्शियम एक-दूसरे से घना संबंध रखते हैं और एक-दूसरे की मदद करते हैं। घी, दूध, मक्खन, अंडे की जर्दी, मछली के यकृत का तेल विटामिन 'डी' के अच्छे स्रोत हैं।

विटामिन 'ई' हीन भावना को रोकता है। अत: इसकी कमी से लोग अपने आप को कमजोर, छोटा, तुच्छ तथा दीन-हीन समझते लगते हैं। ऐसे लोग संतान उत्पन्न करने में भी असमर्थ हो जाते हैं। यह सलाद की पत्तियों, हरी पत्तीवाले शाकों, सूखे गोश्त, नारियल या नारियल का तेल, गेहूँ, गेहूँ के चोकर, मक्खन अंकुरित गेहूँ तथा बाजरे आदि में बहुत पाया जाता है।

ठीक इसी तरह विटामिन 'जी' की कमी से तुम्हारी चमड़ी सूखी-सूखी रहती है। यह हरी शाक - तरकारियों, ताजे फलों, दाल, गेहूँ, दूध, मक्खन आदि में पाया जाता है जो अन्य विटामिनों के भी स्रोत हैं।

पौष्टिक आहार में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा और विटामिन की तरह लवणों का भी अपना विशेष महत्त्व होता है।

तुम जितना नमक खाते हो तुम्हें उतने नमक की आवश्यकता नहीं होती है। अधिक नमक खाने से गुर्दा और रक्तवाहिनी नसें कमजोर तथा शिथिल हो जाती हैं, जिससे रक्त प्रवाह ठीक से नहीं हो पाता और तुम्हारा स्वास्थ्य गिर जाता है। इसलिए नमक संतुलित मात्रा में खाना चाहिए।

तुम भोजन में जो साधारण खनिज लवण या नमक अपने स्वाद के अनुसार खाते हो वह सोडियम लवण होता है। फल, सब्जी तथा अन्य खाई जानेवाली वनस्पतियों में भी नमक होते हैं। इनमें सोडियम के अलावा पोटैशियम, मैग्नीशियम, फ्लेरिन, लोहा, ताँबा, फास्फोरस और कैल्शियम आदि के नमक भी पाए जाते हैं। वनस्पतियों से प्राप्त होने वाले लवण रक्त में सम्मिलित होकर तुम्हारे स्वास्थ्य में योगदान करते हैं।

कैल्शियम छोटे बच्चों की हड्डी मजबूत बनाने के लिए आवश्यक होता है। इसलिए बच्चों के

आहार में बड़ों की तुलना में अधिक कैल्शियम की जरूरत होती है। कैल्शियम से हृदय की क्रियाएँ ठीक चलती हैं। दूध में यह पर्याप्त मात्रा में होता है।

लोहा खून के कणों को लाल बनाता है। लंबी बीमारी में प्राय: शरीर में रक्त-कण घट जाते हैं। उस समय लोहे की अधिक आवश्यकता होती है। टमाटर, प्याज, मैथी, बथुआ और पालक आदि हरी सब्जियों में लोहा काफी होता है।

फास्फोरस शरीर और दिमाग को बढ़ाने के अतिरिक्त हड्डियों को मजबूत बनाने में भी मदद करता है। यह ककड़ी, गाजर, मूली, फल, गोभी और गेहूँ में पर्याप्त मिलता है।

गंधक की कमी से बदन में खुजली, कील-मुँहासे, त्वचा का बदरंग होना आदि होता है। यह मूली, प्याज, फूलगोभी, पत्तागोभी और शलजम में बहुत पाया जाता है।

पोटैशियम पेट साफ रखने में तथा क्लोरीन और ताँबा पाचन-तंत्र ठीक रखने तथा रक्त का भार न बढ़ने देने में सहायक होते हैं। फ्लेरिन से आँख की पुतलियाँ ठीक रहती हैं तो मैग्नीज से पुरुषत्व प्रबल होता है और मैग्नीशियम से एडीनल ग्रंथि ठीक रहती है जिससे साहसी बनते हैं। आयोडीन से थाइराइड ग्लैंड्स स्वस्थ रहते हैं तथा सिलिकन बालों को बढ़ाने और उन्हें सुंदर बनाए रखने में मदद करता है।

इन उपयोगी बातों से पता चलता है कि तुम्हारे पौष्टिक आहार में खनिजों और लवणों का भी अपना विशेष महत्त्व है जिनके अभाव में तुम स्वस्थ नहीं रह सकते। अत: लवणों को भी उपयुक्त मात्रा में अपने भोजन में खाए जाने के लिए हरी सब्जियों, फलों तथा दूध आदि का भी समुचित प्रयोग करना चाहिए।

भोजन में पौष्टिक आहार के बारे में बताई गई सभी वस्तुओं में संतुलन आवश्यक है। लेकिन भोजन में साफ और स्वच्छ पानी इससे भी अधिक आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण होता है। दूषित या गंदा जल पीने से लोग अनेक बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

पानी भोजन के साथ तो पिया ही जाता है लेकिन भोजन के अतिरिक्त भी बार-बार पिया जाता है। तुम्हारे शरीर में अधिकांश भाग विविध रूपों में पानी का ही तो होता है जो अंग-प्रत्यंगों के कार्य करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पौष्टिक आहार की यह कौतूहलभरी आत्मकथा सुनते-सुनते लक्ष्मी और बच्चों की नींद गायब हो गई थी। उन्हें अपनी भूल और अज्ञानता का अहसास हो रहा था और वे सोचने लगे थे कि घर में दूध, दही, मक्खन, मौसमी, फल, हरी सब्जियाँ, दाल-रोटी आदि सब कुछ तो आता रहता है। इनमें स्वास्थ्यवर्धक पौष्टिक आहार के घटक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, लवण और पानी आदि सभी कुछ तो होते हैं। हम नाहक ही उन्हें खाने से जी चुराते हैं और दुबले-पतले ही नहीं कमजोर तथा बीमार से भी रहते हैं।

अब हम भोजन से कभी भी जी नहीं चुराएँगे और अभी, इसी समय से संतुलित पौष्टिक आहार नियमित खाएँगे और तंदुरुस्त होकर ही नानी के यहाँ जाएँगे।

अगले वर्ष पौष्टिक आहार की जय-जयकार करते हुए जब बच्चे अपनी माँ लक्ष्मी के साथ नानी के घर पहुँचे तो उन्हें स्वस्थ देखकर ननिहाल में सभी की आँखों से खुशी के आँसू निकल पड़े।

राजा चौरसिया

मैं हूँ रोटी

आज मेरा मन अपनी आत्मकथा सुनाने का है। यह जन्म कब और कैसे हुआ, इसके बारे में मुझे कुछ भी अता-पता नहीं। इसके बाद में इतना जरूर कह सकती हूँ कि मैं अन्न से उत्पन्न होने के कारण उसकी बेटी अर्थात् रोटी हूँ। चक्की में पीसे गए अनाज के बारीक रवेदार आटे को खूब गूँथकर, चौकी पर बेलन से बेलकर और गरम तवे पर सेंककर मुझे तैयार किया जाता है। चूल्हे की आँच में फूलकर पूरी गोल-मटोल दिखती हूँ। स्वाद के साथ सेहत की जान हूँ। रसोई की शान हूँ। बड़ी मशक्कत से बनकर पेट की भूख बुझाने की सेवा करना मेरा जन्मजात स्वभाव है।

कई आकार के अलावा मेरे कई प्रकार भी हैं। जैसे, माटी के चूल्हे की, गैस के चूल्हे की, भट्टी की, तंदूरी, रूमाली आदि देसी घी से चुपड़े जाने पर मैं गोरी से चिकनी दिखने लगती हूँ। मेरे बिना भोजन-व्यंजन से भरी थाली भी खाली प्रतीत होती है। जब घर में लोग पालथी मारकर बैठकर एक साथ मुझे खाते हैं। परिवार में प्यार बढ़ाते हैं। तब मुझे बड़ी खुशी होती है। मेरा नाम चपाती और फुलका भी है।

'गेहूँ की रोटी फूलती है लेकिन ज्वार, बाजरे तथा चने की रोटी नहीं फूलती है। मक्के की रोटी को सरसों के साग के संग खाने का मजा सबको नहीं बदा है। ग्रामीण अंचलों में ऐसा कहा जाता है।'

मैं एक बार फूलकर पिचकने के बाद दुबारा फिर नहीं फूल पाती हूँ। सभी को यह बताती हूँ कि बीता हुआ समय कभी लौटकर नहीं आता है। आप से विनती है कि मेरे किसी बखान को मेरा गुणगान न समझा जाए। जैसे आपको मैं प्रिय हूँ उसी तरह आप भी मुझे बहुत प्रिय हैं।

ऐसे कथन सुनकर भाव-विभोर हो जाती हूँ - 'भगवान की दया से दाल-रोटी चल रही है। उनसे हमारा रोटी-बेटी का रिश्ता है। मेहनत की कमाई से मिली नून-रोटी। ऊँचे पकवान से भी बढ़कर है। रोटी के दम पर हजारों परिवारों की रोजी चलती है जब रोटी के कौर पेट तक मुँह के रास्ते से गुजरते हैं, तब शरीर के सारे अंग बेहद खुशी महसूस करते हैं। माँ के हाथों से बनी और परोसी गई रोटी का टेस्ट बेस्ट कहलाता है। उन दोनों का दाँत-काटी रोटी का रिश्ता है। दाल का मतलब केवल दाल होता है। भात का मतलब केवल भात होता है परंतु रोटी का मतलब भोजन से है।'

इस प्रकार की मुहावरे जैसी बातें सुनकर मुझे जगजाहिर होने का पूरा बोध होता है। आप लोगों के सामने मुझे रसखान कवि की ये पंक्तियाँ याद आ गईं - 'काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सों ले गयो माखन रोटी।' महाराणा प्रताप ने जंगल में घास की रोटियाँ खाई थीं। यह सुनकर मन में बहुत गर्व होता है, कि मैं मुसीबतों में भी काम आती हूँ।

जब लाड़ला बच्चा अपनी तोतली भाषा में रोटी के बदले लोती कहता है, तो मेरे मन में ममत्व का अनुभव होने लगता है। हलवा को बहुत मजेदार बनाने वाली पूरी मैं ही हूँ जो तेल से तलकर बनाई जाती हूँ। मेरे साथ खाए जाते दूध, दही, साग-भाजी, तरकारी, कढ़ी, भात, दाल आदि बासी होने पर फीके हो जाते हैं पर मैं बासी होकर भी घी-गुड़ के संग स्वादिष्ट, फायदेमंद रहती हूँ। नौनिहाल और बूढ़े दूध में मेरे टुकड़े, डुबाकर बड़े मजे से खाते नहीं अघाते हैं। कहीं बाल गोपाल यह गाते हैं-

कितनी भोली, गोल तवे सी /छोटी है या मोटी है।

आओ बाँट-बाँटकर खाएँ /रोटी है भई, रोटी है।

मेरे लिए यह भी कहा जाता है कि कुत्ता जिसकी रोटी खाता है, ईमानदारी से उसकी ड्यूटी बजाता है। ताली दोनों हाथों से बजती है। आप सभी मुझे चाहते हैं तो मैं भी आप सभी का ध्यान धरती हूँ, सबसे बढ़िया मेरा जायका है। रसोईघर मेरा मायका है।

मैं कोमल होकर भी गोबर के कंडे या लकड़ियों के अंगारे सह लेती हूँ। मुझे पता है कि परोपकार को भी ऊँचा धर्म माना जाता है। गाँवों में पहली रोटी गाय को खिलाने का चलन आज तक बना हुआ है। मजदूर के लिए रोटी का कलेवा मेवा है। मुझे दूसरों के तवे पर नहीं रोका जाना चाहिए।

पिकनिक में भुरता के साथ खाया जाने वाला मजेदार गक्कड़ भी मैं हूँ। मुझे बाटी भी कहते हैं। उस समय मुझे झटका लगता है जब सास और बहू की रोटी अलग-अलग चूल्हों पर पकती है। कभी रोटी जल जाने पर सास अपनी बहू को जली-कटी सुनाती है। सास के पेट के सवाल का मैं हल हूँ। अपने मन की बात कहकर मैं धन्य होकर आप लोगों को धन्यवाद देती हूँ। स्वस्थ भारत के लिए ढेर सारी शुभकामनाएँ।

सम्पर्क : *उमरियापान-कटनी (म.प्र.)*
मो. 9685294675

उषा सोमानी

चॉकलेट की आत्मकथा

मैं हूँ तुम्हारी सबसे प्यारी दोस्त! रोते बच्चों को हँसाती हूँ, ढेरों खुशियाँ लाती हूँ। चमकीली पन्नियों में लिपट कर, मीठा स्वाद लाती हूँ। बताओ, हूँ मैं कौन? हाँ, मैं तुम्हारी सबसे पसंदीदा मिठाई चॉकलेट हूँ। जो कोको के बीज को भून कर, पीस कर बनायी जाती है।

मुझे मालूम है, तुम मुझे चुपके से फ्रिज से निकालते हो। फिर धीरे-धीरे रेपर खोलते हो और गप्पा-गप्प, गप्पा-गप्प खा जाते हो। तुम्हारी ये शरारत देख, मुझे गुदगुदी होती है।

जब तुम मम्मी के साथ बाजार आते हो और दुकान पर मुझे पाने के लिए रूठते हो। तब मैं भी झाँक-झाँक कर तुम्हें देखती हूँ। तुम्हारा जिद करना, यूँ रूठना, नाटक कर रोना, यह सब देखकर मुझे बहुत मजा आता है। कभी-कभी तो मैं तुम्हारे सपनों में भी आती हूँ और अपना मीठा-मीठा स्वाद चखाती हूँ।

तुम अपने जन्मदिन पर बहुत खुश होते हो क्योंकि जन्मदिन पर तुम्हें बहुत सारे उपहार मिलते हैं। जन्मदिन पर तुम मुझे बाजार से लेकर आते हो। फिर तुम मुझे बड़े गुब्बारे में भरते हो, केक काटने के बाद तुम्हारे मित्र गुब्बारे फोड़ते हैं। मैं नीचे जमीन पर गिरने लगती हूँ, ऊई माँ! मुझे बहुत डर लगता है। परंतु तुम सब झपटकर मुझे अपने हाथों में पकड़ लेते हो और मुझे चोट नहीं लगती। तब मुझे बहुत आनंद आता है।

तुम्हारी तरह मेरा जन्मदिन भी हर साल सात जुलाई को 'वर्ल्ड चॉकलेट डे' के रूप में मनाया जाता है। लोग मुझे भेंट स्वरूप लेते और देते हैं। तब देने वाले और लेने वाले दोनों की खुशी देखकर मैं इठला जाती हूँ।

बाजार में मुझे बनाकर जब रंगीन पन्नियों में लपेटा जाता है, मैं बहुत खुश होती हूँ। बिलकुल वैसे ही जैसे तुम नए कपड़े पहनकर खुश होते हो। एक बात और बताऊँ। मुझे पैक करने के लिए जब डिब्बों में रखा जाता है। मुझे बहुत अच्छा लगता है। मेरा मन भी तुमसे मिलने के लिए बहुत मचलता है।

पता है मुझे इस रूप में आने के लिए एक लंबा सफर तय करना पड़ा। मेरा यह सफर बहुत ही दिलचस्प है। इसकी कहानी तुम्हें सुनाती हूँ। मेरा जन्म स्थल स्पेन है। मैं स्पेन से मैक्सिको गई। मुझे सबसे पहले बनाने वाले लोग मैक्सिको और मध्य अमेरिका के निवासी थे। वहाँ पर मुझे पेय के रूप में पिया जाता था। अमेरिका के लोग कोको के बीजों को पीसकर उसमें विभिन्न प्रकार के मसाले जैसे मिर्ची का पानी, वनीला आदि डालकर एक चटपटा और झागदार तीखा पेय बनाते थे।

बाद में मेरे पेय के तीखे स्वाद को बदलने के लिए इसमें शहद, वनीला के अलावा दूसरी चीजें मिलाकर इसकी कोल्ड कॉफी भी बनायी गई।

मुझे मीठा बनाने का श्रेय यूरोप को जाता है। जिसने चॉकलेट से मिर्च हटाकर दूध और शक्कर डाली। चॉकलेट को पीने की चीज से, खाने की चीज बनायी। 'डॉ. सर हैंस स्लोन' ने मुझे खाने वाली चॉकलेट के रूप में तैयार किया। तुम्हारी सबसे पसंदीदा कैडबरी मिल्क चॉकलेट की विधि 'डॉ. सर हैंस स्लोन' ने ही बनायी।

अरे, अरे! क्या हुआ? अपना सिर क्यों खुजा रहे हो? हा हा हा अच्छा, मेरी यात्रा के बारे में सुनकर तुम्हें बहुत आश्चर्य हो रहा है। मेरी यात्रा है ही बड़ी मजेदार, तीखे से मीठे स्वाद में बदल गई। मेरे मीठे स्वाद के कारण, मैं तुम्हें बहुत पसंद आती हूँ। तुम मुझे खाने के लिए हमेशा लालायित रहते हो परंतु मम्मी कहती हैं कि दाँत खराब हो जाएँगे। मुझे खाने के बाद तुम अच्छे से ब्रश करना। तुम्हारे दाँतों में कीड़े नहीं लगेंगे।

मुझे खाने से छोटे-बड़े, जवान-बूढ़े सभी को बहुत खुशी मिलती है। इसका कारण है, मेरी प्राकृतिक तत्व 'ट्रिप्टोफैन', जो तुम्हारे मूड को बेहतर बनाती है।

इसके साथ-साथ मैं तुम्हारे दिल को भी फायदा पहुँचाती हूँ। हर दिन डार्क चॉकलेट खाने से तुम्हें दिल की बीमारी होने का खतरा कम हो जाता है।

मुझे लेकर तुम अपने भाई-बहन से झगड़ा करते हो, तब मुझे अच्छा नहीं लगता। अब तुम अपने भाई-बहन से झगड़ा मत करना, वरना मैं नाराज हो जाऊँगी। मेरा सेवन करते समय सावधानी रखना। मेरे अत्यधिक सेवन करने से वजन बढ़ना, नींद नहीं आना, कब्जी, ब्लड प्रेशर बढ़ना, हड्डियाँ कमजोर होना आदि समस्याएँ भी हो सकती हैं।

बॉय बच्चों, मैं तुमसे आकर्षक, चमकीली, नई-नई पैकिंग में और नए-नए स्वाद में मिलती रहूँगी।

सम्पर्क : *चितौड़गढ़ (राज.)*
मो. 97850 82444

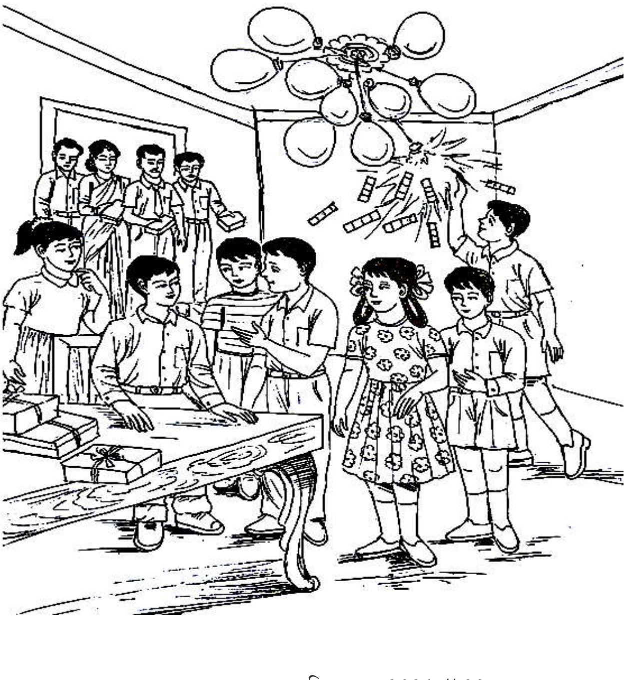

श्याम सुन्दर शर्मा

मैं हूँ वायुयान

मैं वायुयान हूँ। तुमने आकाश में अक्सर ही मुझे मँडराते देखा होगा। रात में जब पक्षी सो जाते हैं उस समय भी मैं आकाश में उड़ता रहता हूँ। मैं बहुत लम्बी-लम्बी यात्रायें करता हूँ। मेरी यात्रायें पक्षियों की यात्राओं से बहुत लम्बी होती हैं और हर मौसम में होती रहती हैं। मैं उनसे बहुत तेज उड़ सकता हूँ। मैं कुछ घंटों में ही दूर-दूर के देशों में पहुँच सकता हूँ। बाढ़ में फँसे लोगों को मैं खाने-पीने की चीजें, कपड़े वगैरह पहुँचा देता हूँ। उन्हें निकालकर सुरक्षित स्थानों पर ले जाता हूँ। जंगल में भटक गये लोगों को मुसीबत से निकाल लाता हूँ। सीमाओं पर लड़ रहे सैनिकों के लिए रसद ले जाता हूँ। मौका पड़ने पर देश के दुश्मनों पर बम भी गिरा देता हूँ। मेरे अनेक रूप हैं- छोटा, मध्यम, बड़ा, एकदम ऊपर उठ जाने वाला, पानी के जहाज पर उतर जाने वाला आदि। मेरी कहानी काफी लम्बी है। मेरा जन्म आज से लगभग पचासी साल पहले हुआ था।

मेरी कहानी उसी समय शुरू हो गई थी जब आदमी धरती पर आया था। वह जमीन पर तो भाग ही सकता था, बंदर की तरह पेड़ों पर भी चढ़ सकता था। मछली की तरह पानी में तैर भी लेता था, पर पक्षियों की तरह आकाश में उड़ नहीं सकता था। वह उन्हें देखकर सोचता रहता था कि क्या कभी वह भी पक्षियों की तरह उड़ सकेगा। हजारों साल तक वह उड़ने के सपने ही देखता रहा। फिर उसने गुब्बारे बनाये। आज से लगभग दो सौ साल पहले फ्रांस में मोंतगोलफायर बंधुओं ने कागज के गुब्बारों में गर्म हवा भरकर उन्हें उड़ाने की तरकीब सीखी। बाद में उन्होंने रेशमी कपड़े के गुब्बारे बनाये और उनमें मुर्गियाँ, बत्तखें और भेड़ें उड़ाईं। बाद में रोजियर और आदलेन्दे नामक दो युवकों ने एक गुब्बारे में पच्चीस मिनट तक उड़ान भी भरी। ये पहले आदमी थे जिन्होंने उड़ान भरने में सफलता प्राप्त की थी।

कुछ समय बाद, हाइड्रोजन ग़ैस की खोज हो जाने के बाद, लोगों ने पाया कि गुब्बारे को उड़ाने के लिये उसमें गर्म हवा की बजाय हाइड्रोजन भी भरी जा सकती है। हाइड्रोजन सबसे हल्की गैस है ओर गुब्बारे में भरने के लिए उसे गर्म करने की जरूरत नहीं होती। दरअसल ज्यादा गर्म करने पर हाइड्रोजन जल उठती है। फ्रांस में चार्ल्स नामक वैज्ञानिक ने रेशमी कपड़े के गुब्बारे में हाइड्रोजन भर कर अनेक सफल उड़ानें भरीं। उस समय इन गुब्बारों में कोई ऐसी मशीन नहीं थी जिसकी मदद से उन्हें घुमाया-फिराया जा सके। वह जिधर हवा बहती उधर की ही दिशा में उड़ने लगता था। पर इन गुब्बारों का अमेरिका के गृह-युद्ध और 1870 में हुये फ्रांस-जर्मनी के युद्ध में बहुत उपयोग किया गया। इस प्रकार के गुब्बारों में बैठकर तीन व्यक्तियों ने उत्तरी ध्रुव से भी उड़ान भरने की कोशिशें कीं, पर वे सफल नहीं हुए।

आज से लगभग एक सौ तीस साल पूर्व गुब्बारों को नियंत्रित करने की कोशिश सबसे पहले की गई। यह कोशिश भी फ्रांस में ही की गई। इसमें गुब्बारे में तीन अश्व शक्ति का भाप का इंजन लगाया गया। इससे गुब्बारा उड़ तो गया और उस पर नियंत्रण भी रखा जा सकता था, पर वह बहुत धीमी गति से यानी एक घंटे में केवल नौ किलोमीटर की गति से ही उड़ पाता था।

पेट्रोल से चलने वाले इंजन के आविष्कार के बाद मेरे पूर्वजों (वायुयानों) की गति बढ़ने लगी। ये इंजन तुम्हारी मोटरों में लगे इंजनों जैसे ही थे। उन पर नियंत्रण रखना भी आसान हो गया। पर अब लोग गुब्बारे बनाने के लिए रेशमी कपड़े की जगह धातुओं की चादर इस्तेमाल करने लगे। इसमें जर्मनी के एक सैनिक अधिकारी काउंट जेपलिन को सफलता मिली। उन्होंने एल्यूमीनियम की चादर का कठोर गुब्बारा बनाया। यह पहले बने गुब्बारों से बहुत अलग किस्म का था। इसमें हाइड्रोजन गैस से भरे थैले रखे जाते थे। इसमें इंजन और यात्रियों के लिए अलग-अलग कमरे थे। दरअसल यह 'हवा में तैर सकने वाला जहाज' (एयरशिप) था। इस रूप में मुझे आसानी से उड़ाया जा सकता था, मनचाही दिशा में घुमाया जा सकता था और आसानी से उतारा भी जा सकता था। इसलिये मेरे इस रूप में बैठकर लोग लम्बी-लम्बी यात्राएँ करने लगे। मेरे इस रूप को लोग इसके आविष्कारक के नाम पर 'जेपलिन' ही कहने लगे।

जेपलिन के रूप में मैं कई सालों तक यूरोप और उत्तर तथा दक्षिण अमेरिका के देशों के बीच बराबर यात्रा करता रहा। मैंने हजारों यात्रियों को अंध महासागर के ऊपर से यात्राएँ कराईं। इसी समय पहला विश्व युद्ध छिड़ गया। यह 1914 से 1919 तक लड़ा गया। इसमें एक तरफ जर्मनी था और दूसरी तरफ इंग्लैंड, फ्रांस, अमेरिका और रूस थे। इस युद्ध में मुझे भी भाग लेने के लिये मजबूर किया गया। साथ ही गुब्बारों का भी उपयोग किया गया।

इस समय तक जेपलिन में बहुत सुधार कर लिये गये थे। मुझ में हाइड्रोजन की जगह हीलियम इस्तेमाल की जाने लगी थी। तुम जानते हो कि हाइड्रोजन जलने वाली गैस है और अगर हाइड्रोजन में कोई और गैस मिल जाती है तो वह विस्फोट भी कर देती है। इसके विपरीत हीलियम हल्की होते हुये (वह हवा से हल्की पर हाइड्रोजन से भारी होती है) भी जलती नहीं है। हीलियम हवा में बहुत ही थोड़ी मात्रा में मौजूद होती है। कभी-कभी वह प्राकृतिक गैस में भी उपस्थित होती है। उसे हवा से प्राप्त करना मुश्किल है, पर प्राकृतिक गैस से प्राप्त करना आसान है। मुझ में इस्तेमाल करने के लिये हीलियम प्राकृतिक गैस से ही प्राप्त की जाती थी, पर वह मुख्य रूप में अमेरिका की टैक्सास नामक जगह से मिलने वाली गैस से ही निकाली जाती थी। इसलिये हीलियम का उपयोग करने वाली अधिकतर एयरशिप अमेरिका में ही बनायी जाती थीं। अन्य देश अपने वायुयानों (एयरशिपों) में हाइड्रोजन का ही इस्तेमाल करते थे। इसलिये अक्सर ही उनमें आग लग जाती थी और जान तथा माल का भारी नुकसान होता रहता था। पर वर्ष 1937 में सबसे बड़ी दुर्घटना 'हिंडनबर्ग' नाम की जर्मन एयरशिप में हुई। अमेरिका के न्यूजर्सी हवाई अड्डे पर उतरते समय उसमें आग लग गई और उसमें बैठे सब यात्री जल कर मर गये। उसके बाद मेरे इस रूप का इस्तेमाल ही बंद हो गया। इसके और भी कारण थे। उस समय तक मेरा ऐसा रूप बन कर तैयार हो गया था जैसा तुम आजकल देखते हो यानी हवाई जहाज (वायुयान)। एयरशिप और वर्तमान वायुयान में अंतर समझाने से पहले एक बात की चर्चा करना जरूरी है। सन् 1926 में एक

विशेष प्रकार के एयरशिप में बैठकर एमंडसन और उनके दो साथियों ने उत्तरी ध्रुव के ऊपर से उड़ान भरी थी। एमंडसन ही वे साहसिक व्यक्ति थे जिन्होंने सबसे पहले दक्षिणी ध्रुव की यात्रा की थी।

जैसा तुम पढ़ चुके हो मेरे एयरशिप के रूप में हाइड्रोजन या हीलियम भरी जाती थी। इससे वह हवा से भी हल्की हो जाती थी। वह गुब्बारे की तरह हवा में तैरती थी। पर आजकल के वायुयान हवा से भारी होते हैं और उसमें उड़ते हैं। वे कुछ हद तक पक्षियों की भाँति होते हैं। पक्षी भी हवा से भारी होते हैं। मेरे इस रूप की कहानी एकदम अलग है।

पहले आदमी ने पक्षियों की तरह 'पंख' लगाकर उड़ने की कोशिश की पर वह असफल रहा। बाद में वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि आदमी के कंधे इतने मजबूत नहीं होते कि वह पंख लगाकर उड़ सके। इसलिये उसे किसी बाहरी 'युक्ति' की मदद लेने की जरूरत होगी। इसी आधार पर पहले ग्लाइडर बनाये गये। उस ग्लाइडर के पंख भी पक्षियों की भाँति थे। उसे लेकर आदमी हवा बहने की दिशा के विपरीत दौड़ता था और फिर छोड़ देता था। इससे कुछ देर के लिये ग्लाइडर हवा में उड़ जाता था। पर यह उड़ना वैसे ही था जैसे पक्षी पंखों को चलाये बिना हवा में स्थिर रहे।

बाद में जर्मन आविष्कारक आटो लिलिनथल ने सन् 1891 में एक ऐसा ग्लाइडर बनाया जिसके पंख चमगादड़ जैसे थे। उसमें फँसकर आदमी भी उड़ सकता था और अपने शरीर को इधर-उधर घुमाकर उसे नियंत्रित भी कर सकता था। लिलिनथल अक्सर ही अपने ग्लाइडर में फँसकर उड़ा करते थे। सन् 1896 में एक दिन जब वे उड़ान भर रहे थे, अपना संतुलन खो बैठे और नीचे गिर कर मर गये।

उनके बाद अनेक लोगों ने ग्लाइडर में सुधार किये और वह उस लायक हो गया कि हवा में सीधा उड़ सके। इन सुधार करने वालों में अमेरिका निवासी दो भाई ऑरविल राइट और विलबर राइट भी थे। डेटन नगर में उनकी साइकिल की दुकान थी। उन्होंने जो ग्लाइडर बनाया, वह और ग्लाइडरों से बेहतर था। उसमें बैठकर उन्होंने सितम्बर-अक्टूबर 1902 में हजारों उड़ानें भरी थीं। बाद में उन्होंने सोचा कि अगर मजबूत, शक्तिशाली पर पेट्रोल से चलने वाले ऐसे हल्के इंजन का, जैसे तुम्हारी मोटर कारों में लगे होते हैं, उपयोग किया जाये तो हवा में भारी मशीन भी आसानी से उड़ सकती है।

उस समय जो ऐसे इंजन उपलब्ध थे, वे शक्तिशाली नहीं थे। इसलिये वे अपना इंजन बनाने में लग गये। उन्होंने सन् 1903 के दिसम्बर माह तक 12 अश्व शक्ति का एक ऐसा इंजन बना भी लिया। पर इसी बीच, अमेरिका में ही, उनसे होड़ लगाने वाला एक प्रतिद्वंद्वी उठ खड़ा हुआ। हुआ यह कि 1890 में अमेरिका के एक भौतिकशास्त्री सेमुअल लैंगले ने मेरे छोटे मॉडलों पर प्रयोग करने शुरू किये। उन्हें सफलता मिली। इसलिए वे मेरे मॉडलों पर शोध करने लगे। अंत में उनके सहायक ने मेरा एक ऐसा नमूना तैयार कर लिया जिसमें पाँच सिलिंडर वाला पेट्रोल इंजन लगा था। उसका नाम उन्होंने रखा 'एयरोड्रोम' (हवाई अड्डा)। आखिर 8 दिसम्बर, 1903, को लैंगले ने मेरे इस मॉडल में उड़ाने भरने की बात सोची। उड़ान देखने के लिये उन्होंने बहुत से पत्रकारों तथा अन्य लोगों को भी बुला लिया।

उस समय तक आजकल जैसे हवाई अड्डे तो होते नहीं थे। साथ ही 'एयरोड्रोम' बहुत हल्का वायुयान था। इसलिये लैंगले ने उसे पास की ही एक नदी, पोटोमैक, में चलने वाली एक मोटरबोट पर रखकर उड़ाने की बात सोची। एयरोड्रोम को उस पर रख दिया गया। लैंगले उसमें बैठ गये। उन्होंने इंजन

चालू किया। पर वायुयान उड़ा ही नहीं। उसके उड़ान भरने वाले गीयर में दोष था। इसलिये ऊपर उठने की बजाय वह पोटोमैक नदी में गिर पड़ा। इससे लैंगले को बहुत दुख और निराशा हुई। उन्होंने मेरे और मॉडल बनाने का काम ही छोड़ दिया। कई वर्ष बाद एक वैज्ञानिक ने मेरे इस मॉडल के गीयर को सुधार कर उसे उड़ाकर दिखा दिया।

पर राइट बंधुओं के साथ ऐसी कोई घटना नहीं घटी। लैंगले के प्रयोग के नौ दिन बाद ही 17 दिसम्बर 1903 को नार्थ कैरोलिया के किटी हॉक तट पर उन्होंने मेरे मॉडल को परखा। उन्होंने मेरे मॉडल को एक ट्रक की मदद से उड़ाया और वह लगभग 12 सेकंड तक 40 मीटर की दूरी तक उड़ा भी। उसमें ऑरविल बैठा हुआ था। यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण घटना थी। पहली बार मेरे हवा से भारी रूप ने, हवा में उड़ कर दिखा दिया था। बाद में उसी दिन दोनों भाइयों ने मेरे उसी मॉडल को थोड़ी-थोड़ी देर के लिये बार-बार उड़ाया।

यह मेरे हवा से भारी रूप का सबसे पहला सफल मॉडल था। इसलिये इसकी थोड़ी चर्चा और कर दूँ। मेरे इस मॉडल में दो पंख थे। ये कपड़े के बने थे और तारों से बाँधकर सही स्थान पर रखे गये थे। उसमें इंजन नीचे वाले पंख में, पायलट की सीट की दाहिनी ओर, लगा था। प्रोपेलर पीछे की ओर लगा था और वह ही उसे हवा में से धकेलता था।

बाद में राइट बंधुओं ने मेरे मॉडल में सुधार किये। दो साल में उन्होंने ऐसा वायुयान बना लिया जो आधे घन्टे तक लगातार उड़कर 40 किलोमीटर की यात्रा कर सकता था। इसके बाद और लोग भी मेरे नये-नये मॉडल तैयार करने लगे। किसी में एक पंख होता, तो किसी में दो पंख और किसी-किसी में तीन पंख भी। इनमें मेरे एक मॉडल ने, जिसमें केवल एक ही पंख था और जिसे फ्रांस के लुई ब्लेरिओल ने बनाया था, सन् 1909 में पहली बार इंग्लिश चैनल पार किया। इंग्लिश चैनल एक समुद्री खाड़ी है जो फ्रांस और इंग्लैंड के बीच स्थित है। इसे बलेरिओल ने अपने वायुयान में बैठकर केवल 37 मिनट में पार कर लिया। तुम में से अधिकांश बच्चों को यह कोई विशेष बात नहीं लगेगी। वे जानते हैं कि मैं तो अब एक घन्टे में 2000 किलोमीटर से भी अधिक की दूरी आसानी से तय कर सकता हूँ। उनकी समझ में वायुयान का 37 मिनट में केवल 50 किलोमीटर दूरी तय करना तो बहुत ही कम है। पर उस समय सन् 1909 में यह गति वास्तव में बहुत तेज मानी जाती थी।

मेरे वायुयान रूप में उसके बाद बहुत सुधार हुए। पहले विश्व युद्ध में मेरे एयरशिप रूप के साथ-साथ मेरे वायुयान रूप ने भी भाग लिया। धीरे-धीरे वायुयान रूप अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया। युद्ध के दौरान उसमें मशीनगन लगायी गई। उससे दुश्मनों की सेनाओं पर बम भी गिराये गये।

पहले विश्व युद्ध के बाद मेरे वायुयान रूप ने और तरक्की की। अब वे भी एयरशिपों की भाँति नियमित रूप रूप से यात्री ढोने लगे और लम्बी-लम्बी यात्राएँ करने लगे। वे भी अंध महासागर पार करके यूरोप के देशों से अमेरिका की यात्रा करने लगे। इनमें 1919 न्यूफाउंडलैंड से आयरलैंड की पहली यात्रा और 1927 में चार्ल्स लिंडबर्ग की यात्राएँ शामिल हैं। शीघ्र ही मैं अन्य देशों की भी नियमित यात्राएँ करने लगा। अब मैं लगभग हर दिन अंध महासागर और प्रशांत महासागर पर से यात्राएँ करता था। इस दौरान मैं भारत में भी आ गया। 1931 में भारत में जे.आर.डी. टाटा ने मुझ में बैठकर पहली उड़ान भरी। यह उड़ान बंबई से कराची तक थी। (उस समय कराची भारत का ही एक नगर था)।

दूसरा विश्व युद्ध होने पर हर पक्ष ने उसमें मुझे खुलकर भाग लेने के लिए मजबूर किया। यह युद्ध 1939 से 1945 तक लड़ा गया था। इसमें एक तरफ जर्मनी, इटली और जापान थे और दूसरी ओर इंग्लैंड, फ्रांस, रूस, अमेरिका और चीन थे। अब तक मेरे ऐसे अनेक रूप विकसित हो चुके थे जो केवल सैन्य कार्यों में ही इस्तेमाल किये जाते थे। लड़ाकू विमान, बमवर्षक विमान, सैन्य सामग्री ढोने वाले विमान आदि मेरे इस प्रकार के कुछ रूप थे। इसी कड़ी में मेरे ऐसे रूप भी तैयार किये गये जो बड़े जल-जहाजों के डेक पर से उड़ान भर सकते थे और वहीं उतर भी सकते थे। ये समुद्र पर भी उतर सकते थे। दूसरे विश्व युद्ध से पहले ही हर देश की सेना ने बड़ी संख्या में मेरे इन रूपों को उपलब्ध करा लिया था।

शुरू में जर्मनी की वायुसेना बहुत शक्तिशाली थी। उसके पास बेहतर लड़ाकू और बमवर्षक विमान थे। इनकी मदद से उसने युद्ध के शुरू के दिनों में फ्रांस को हरा दिया और इंग्लैंड को भी घुटने टिकवा दिये। इसी प्रकार जापान ने अमेरिका को काफी नीचा दिखा दिया था और इंग्लैंड के साम्राज्य के बड़े हिस्से पर कब्जा कर लिया था। पर बाद में अमेरिका में मेरे अधिक शक्तिशाली, दूर तक उड़ान भरने वाले, रूप बना लिये गये। उनकी मदद से उसने जर्मनी और जापान के शहरों पर बम गिराकर तबाही मचा दी। इस बम वर्षा से वे देश घबरा उठे और अंत में उन्होंने हार मान ली।

वे दो भयानक दिन, 6 और 8 अगस्त 1945, जब मुझ पर सवार होकर अमेरिकी सैनिकों ने जापान के शहरों पर परमाणु बम गिराये थे, मुझे याद है। उन्हें याद करके आज भी मैं सिहर जाता हूँ। जैसा कि तुम जानते हो इन परमाणु बमों ने हजारों लोगों को पल भर में मौत की गोद में सुला दिया था और लाखों लोगों को ऐसे रोग लगा दिये जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चल रहे हैं। ऐसी विनाश लीला उससे पहले कभी नहीं हुई थी। ये मेरे लिये बहुत दुखदायी दिन थे।

युद्ध के अंतिम दिनों में जर्मनी ने मेरा एक नया रूप तैयार किया था। वैसे कुछ लोग उसे वायुयान ही नहीं मानते। उसे उड़ाने के लिए पायलट की जरूरत नहीं होती थी। उसे धरती पर बैठे लोग ही उड़ाते थे। उसमें गोला-बारूद भर कर उठाया जाता था। वह ऊपर उठता और उस समय तक यात्रा करता रहता था जब तक गंतव्य स्थान के ऊपर नहीं पहुँच जाता। फिर वह बहुत नीचे उतर कर लक्ष्य से टकरा जाता और विस्फोटित हो जाता। इससे इंग्लैंड को बहुत हानि हुई। मेरे इस रूप को 'वी' अस्त्र कहते थे।

जैसा तुम पढ़ चुके हो कि मेरा इंजन पेट्रोल से चलने वाला उसी किस्म का इंजन होता है जो तुम्हारी मोटर कारों में लगा होता है। इसे आंतरिक दहन इंजन कहते हैं। तुम खुद सोच सकते हो कि मेरा इंजन कार के इंजन से बहुत अधिक शक्तिशाली होता है। आमतौर से उसकी शक्ति 300 अश्व शक्ति होती है। मेरे अधिकांश रूपों में एक से अधिक इंजन होते हैं। इनकी संख्या आमतौर पर चार से छह तक होती है। मेरे कुछ रूपों में प्रयोग के तौर पर बारह इंजन लगाये गये हैं। आमतौर से इंजनों के साथ सुपरचार्जर भी लगा होता है जो उड़ान भरते समय अतिरिक्त शक्ति प्रदान करता है।

तुमने मेरे अनेक रूपों मैं, मेरे सामने की ओर एक पंखा घूमते देखा होगा। यह पंखा प्रोपेलर कहलाता है। यह मेरा एक जरूरी अंग है जो मेरी उड़ान के दौरान हवा में उसी तरह 'धँसता' जाता है जैसे पेंच लकड़ी में धँसता है।

दूसरे विश्व युद्ध के अंत में मेरा एक और रूप सामने आया। वह था जैट विमान। वैसे आजकल

अधिकांश बड़े वायुयान जैट विमान ही होते हैं। ये पेट्रोल इंजन वाले विमान से अलग किस्म के होते हैं। वैसे इनमें भी पेट्रोल ही जलता है। पर वे न्यूटन की गति के तीसरे नियम के अनुसार चलते हैं। तुम जानते हो कि न्यूटन की गति का तीसरा नियम है 'हर क्रिया की एक प्रतिक्रिया होती है। प्रतिक्रिया का बल क्रिया के बराबर ही होता है पर दिशा विपरीत होती है।' मेरे जैट रूप में ईंधन के जलने से जो गैसें पैदा होती हैं, उन्हें मेरे पिछले भाग से, नोजलों में से तेजी से बाहर निकाला जाता है। इसके फलस्वरूप मैं आगे बढ़ता जाता हूँ। ये गैसें जैट के रूप में निकलती हैं, इसीलिये मेरे इस रूप को 'जैट' कहा जाता है।

वैज्ञानिकों के अनुसार मेरे जैट रूप में चार प्रकार के इंजन इस्तेमाल हो सकते हैं- राकेट, टर्बोजैट, टर्बोप्रॉप और रैमजैट। राकेट इंजन में ईंधन को जलने के लिये बाहर से (वायुमंडल से) आक्सीजन लेने की जरूरत नहीं पड़ती। उसके ईंधन में ही ऐसे पदार्थ मिले होते हैं जो आक्सीजन देते रहते हैं। पर अन्य इंजनों को आक्सीजन वायुमंडल से लेनी पड़ती है। मेरे टर्बोजैट इंजन में वायुमंडल से ली गई आक्सीजन को दबाया जाता है, ईंधन में मिलाया जाता है और फिर ईंधन को जलाया जाता है। इससे जो गैसें उत्पन्न होती हैं वे इंजन में लगी टरबाइन चलाती हैं। फिर नाजल में से बाहर निकल जाती हैं। आजकल मेरे अधिकांश जैट रूपों में टर्बोजैट इंजन ही लगे होते हैं। ये इंजन मेरे उन रूपों के लिये विशेष रूप से उपयुक्त होते हैं, जिन्हें लम्बी-लम्बी यात्राएँ करनी पड़ती हैं।

मेरे टर्बोप्रॉप रूप में टरबाइन और प्रोपेलर दोनों लगे होते हैं। इसमें बाहर से निकलने वाली गैसें प्रोपेलर चलाती हैं। टर्बोप्रॉप इंजन वाले रूप बहुत तेज नहीं उड़ सकते पर ये घटिया किस्म का ईंधन जला सकते हैं।

सामान्यत: मैं भूमि पर ही उतरता हूँ और वहीं से उड़ान भरता हूँ। साथ ही उड़ान भरने के लिये पहले मुझे हवाई पट्टी पर दौड़ना पड़ता है। इसी तरह उतरते समय मैं काफी दूर तक हवाई पट्टी पर दौड़ता जाता हूँ। धीरे-धीरे मेरी गति कम होती जाती है। तब ही मैं रुक पाता हूँ। हवाई पट्टी पर दौड़ने के लिये मेरे निचले भाग में चक्के लगे होते हैं। उड़ान के दौरान ये चक्के मेरे शरीर से चिपक जाते हैं। पर उतरने से पहले इनका खुलना बहुत जरूरी होता है। अगर ये नहीं खुल पाते तो दुर्घटना हो सकती है।

पर मेरे उस रूप में, जिसे सागर पर उतरना होता है तथा वहीं से उड़ान भरनी होती है, चक्कों की जगह लम्बी पट्टियाँ लगी होती हैं, जिन्हें 'फ्लोट' कहते हैं। इन फ्लोटों की मदद से वह सागर पर उतर सकता है और वहीं से उड़ान भर सकता है। मेरे इस रूप को 'सीप्लेन' (समुद्री विमान) कहते हैं।

मेरे ऐसे रूप भी बना लिये गये हैं जो जरूरत पड़ने पर सागर और जमीन दोनों पर उतर सकते हैं और वहाँ से उड़ान भर सकते हैं। जल जहाजों (एयर क्राफ्ट कैरियर) पर ऐसे ही विमान रखे जाते हैं।

तुमने मेरा एक रूप अनेक बार देखा है। दरअसल मेरे इस रूप को तुम अक्सर ही देखते हो। यह है हेलीकाप्टर। जैसा कि तुमने देखा है हेलीकाप्टर के ऊपर एक बहुत बड़ा पंखा लगा होता है। उड़ान के दौरान इसकी पंखड़ियाँ घूमती रहती हैं। वैसे हेलीकाप्टर में वायुयान जैसे पंख नहीं होते। यह बहुत थोड़ी-सी जगह से एकदम ऊपर उड़ान भर सकता है और छोटे-से मैदान या बड़ी इमारत की छत पर उतर भी सकता है। इसे उड़ान भरने और उतरने के लिये हवाई पट्टी की आवश्यकता नहीं होती।

एक और बात में भी हेलीकाप्टर वायुयान से बेहतर होता है। वह एक स्थान पर मँडरा सकता है जबकि वायुयान को आगे बढ़ना जरूरी होता है। हेलीकाप्टर के रूप में, मैं वायुयान की भाँति तेज नहीं

उड़ सकता पर भारी वजन जरूर उठा सकता हूँ। ट्रक बाँधकर उड़ जाना मेरे लिये मामूली बात है। मौका पड़ने पर मैं युद्ध में इस्तेमाल किये जाने वाले बड़े टैंक भी लेकर उड़ सकता हूँ। मजेदार बात यह है कि मैं उन्हें आसानी से, सही सलामत उतार भी सकता हूँ। पर्वतों को पार करने, जंगल में भटक गये लोगों को निकालने, बाढ़ में घिर गये आदमियों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के लिये मेरा हेलीकाप्टर रूप वायुयान से कहीं बेहतर होता है। भारी ट्रैफिक में फँस गई गाड़ियों को निकालने के लिये भी हैलीकाप्टर बहुत अच्छा साधन है। आजकल सैन्य कार्यों में भी इसका इस्तेमाल किया जाता है।

आजकल मेरा ऐसा रूप बनाने की कोशिश की जा रही है जो मेरे वायुयान रूप की तरह बड़ा हो, पर हेलीकाप्टर की भाँति बिना हवाई पट्टी के उड़ान भर सके और उतर सके। साथ ही उसके उड़ने की गति वायुयान जैसी ही तेज हो। वैसे क्या तुम जानते हो कि मेरा वायुयान रूप कितनी तेजी से उड़ सकता है? आवाज की गति से भी बहुत तेज। अब मेरे ऐसे रूप बन गये हैं, और वे नियमित रूप से उड़ान भर रहे हैं, जो आवाज से दूनी गति से उड़ सकते हैं। वैज्ञानिक इससे भी अधिक गति से उड़ान भरने वाले वायुयान बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

जहाँ तक ऊँचाई का सवाल है, मैं एवरेस्ट-चोटी से तिगुनी से भी अधिक ऊँचाई तक उड़ सकता हूँ। जैसा कि तुम जानते हो एवरेस्ट संसार की सबसे ऊँची चोटी है। मैं शायद उससे भी ऊँचा उड़ जाऊँ, पर कभी भी राकेट की तरह वायुमंडल छोड़कर खुले अंतरिक्ष में नहीं जा सकता क्योंकि मुझे उड़ने के लिये हवा चाहिये और अंतरिक्ष में एक सीमा के बाद हवा नहीं है।

वैज्ञानिक मुझे बड़ा से बड़ा बनाने की भी कोशिश कर रहे हैं। अब ऐसे वायुयान बहुत सामान्य हो गये हैं जिनमें एक समय में 300 से भी अधिक आदमी बैठ सकते हैं। भारत में भी ऐसे वायुयान रोज उड़ानें भरते हैं। यात्री-विमान अंदर से बहुत आरामदेह होते हैं। इनके अंदर बैठे यात्रियों को न तो झटके लगते हैं, न फालतू आवाज आती है और न उन्हें बहुत ऊँचाई पर उड़ान भरने के दौरान हवा की कमी महसूस होती है क्योंकि वायुयान के भीतर हवा का दबाव और ताप सामान्य बना कर रखा जाता है। अब मेरे ऐसे रूप बनाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं जो और बड़े हों, और तेजी से उड़ान भरें तथा और बोझ ढो सकें।

तुम्हारे दिमाग में एक प्रश्न रह-रह कर उठ रहा होगा। मेरा वायुयान रूप हवा से भारी होता है, फिर वह हवा को चीरते हुये इतने ऊपर कैसे उठ जाता है? क्या पृथ्वी गुरुत्वाकर्षण बल उसे नीचे की ओर नहीं खींचता? मैं हवा में उसी तरह आगे बढ़ता हूँ जैसे स्टीमर पानी में बढ़ता है। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल के फलस्वरूप मैं भी नीचे की ओर जाता हूँ, पर एक और बल मुझे ऊपर की ओर उठाता है। ऊपर उठाने वाला बल, जिसे वैज्ञानिक 'उत्थान' -(लिफ्ट) कहते हैं, पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल से अधिक होता है। इसलिये मैं ऊपर उठ जाता हूँ। जब उत्थान बल कम होता है तब मैं ऊपर नहीं उठ पाता। यह उत्थान बल मुझे मेरे विशेष आकार से मिलता है। मेरी ऊपरी सतह कुछ वक्र होती है और आगे का भाग पिछले भाग की अपेक्षा भारी होता है। उड़ान भरते समय मेरे पंख एक खास कोण पर झुक जाते हैं। इससे वे अपने नीचे की हवा को दबाते हैं। पर हवा की गैसों के अणु लचीले होते हैं। इसलिये वे पंखों को ऊपर की ओर धकेलते हैं। फलस्वरूप पंख ऊपर की ओर उठते हैं और मैं उड़ने लगता हूँ। बच्चो! यही मेरे उड़ने की कहानी है।

श्याम सुन्दर शर्मा

मैं हूँ चुम्बक

किसी कठिन काम के बारे में तुमने एक कहावत सुनी होगी–'भूसे के ढेर में सुई को ढूँढ़ना'। सचमुच भूसे के ढेर में कोई छोटी सुई गिर जाये तो उसे ढूँढ़ निकालना आसान नहीं है। पर यह काम मैं आसानी से कर सकता हूँ। यही नहीं बीच समुद्र में राह भटक गये जहाज को मैं सही दिशा बताता हूँ। मैं केवल बिजली पैदा ही नहीं करता बल्कि बिजली के बहुत से यंत्रों को चलाता भी हूँ। अगर मैं न होऊँ तो तुम्हारी बिजली की मोटर और डायनामो आदि यंत्र चल ही नहीं सकते। मैं उनका मुख्य अंग हूँ। तुम्हारे घर में लगी बिजली की घंटी से लेकर रेडियो तक अनेक इलैक्ट्रॉनिक यंत्रों का मुख्य घटक मैं ही हूँ। वैसे मैं पृथ्वी के भीतर भी विद्यमान हूँ। और सबसे बड़ी बात यह है कि मेरे भी ध्रुव होते हैं। बताओ मैं कौन हूँ? मैं हूँ चुम्बक।

जब तुम किसी ऐसे प्रियजन की बात करते हो जो तुम्हें आकर्षित करता है तब अनायास ही उसकी तुलना तुम मुझ से कर बैठते हो। तुम्हारे मुँह से एकाएक निकल पड़ता है 'मुझे उससे उतना लगाव है जितना चुम्बक को लोहे से होता है'। लोहे के प्रति मेरा आकर्षण बहुत अधिक है। अगर मैं लोहे की किसी वस्तु के निकट जाता हूँ तो मेरा स्वाभाविक आकर्षण जोर मारने लगता है और मैं उस वस्तु से एकदम सट जाना चाहता हूँ। यदि मैं लोहे की वस्तु के पास न जा सकूँ तो उसे अपने पास बुलाने की कोशिश करने लगता हूँ। इसी आकर्षण के फलस्वरूप मैं भूसे के ढेर में से (लोहे की) सुई भी ढूँढ़ निकालता हूँ।

अगर तुम मुझे धागे से इस प्रकार लटका दो कि मैं बिना किसी रुकावट के घूम सकूँ तब मेरा एक सिरा उत्तर दिशा की ओर होगा और दूसरा दक्षिण की ओर। मेरे इसी गुण का उपयोग करके नाविक खुले सागर में अपने जहाजों की दिशा ठीक कर लेते हैं। अपने अनेक गुणों और उनका उपयोग करके बनाये गये यंत्रों के बारे में बताने से पहले मैं तुम से अपने इतिहास की कुछ चर्चा कर लूँ।

मुझे यह नहीं मालूम कि मनुष्य को मेरे चुम्बकत्व (किसी चुम्बकीय पदार्थ को आकर्षित करने के गुण) का पता सबसे पहले कब चला। कहा जाता है कि प्राचीन यूनान के निवासियों को, ईसा मसीह के जन्म के कई सौ वर्ष पहले, इस गुण के बारे में मालूम हो गया था। ईसा-पूर्व छठी शताब्दी में यूनान के एक विख्यात विद्वान थेल्स ने ऐसे पत्थर की चर्चा की थी जो उसी पत्थर के अन्य

टुकड़ों को अपनी ओर आकर्षित कर लेता था अथवा उन्हें अपने से दूर धकेल देता था (प्रतिकर्षित करता था)। इस पत्थर को वे 'लोडस्टोन' कहते थे। आज भी इस पत्थर का यही नाम प्रचलित है। यह यूनान के थेल्स इलाके के मैग्नेशिया शहर, जिसे मैग्नेटीज ने बसाया था, के निकट पाया जाता था। इसलिए वह पत्थर 'मैग्नेट' कहलाने लगा। कुछ लोगों का यह भी कहना है कि मेरे लोहे को आकर्षित करने के गुण का पता सबसे पहले मैग्नेस नाम के एक गड़रिये ने लगाया था। इसलिए मेरा नाम मैग्नेट पड़ा। खोजा चाहे किसी ने भी हो, अंग्रेजी में आज भी मेरा नाम 'मैग्नेट' ही है। वैसे लोडस्टोन वास्तव में मैग्नेटाइट-लोहे का चुम्बकीय ऑक्साइड है। वह पहला स्थायी चुम्बक था।

आज से लगभग 4700 वर्ष पहले ही चीन के निवासियों ने एक अनोखी बात जान ली थी। उन्होंने पता लगाया कि अगर लोहे के टुकड़े को इस प्राकृतिक चुम्बकीय चट्टान के साथ रगड़ने के बाद मुक्त रूप से लटका दिया जाये तो वह उत्तर-दक्षिण दिशा में व्यवस्थित हो जाता है। तुम पढ़ चुके हो कि यह मेरा एक प्रमुख गुण है। इसका मतलब यह हुआ कि चुम्बकीय चट्टान से रगड़ने के बाद लोहे का टुकड़ा भी मुझ में बदल जाता है यानी चुम्बक बन जाता है। यह भी मेरा एक मुख्य गुण है। आज भी तुम प्रयोगशाला में चुम्बक बनाने के लिए लोहे के टुकड़े को चुम्बक से रगड़ते हो।

पुराने जमाने में भी लम्बी-लम्बी यात्राएँ करने वाले नाविक जानते थे कि लोहे से बने जलयानों को कुछ चट्टानों के निकट नहीं लाना चाहिए। वे चट्टानें जहाज को अपनी ओर खींच लेती थीं। क्योंकि उनमें चुम्बकीय खनिज-मैग्नेटाइट मौजूद होता था।

आज से करीब 700 वर्ष पहले एक ऐसे दिशासूचक यंत्र (कम्पास) का आविष्कार कर लिया गया था जिसमें इस्पात की बनी चुम्बकीय सुई इस प्रकार लगी होती थी कि वह आड़े धरातल में मुक्त रूप से घूम सके।

सन् 1600 में इंग्लैंड के विलियम गिलबर्ट ने बताया कि पृथ्वी खुद चुम्बक की तरह कार्य करती है और इसी कारण मुक्त रूप से लटकती हुई चुम्बक एक तरफ कुछ नीचे की ओर झुक जाती है।

आज तुम्हें मालूम है कि मैं (चुम्बक) और बिजली भाई-बहन हैं। पर पहले लोगों को यह नहीं मालूम था कि मुझ में और बिजली में कोई संबंध है। वे हमें बिल्कुल अलग-अलग चीजें मानते थे। इस बारे में पहली खोज डेनमार्क के वैज्ञानिक हान्स क्रिश्चियन ऑरस्टेड ने की। उन्होंने अपने प्रयोगों से यह पता लगाया कि उस तार के निकट, जिसमें बिजली की धारा बह रही हो, मेरा (चुम्बकीय) क्षेत्र बन जाता है। ऐसे तार के निकट अगर मैं चला जाता हूँ तो धारा मुझ पर अपना असर डालने लगती है। मेरे छोटे रूप, जिन्हें चुम्बकीय सुई (मैग्नेटिक नीडल) कहते हैं, ऐसे तार के निकट जाने पर अपनी दिशा से बहकने लगते हैं।

बाद में इस बारे में और खोजबीन करने पर पाया गया कि बिजली और मुझ (चुम्बकत्व) में घनिष्ठ संबंध है। तुम लोगों में से जो बच्चे भौतिकी में रुचि रखते हैं, उन्होंने वैज्ञानिक आन्द्रे मेरी एम्पीयर का नाम जरूर सुना होगा। उन्हीं के नाम पर बिजली की शक्ति मापने की एक इकाई का नाम भी 'एम्पीयर' रखा गया है। उन्होंने ही यह बात बतायी थी कि बिजली के परिपथ में बहने वाली धारा

एक चुम्बकीय खोल (शैल जिसकी शक्ति का हिसाब लगाया जा सकता है) के बराबर होती है। अब ऐसे अनेक सिद्धांतों की खोज की जा चुकी है जिनकी मदद से मेरे और बिजली के बीच की घनिष्ठता दर्शायी जा सकती है। आज मुझे बिजली में बदला जा सकता है और बिजली को मुझ में। दरअसल अपने घरों में तुम जो बिजली इस्तेमाल करते हो वह चुम्बकत्व को बिजली में बदलकर ही पैदा की जाती है। बिजलीघरों में, चाहे वे पानी से भाप बनाकर उसका उपयोग करते हों अथवा गिरते हुए पानी का, मेरे एक बहुत बड़े रूप का इस्तेमाल होता है। मेरा यह रूप घोड़े की नाल जैसा होता है और उसके प्रभावी क्षेत्र में (जिसमें उसका प्रभाव स्पष्ट रूप से मौजूद होता है) तार की कुंडली घुमाने से बिजली बन जाती है। इस बिजली को तारों में से बहाकर घरों और कारखानों तक पहुँचाया जाता है।

तुमने अपने स्कूल की प्रयोगशाला में मुझे देखा होगा। वहाँ आमतौर पर मेरे दो रूप मौजूद होते हैं-पहला सीधा दंडनुमा (छड़) और दूसरा अंग्रेजी के 'यू' अक्षर जैसा। वैज्ञानिकों की दृष्टि में दूसरा आकार घोड़े की नाल से अधिक मिलता है। इसलिए उसे 'नाल चुम्बक' कहते हैं। इस बारे में तुमने यह भी गौर किया होगा कि एक डिब्बे में मेरे एक नहीं बल्कि दो दंड इस प्रकार रखे जाते हैं कि एक दंड का उत्तर ध्रुव दूसरे दंड के दक्षिण ध्रव के निकट हो। साथ ही मेरे दोनों दंडों के दोनों सिरों पर लोहे का एक-एक टुकड़ा रखा जाता है जो उनसे एकदम चिपका रहता है। इस टुकड़े को 'कीपर' कहते हैं। पर नाल चुम्बक एक डिब्बे में एक ही रखी जाती है और उसके दोनों सिरों को जोड़ता हुआ कीपर होता है। कीपर रखने से क्या होता है? इसको समझने के लिए चुम्बकीय ध्रुव, बल रेखाएँ, चुम्बकीय प्रेरणा आदि को समझना होगा।

तुम मेरा एक दंड लो और उसे लोहे की कीलों के पास ले जाओ। तुम देखोगे कि कीलें दंड से चिपक जाती हैं। ध्यान से देखने पर तुम पाते हो कि दंड के सिरों पर कीलों की संख्या सबसे अधिक है और जैसे-जैसे तुम दंड के मध्य भाग में तो एक-दो कीलें ही चिपकी मिलती हैं। नाल चुम्बक कीलों के निकट ले जाने पर भी ऐसा ही होता है। इससे तुम स्वयं ही यह नतीजा निकाल लोगे कि मेरा आकर्षण बल मध्य भाग की अपेक्षा सिरों पर अधिक होता है क्योंकि उन पर मेरे ध्रुव स्थित होते हैं। ये 'उत्तर ध्रुव' और 'दक्षिण ध्रुव' कहलाते हैं। यह जानने के लिए कि उत्तर ध्रुव कौन-सा है और दक्षिण ध्रुव कौन-सा, मुझे धागे से ऐसे लटका दो कि मैं मुक्त रूप से घूम सकूँ। मैं अपने आप एक खास स्थिति में आकर रुक जाऊँगा। मेरा जो सिरा उत्तर दिश की ओर होगा वही उत्तर ध्रुव है और जो दक्षिण दिशा की और होगा वह दक्षिण ध्रुव होगा। इस प्रयोग के बाद तुम कह सकते हो कि 'उत्तर-ध्रुव' की बजाय उसे 'उत्तर दिशा ढूँढ़ने वाला ध्रुव' कहना चाहिए। इसी प्रकार दक्षिण ध्रुव को 'दक्षिण दिशा ढूँढ़ने वाला ध्रुव' कहना बेहतर होगा। वैसे ध्रुव बिंदु नहीं होते। आमतौर पर मेरे उत्तर ध्रुव पर अंग्रेजी का 'एन' अक्षर और दक्षिण ध्रुव पर 'एस' अक्षर खुदा रहता है।

मेरा दंड रूप लो और उसे काँच की पट्टी के नीचे रखो। काँच के ऊपर की ओर लोहे का बुरादा डाल दो। लोहे के कण कुछ स्थानों पर इकट्ठे हो जाएँगे। काँच को थोड़ा-सा हिला दो। तुम देखोगे कि ऐसा करने से एक विशेष आकृति बन जाती है। इस आकृति में कुछ वक्र रेखाओं पर, जो मेरे एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक जाती प्रतीत होती है, लोहे के कण व्यवस्थित हो जाते हैं। जैसे-जैसे तुम

मुझ से दूर होते जाते हो ये रेखाएँ अस्पष्ट होती जाती हैं और एक दूरी के बाद लोहे के कणों पर मेरा 'आकर्षण' बिल्कुल ही समाप्त हो जाता है। इस बात को मैं इस प्रकार कहना पसंद करूँगा–मेरे आस-पास और उस दूरी तक जहाँ तक मेरा प्रभाव महसूस होता है वहीं मेरा चुम्बकीय क्षेत्र है। इसमें मेरी बल रेखाएँ होती हैं जो एक से दूसरे ध्रुव तक जाती हैं।

एक प्रयोग और करो। मेरे दंड को धागे की मदद से इस प्रकार लटका दो कि वह आड़ी अवस्था में, बिना किसी रुकावट के घूम सके। कुछ देर में वह इस स्थिति में आ जाएगा कि उसका उत्तर ध्रुव, उत्तर की ओर होगा और दक्षिण ध्रुव दक्षिण की ओर। पहले दंड के उत्तर ध्रुव के पास मेरे एक अन्य दंड का उत्तर ध्रुव धीरे-धीरे लाओ। ऐसा करने पर तुम्हें एक अजीब बात देखने को मिलेगी। लटके हुए दंड का उत्तर ध्रुव उससे दूर भागने की कोशिश करता है। साथ ही दक्षिण ध्रुव उसके निकट आने का प्रयत्न करने लगता है। अब मेरे लटके हुए दंड के उत्तर ध्रुव के पास मेरे दूसरे दंड का दक्षिण ध्रुव लाओ। उत्तर ध्रुव तेजी से दक्षिण ध्रुव की ओर इस प्रकार आता है मानो वह उसके गले लगना चाहता हो।

इस बात को विज्ञान के विद्यार्थी इस प्रकार कहते हैं 'विपरीत ध्रुव एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं और समान ध्रुव विकर्षित करते हैं (दूर हटाते हैं)'।

इस बारे में एक और प्रयोग करो। मेरे दंड के एक ध्रुव को लोहे की एक कील के पास लाओ। कील उससे चिपक जाएगी। अब इस कील के दूसरे सिरे (जो मुझ से दूर हो) के पास और कील लाओ। वह पहली कील के साथ लटक जाएगी। दूसरी कील के निचले सिरे के पास तीसरी कील लाने पर वह भी लटकने की कोशिश करेगी। पर वह कभी लटकती है और कभी छूट जाती है। इससे ऐसा लगता है कि मेरे दंड से दूरी जितनी बढ़ती जाती है आकर्षण बल कम होता जाता है। वास्तव में आकर्षण बल दूरी के वर्ग के अनुपात में कम होता जाता है। उदाहरण के लिए एक सेंटीमीटर दूरी पर अगर आकर्षण बल ठीक 'एक' है तो दो सेंटीमीटर की दूरी पर वह आधा नहीं बल्कि 1/4 रह जाएगा और तीन सेंटीमीटर की दूर पर 1/9 अंश ही रह जाएगा।

इसी में तुम एक प्रयोग और कर सकते हो। मेरा एक ध्रुव लो और उस ध्रुव को अच्छी तरह देख लो कि वह उत्तर है या दक्षिण। मान लो वह उत्तर ध्रुव है। उस सिरे के पास एक कील ले जाओ जो उससे चिपक जाएगी। अब पहली कील के दूसरे सिरे (जो मुझसे दूर हो) के पास चुम्बकीय सुई का दक्षिण ध्रुव लाओ। कील सुई की ओर आकर्षित होती प्रतीत होगी। इससे तुम यह परिणाम निकाल सकते हो कि कील का वह सिरा उत्तर ध्रुव बन गया। अगर ऐसा नहीं होता तो वह चुम्बकीय सुई से दूर भागने की कोशिश करता। ऐसे ही प्रयोगों से वैज्ञानिकों ने यह परिणाम निकाला कि 'आकर्षित करने से पहले मेरे ध्रुव लोहे की वस्तु या अन्य चुम्बक में विपरीत ध्रुव उत्पन्न करने की कोशिश करते हैं। विपरीत ध्रुव उत्पन्न होते ही उनमें आपस में आकर्षण हो जाता है'।

जब एक सिरे पर एक (विपरीत) ध्रुव है तब दूसरे सिरे पर समान ध्रुव होना चाहिए। इस प्रकार किसी वस्तु में ध्रुव उत्पन्न करने की कोशिश को 'चुम्बकीय प्रेरण' कहा जाता है। इसी चुम्बकीय प्रेरण के कारण समान ध्रुव एक-दूसरे को विकर्षित करते हैं।

कुछ बच्चे पूछ सकते हैं कि इस प्रयोग में कील के दूसरे सिरे के पास चुम्बकीय सुई (जो बहुत छोटी चुम्बकीय दंड होती है।) ही क्यों लायी गयी? उसके स्थान पर अगर दूसरा दंड चुम्बक या नाल चुम्बक ले आते तो क्या होता? दंड चुम्बक या नाल चुम्बक सुई की तुलना में अधिक शक्तिशाली होता है। कील के दूसरे सिरे पर बहुत हल्का चुम्बकत्व होता है। इसलिए शक्तिशाली चुम्बक का ध्रुव कील के उस सिरे पर अपने से विपरीत ध्रुव को इतनी शक्ति से प्रेरित कर देता कि उस पर प्रेरित ध्रुव (चाहे वह समान हो या विपरीत) की शक्ति क्षीण हो जाती और वह दूसरी चुम्बक से चिपक जाता। इससे हमें पता नहीं चल पाता कि कील के दूसरे सिरे पर कौन-सा ध्रुव बना है।

एक बार फिर मैं कीपर की बात कहना चाहूँगा। मैंने बताया था कि दो दंड चुम्बकों को एक साथ इस प्रकार रखा जाता है कि उनके विपरीत ध्रुव ही पास-पास रहें। ऐसा करने के लिए उन पर एक कीपर रख दिया जाता है। मेरे एक दंड का उत्तर ध्रुव, कीपर के निकट के सिरे में दक्षिण ध्रुव और दूर के सिरों में उत्तर ध्रुव प्रेरित करता है। इसी तरह दूसरे दंड का दक्षिण ध्रुव कीपर निकट के सिरे में उत्तर ध्रुव और दूर के सिरे में दक्षिण ध्रुव प्रेरित करता है। इस प्रकार दोनों दंड कीपर के सिरों पर एक ही तरह के ध्रुव प्रेरित करते हैं और दंडों के ध्रुवों को आपस में बल मिलता रहता है जिससे वे एक-दूसरे से चिपके रहते हैं।

लोहा, इस्पात, निकिल, कोबाल्ट, एलनिको जैसे कुछ पदार्थ आसानी से मेरे रंग में रंग जाते हैं यानी वे आसानी से चुम्बक बन सकते हैं। अधिकांश बच्चे लोहा, इस्पात, निकिल के बारे में तो जानते हैं पर उनके लिए कोबाल्ट और एलनिको नये नाम हो सकते हैं। कोबाल्ट एक धातु है और एलनिको एलूमीनियम, निकिल और कोबाल्ट को मिला कर बनायी गयी मिश्र धातु है (मिश्र धातु दो या अधिक धातुओं का मिश्रण होती है)। वैसे इस्पात भी मिश्रण है। इसमें दो वस्तु जरूर मौजूद होती हैं- लोहा और कार्बन। जरूरत पड़ने पर उसमें फास्फोरस, कोबाल्ट, मैंग्नीज आदि वस्तुएँ भी मिलायी जा सकती हैं।

ऊपर बतायी गयी धातुएँ और मिश्र धातुएँ 'लौहचुम्बकीय' (फैरोमैग्नेटिक) पदार्थ कहलाती हैं। जब मैं लौहचुम्बकीय पदार्थों से बनाया जाता हूँ तब मेरी शक्ति बहुत अधिक होती है। इनसे मेरे ऐसे रूप भी बनाये जा सकते हैं जिनमें लंबे समय तक मेरे गुण (चुम्बकत्व) बने रहते हैं। इन्हें स्थायी चुम्बक कहते हैं। वैसे मेरे ऐसे रूप भी होते हैं जिनमें मेरे गुण कुछ समय तक, जब तक वे मेरे किसी अन्य शक्तिशाली रूप अथवा बिजली की धारा के प्रभाव में हों, ही विद्यमान रहते हैं। बाद में वे समाप्त हो जाते हैं। तुम्हें जान कर अचरज होगा कि आजकल लौहचुम्बकीय पदार्थों में वैज्ञानिक सिरेमिक और प्लास्टिक को भी शामिल कर लेते हैं। जब सिरेमिक को मुझ में बदल दिया जाता है यानी जब उसका चुम्बक बना लिया जाता है तब वह स्थायी चुम्बक हो जाता है। उसका इस्तेमाल इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है। जब मेरे लचीले रूपों की जरूरत होती है तब प्लास्टिक का उपयोग किया जाता है। सबसे शक्तिशाली चुम्बक एलनिको V मिश्र धातु से ही बनता है।

लौहचुम्बकीय पदार्थों के साथ कुछ ऐसे अन्य पदार्थ भी हैं जिन्हें मेरे क्षेत्र में रखने पर उनके चुम्बकत्व में अस्थायी तौर से हल्की-सी बढ़त हो जाती है। लोहा, कोबाल्ट, क्रोमियम और मैंग्नीज

धातुओं के लवणों के साथ ऐसा होता है। कुछ ऑक्साइडों के साथ भी यही स्थिति आती है। मजेदार बात यह है कि ऑक्सीजन गैस में भी यह गुण होता है। जैसा कि तुम जानते हो ऑक्सीजन प्राणप्रद गैस है और उसके बिना हम जीवित नहीं रह सकते। वह गैस भी मेरे गुण दर्शाती है। ऐसे पदार्थों को वैज्ञानिक 'अनुचुम्बकीय' (पैरामैग्नेटिक) पदार्थ कहते हैं। यह कुछ कठिन नाम है। पर वैज्ञानिक, वस्तुओं के गुणों का सही-सही वर्णन करने के लिए कभी-कभी ऐसे ही नामों का उपयोग करते हैं।

कुछ बच्चे पूछ सकते हैं कि जब कुछ पदार्थ मेरे क्षेत्र में रखने पर थोड़ा बहुत मेरे रंग में रंग जाते हैं तब क्या ऐसे पदार्थ भी होते हैं जो मेरे क्षेत्र में आने पर भी मेरी बिरादरी में शामिल नहीं होते यानी वे चुम्बक नहीं बनते? हाँ! हमारे आस-पास के अधिकांश पदार्थ ऐसे ही हैं। कुछ ऐसे भी पदार्थ हैं जो आमतौर से हल्के रूप में मेरा गुण (चुम्बकत्व) दर्शाते हैं पर मेरे क्षेत्र में रखते ही उनके इस गुण में बढ़ोतरी होने की बजाय कमी आ जाती है। ऐसे पदार्थों को 'प्रतिचुम्बकीय' (डायमैग्नेटिक) पदार्थ कहते हैं। बिस्मथ एक ऐसा ही पदार्थ है। तुम में से कुछ बच्चे जानते होंगे कि बिस्मथ ऐसा तत्त्व है जिसमें कुछ गुण धातुओं के होते हैं और कुछ गैर-धातुओं के। हीलियम, नियोन और ऑर्गोन जैसी दुर्लभ गैसें भी प्रतिचुम्बकीय गुण दर्शाती हैं।

अब सवाल यह उठता है कि आखिर वे कौन-सी चीजें (कण, आवेश) हैं जो किसी पदार्थ को मेरा गुण प्रदान करती हैं? इस बारे में अनेक लोगों ने अध्ययन किये। उन्होंने अलग-अलग परिणाम निकाले।

आरस्टेड, एम्पीयर और फेराडे आदि वैज्ञानिकों के प्रयोगों के बाद लोगों को मेरे सच्चे स्वरूप की कुछ झलक-सी मिली। आज से लगभग 140 साल पहले जर्मनी के वैज्ञानिक विल्हेल्म वेबर ने सिद्ध किया कि जिन पदार्थों को मुझ में रूपांतरित किया जा सकता है, उनका हर परमाणु (चुम्बकीय पदार्थ) मेरा अत्यंत सूक्ष्म रूप होता है। हर परमाणु चुम्बक होता है। उसके भी दो ध्रुव होते हैं। जब ऐसे चुम्बकीय पदार्थ को मुझ में रूपांतरित करने के लिए उसे मेरे शक्तिशाली रूप से रगड़ा जाता है अथवा उस तार के पास लाया जाता है, जिसमें से बिजली की शक्तिशाली धारा बह रही हो, तब परमाणुओं के उत्तर ध्रुव एक तरफ होकर और दक्षिण ध्रुव दूसरी तरफ होकर मेरा गुण दर्शाने लगते हैं। जब मुझे पटका जाता है या गर्म किया जाता है तो परमाणु फिर बिखर जाते हैं।

पर इससे लोगों के मन में एक शंका उठ सकती है। आखिर चुम्बकीय पदार्थों के परमाणु चुम्बकीय होते ही क्यों हैं? इलेक्ट्रॉनों की खोज के बाद वैज्ञानिक एक बार फिर से मेरे गुणों के वास्तविक कारण की खोज में लग गये। (तुम जानते हो कि इलेक्ट्रॉन बहुत ही छोटा कण है जो परमाणु के नाभिक के इर्द-गिर्द विशेष कक्षाओं में घूमता रहता है। इन पर ऋण आवेश होता है। बिजली की धारा इन्हीं का प्रवाह है।) उन्होंने जल्दी ही पता लगा लिया कि मेरे गुण उन इलेक्ट्रॉनों के कारण होते हैं जो अलग तरीके से अपनी धुरी पर घूमते हैं (असामान्य धूर्णन करते हैं)। आजकल वैज्ञानिक यह मानते हैं कि असामान्य घूर्णन वाले इलेक्ट्रॉन लोहे, कोबाल्ट, निकिल आदि के परमाणुओं में 'एम' कक्षा की तीसरी अधूरी उपकक्षा में उपस्थित होते हैं। वैसे इन परमाणुओं में अन्य इलैक्ट्रॉन भी मौजूद होते हैं पर उनके घूर्णन आपस में एक-दूसरे को काट देते हैं। असामान्य घूर्णन

वाले इलैक्ट्रॉन ही परमाणु चुम्बक बनाते हैं।

इसके साथ ही लौहचुम्बकीय पदार्थों के बारे में एक बात यह भी मालूम हुई कि इनमें परमाणु-चुम्बकों के समूह होते हैं। इन समूहों को 'डोमेन' कहा जाता है। हालाँकि एक डोमेन में करीब एक हजार खरब परमाणु होते हैं पर तब भी वह इतना छोटा होता है कि आँख तो आँख वह सूक्ष्मदर्शी से भी नहीं देखा जा सकता। इसका कारण यह है कि परमाणु बहुत ही छोटा कण होता है। हर डोमेन में सब परमाणुओं के उत्तर ध्रुव एक ही दिशा में होते हैं। डोमेनों के बीच दीवार होती है। लौहचुम्बकीय पदार्थ को मुझ में रूपांतरित करते समय ये डोमेन इस प्रकार व्यवस्थित हो जाते हैं कि इनके उत्तर ध्रुव एक ही दिशा में हो जाएँ। जब उत्तर ध्रुव एक दिशा में होंगे तो दक्षिण ध्रुव अपने आप ही दूसरी दिशा में हो जाएँगे।

तुम पहले पढ़ चुके हो कि ज्यादातर पदार्थ ऐसे हैं जिन्हें मुझ में नहीं बदला जा सकता। इसका कारण है उनके परमाणुओं में असामान्य घूर्णन वाले इलेक्ट्रॉन का मौजूद न होना। और यही कारण है कि जब उनके नजदीक मेरा शक्तिशाली रूप लाया जाता है तब वे प्रेरित चुम्बकत्व का विरोध करते हैं। प्रतिचुम्बकीय पदार्थ भी ऐसा ही करते हैं। इसीलिए वे मेरे निकट आने पर मेरे बल को कम कर देते हैं।

जहाँ तक प्रतिचुम्बकीय पदार्थों का सवाल है उनमें परमाणु-चुम्बक मौजूद होते हैं। परंतु जब वे मेरे निकट आते हैं तब केवल कुछ परमाणु-चुम्बक ही इस प्रकार व्यवस्थित हो पाते हैं कि उनके उत्तर ध्रुव एक दिशा में हो जाएँ।

किसी पदार्थ (चुम्बकीय पदार्थ) को मुझ में रूपांतरित करने के लिए उसे मेरे शक्तिशाली रूप पर विशेष तरीके से रगड़ा जाता है, अथवा उसे उस तार के निकट रख देते हैं जिसमें से बिजली की धारा प्रवाहित हो रही हो या उसे धरती के नीचे उत्तर-दक्षिण दिशा में गाड़ देते हैं। मैं यहाँ एक बात दूँ कि चुम्बकीय पदार्थ के रूप में अधिकतर लोहे या इस्पात का ही उपयोग किया जाता है। इसलिए जब मैं चुम्बकीय पदार्थ की चर्चा करता हूँ तब मेरा मतलब लोहे या इस्पात से ही होता है।

मेरे दंड में कितनी भी शक्ति (चुम्बकत्व) क्यों न हो लोहे या इस्पात पर रगड़ने से शक्तिशाली चुम्बक नहीं बनता। पर ऐसा करने से लोहा जल्दी ही मेरे गुण ग्रहण कर लेता है लेकिन जल्दी ही इन्हें खो भी देता है। दूसरे शब्दों में लोहा जल्दी पर अस्थायी रूप से ही चुम्बकित होता है। इस्पात धीरे-धीरे चुम्बकित होता है पर उससे स्थायी चुम्बक बनता है। वैसे इस्पात की अपेक्षा लोहे से अधिक शक्तिशाली चुम्बक बनता है।

मेरा शक्तिशाली रूप बनाने के लिए लोहे के टुकड़े पर रबड़ या कपड़ा-चढ़ा तार लपेट कर उसमें से बिजली की धारा प्रवाहित की जाती है। जितनी देर तार में से बिजली की धारा बहती रहती है लोहे का टुकड़ा शक्तिशाली चुम्बक बना रहता है। पर जैसे ही धारा बंद हो जाती है वह मेरे गुण खो देता है। बिजली की घंटी में मेरा यही रूप होता है। इसी प्रकार अन्य अनेक यंत्रों में मेरा अस्थायी रूप ही इस्तेमाल किया जाता है। बड़ी-बड़ी मशीनें, मोटरकार, रेल के इंजन तथा डिब्बे जैसे भारी सामान जलयानों द्वारा अन्य देशों को भेजे जाते हैं। इनको उतारने और चढ़ाने के लिए मेरा ही इस्तेमाल किया

जाता है। इसके लिए एलनिको V के टुकड़े को मेरे नाल रूप में ढाला जाता है। उससे मेरा अस्थायी रूप ही बनता है। मेरे नाल रूप में दोनों ध्रुव पास-पास होते हैं। इसलिए वह मेरे दंड रूप की तुलना में अधिक वजन उठा सकता है।

जहाँ मेरे स्थायी रूप की जरूरत होती है वहाँ लोहे की बजाय इस्पात का इस्तेमाल किया जाता है। जैसा कि तुम जानते हो इस्पात से कम शक्तिशाली परंतु स्थायी चुम्बक बनता है। मेरे स्थायी रूप का उपयोग बिजली की मोटर, डायनामो, लाउडस्पीकर, अल्टरनेटर आदि में किया जाता है।

धरती के नीचे उत्तर-दक्षिण दिशा में लोहे का टुकड़ा दाब देने से उसमें मेरे कुछ गुण आ तो जाते हैं पर बहुत कम शक्ति वाले।

मैंने तुम्हें बताया था कि पृथ्वी स्वयं मेरी तरह ही कार्य करती है। उसके उस गुण की चर्चा भी कुछ विस्तार से कर दूँ।

तुम पढ़ चुके हो कि पुराने जमाने में भी समुद्री यात्राएँ करने वाले लोग अपने जहाजों और नावों को सही दिशा में चलाने के लिए कम्पास का उपयोग करते थे। उन्हें यह मालूम था कि मुझे मुक्त रूप से लटका देने पर मेरा एक सिरा उत्तर दिशा की ओर हो जाता है और दूसरा दक्षिण की ओर। पर उन्हें यह नहीं मालूम था कि ऐसा क्यों होता है। कुछ लोग कहते थे कि 'सप्त-ऋषि' तारा समूह मुझे अपनी ओर आकर्षित करता है। कुछ ध्रुव तारे को इसका कारण मानते थे जब कि कुछ लोग यह भी कहते थे कि पृथ्वी के उत्तर में स्थित कोई बड़ा पर्वत मुझे अपनी ओर खींचता है, इसीलिए ऐसा होता है। विलियम गिलबर्ट पहले आदमी थे जिन्होंने यह सुझाया कि स्वयं पृथ्वी ही एक चुम्बकीय गोला है। इसके भी ध्रुव हैं जिनके कारण ही मुक्त रूप से लटका दिये जाने पर मेरा एक सिरा उत्तर की ओर और दूसरा दक्षिण की ओर हो जाता है।

उसके बाद बहुत से वैज्ञानिकों ने बार-बार प्रयोग किये। उनके आधार पर सिद्धांत बनाये और फिर सिद्धांतों के अनुसार प्रयोग किये। इनसे यह पता चला कि पृथ्वी मेरे समान ही व्यवहार करती है यानी वह भी चुम्बकीय है। पर उसके चुम्बकत्व में बहुत खामियाँ हैं। उसके चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा और मात्रा बदलती रहती है। उसका चुम्बकीय बल भी घटता-बढ़ता रहता है। पिछली सदी में ही वह पाँच प्रतिशत घट गया। उससे भी विचित्र बात यह है कि उसके ध्रुव अपने स्थान ही नहीं बदलते बल्कि अपनी दिशाएँ भी बदल देते हैं यानी एक समय जहाँ उत्तर ध्रुव था वहाँ दक्षिण ध्रुव आ गया और जहाँ दक्षिण ध्रुव था वहाँ उत्तर ध्रुव आ गया। पृथ्वी के चुम्बकीय ध्रुवों और वास्तविक (भौगोलिक) ध्रुवों की स्थिति में अंतर होता है। वे एक-दूसरे से काफी दूर स्थित होते हैं।

कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र ऐसा है जैसे उसके भीतर मेरा बहुत विशाल और बहुत शक्तिशाली दंड रूप स्थित हो। इस दंड रूप को पृथ्वी के केंद्र से लगभग 320 किलोमीटर दूर, पृथ्वी की धुरी से 11.5 अंश कोण बनाते हुए, स्थित माना जाता है।

पृथ्वी की मेरी भाँति कार्य करने की वजह है उसकी संरचना। तुम यह जानते हो कि वह नाशपाती की तरह गोल है, जिसका केंद्र सतह से लगभग 6,400 किलोमीटर नीचे है। इस मोटाई का काफी बड़ा भाग, लगभग 3500 किलोमीटर मोटा भाग, लोहे ओर निकिल का बना है। इसे लोग

'कोर' कहते हैं। कोर का ताप इतना अधिक है कि वहाँ सब धातुएँ पिघली हुई हैं। दरअसल यह कोर ही पृथ्वी को मेरे गुण प्रदान करता है। इसके ऊपरी भाग में विद्युत धाराएँ पैदा होती हैं। ये धाराएँ उसी प्रकार का चुम्बकत्व पैदा करती हैं जैसा डायनामो और बिजली की मोटर के एक साथ काम करने से उत्पन्न होता है।

पृथ्वी के चुम्बकत्व का प्रभाव उसके बाहर भी लगभग 64,000 किलोमीटर दूर तक फैला हुआ है। इसका पता अंतरिक्ष यात्राएँ शुरू होने के बाद वर्ष 1958 में चला था। इसे वैज्ञानिक 'वान एलन बैल्ट' कहते हैं। यह बैल्ट अंतरिक्ष यात्रियों के लिए बहुत हानिकारक है। पर ध्रुवों के पास इसका प्रभाव कम है। यह सुदूर अंतरिक्ष से आने वाली हानिकारक किरणों और कणों को रोक लेती है जिससे वे पृथ्वी तक नहीं पहुँच पाते।

विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ मेरे नये-नये रूप सामने आ रहे हैं। साथ ही उनका उपयोग नयी-नयी वस्तुओं के निर्माण में किया जा रहा है। आज से लगभग अस्सी वर्ष पहले ओन्स नाम के वैज्ञानिक ने बहुत कम ताप पर, शून्य से भी 270 अंश से नीचे ताप पर, वस्तुओं को विचित्र प्रकार से व्यवहार करते हुए पाया। उन्होंने देखा कि उतने नीचे ताप पर पदार्थों की बिजली की धारा को रोकने की शक्ति एकदम समाप्त हो जाती है। इसका मतलब यह हुआ कि बिजली की धारा की थोड़ी-सी मात्रा से भी बहुत अधिक काम कराया जा सकता है। इसका अर्थ यह भी हुआ कि उस ताप पर बहुत कम लागत पर, बहुत शक्तिशाली चुम्बक बनाया जा सकता है। पर इतना नीचा ताप प्राप्त करना लगभग असंभव था इसलिए इस बारे में अब तक कुछ नहीं हुआ। परंतु आजकल वैज्ञानिक काफी ऊँचे ताप पर भी 'अतिचालक' पदार्थ बनाने लगे हैं यानी अब आसानी से बहुत शक्तिशाली चुम्बक बन सकेंगे।

वैज्ञानिकों का कहना है कि बहुत शक्तिशाली चुम्बकें बन जाने पर उनका उपयोग नयी-नयी चीजों में होने लगेगा। साथ ही साथ बहुत-सी वस्तुओं में काफी सुधार हो जाएगा। 500 किलोमीटर प्रति घंटे की गति से चलने वाली रेलगाड़ियाँ बन सकेंगी। बिजलीघरों से बहुत दूर-दूर तक बिजली बिना किसी रुकावट के भेजी जा सकेगी। ऐसे और भी बहुत से काम होने लगेंगे जिनसे तुम्हारा कल्याण होगा। मैं उस दिन के इंतजार में हूँ।

विनीता सिंघल

हैलो! मैं हूँ इन्टरनेट

जी हाँ, आज का युग सूचना क्रांति का युग है और यह क्रांति लाने का श्रेय जिसे जाता है वह मैं हूँ यानी इंटरनेट। मैं पलक झपकते ही दुनिया के किसी भी कोने से सूचना आप तक पहुँचा सकता हूँ। लोग मुझे सूचनाओं का सागर कहते हैं। छोटे-छोटे नेटवर्कों के जरिए मैं पूरे संसार से जुड़ा हुआ हूँ। कोई नहीं जानता कि मेरे इस जाल से कितने कम्प्यूटर जुड़े हुए हैं। ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ मेरी पहुँच न हो। लोग मुझे प्यार से नेट या वेब भी कहते हैं। व्यापार हो या शिक्षा, विज्ञान हो या रोजगार, मनोरंजन या खेलकूद, कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं जहाँ मेरी घुसपैठ न हो। यहाँ तक कि आप मेरे जरिए खरीद-फरोख्त भी कर सकते हैं।

मेरा जन्म सन् 1699 में अमरीकी प्रतिरक्षा मंत्रालय की एक अनुसंधान परियोजना के तहत हुआ था। अमरीकी प्रतिरक्षा विभाग की एक एजेन्सी, एडवान्स्ड रिसर्च प्रोजेक्ट एजेन्सी की देन आर्पानेट मेरे जीवन का आरम्भिक काल था और देखते ही देखते 25 साल से भी कम समय में मैं आम आदमी तक पहुँच गया। शुरू-शुरू में तो मेरे जरिए केवल साधारण संदेशों का ही आदान-प्रदान होता था लेकिन बाद में कुछ ऐसे विकास हुए जिनके जरिए कोई भी सूचना ढूँढ़ना सरल हो गया। आज ज्यादा से ज्यादा लोग मुझसे और मेरे जरिए सारी दुनिया से जुड़ते नजर आ रहे हैं।

आप लोग सोच रहे होंगे कि मैं सूचनाएँ लोगों तक पहुँचाता कैसे हूँ? इसके लिए मेरे पास एक अलादीन के चिराग जैसी चीज है जिसे वेबसाइट कहते हैं। जिस तरह रिमोट के जरिए टीवी पर बदल-बदल कर विभिन्न चैनलों का आनंद उठाया जा सकता है, ठीक उसी तरह कम्प्यूटर पर विभिन्न वेबसाइटों का भी मजा लिया जा सकता है। इन वेबसाइटों को www.http द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। www का अर्थ है वर्ल्ड वाइड वेब। यह केन्द्र मेरी अर्थात् इन्टरनेट की पूरी दुनिया को कन्ट्रोल करता है। हर वेबसाइट की एक कूटभाषा होती है। http वह कूटभाषा है जिसमें संदेशों को www के दफ्तर में भेजा जाता है। वैसे http का अर्थ है हाइपर टैक्सट ट्रांसफर प्रोटोकॉल। आपको मेरी कौन-सी वेबसाइट से कौन-सी जानकारी मिलेगी, यह बताने के लिए मेरे पास कुछ सर्च इंजन हैं।

पिछले कुछ वर्षों में मेरा विकास बहुत तेजी से हुआ है और आज मैं इतनी लोकप्रियता प्राप्त

कर चुका हूँ कि मेरे बिना लोगों का काम ही नहीं चलता। अब ई-मेल को ही लो। आज चिट्ठी भेजने के लिए पोस्ट ऑफिस पर निर्भर रहने की जरूरत नहीं रह गयी है। इधर चिट्ठी लिखी, उधर जवाब हाजिर। आजकल टेलीफोन के नंबरों की तरह ई-मेल पते भी आम हो गए हैं। ई-मेल पतों की पहचान होता है @ का निशान। याहू.काम, हॉटमेल.काम, रेडिफ.काम आदि कुछ मेरी अत्यंत लोकप्रिय ई-मेल वेबसाइटें हैं। इनके जरिए आप अपने दोस्तों को बधाई संदेश भी भेज सकते हैं।

वैसे अब ई-मेल भेजना भी कल की बात हो गयी है। आज के युग का लोकप्रिय संचार साधन है चैटिंग और यह मेरी देन है। आज मेरे जरिए चैटिंग अर्थात् अपने दूर गाँव में बसे किसी रिश्तेदार से बातचीत भी कर सकते हैं और मेरी दूसरी वेबसाइटों की सैर भी कर सकते हैं। आज कई वेबसाइटों पर ध्वनि संचार सेवाएँ भी उपलब्ध हैं। मेरे जरिए बात करने की यह प्रक्रिया इंटरनेट टेलीफोनी कहलाती है। यह एक ऐसा सॉफ्टवेयर कार्यक्रम होता है जिससे कम्प्यूटर टेलीफोन की तरह काम करने लगता है। इसके लिए कम्प्यूटर, टेलीफोन और इंटरनेट कनेक्शन की जरूरत होती है।

इतना ही नहीं आप घर बैठे बोर हो रहे हैं तो आप मेरे जरिए मनोरंजन भी कर सकते हैं। आज की युवा पीढ़ी ने मेरी बदौलत अपनी राहत के लिए एक नया रास्ता खोज निकाला है- ऑनलाइन वीडियो गेम। अमरीका जैसे देशों में फिल्म की टिकटों से ज्यादा मारामारी ऑन लाइन वीडियो गेम के लिए रहती है। ऑनलाइन वीडियो गेम के जरिए दुनिया भर के अलग-अलग कोनों में बैठे हुए लोग बिना एक-दूसरे से मिले ही एक साथ कोई भी खेल-खेल सकते हैं। ये गेम भी बहुत तरह के होते हैं जैसे एक्शन गेम्स, रोल प्लेइंग गेम्स, सिमुलेशन गेम्स, स्पोर्ट गेम्स और भी कई तरह के रोमांचक खेल।

इंटरनेट केवल मौज-मस्ती की ही चीज नहीं है। बल्कि मैं तो अब लोगों की दैनिक जरूरतों के साथ शामिल हो गया हूँ और आदमी की सबसे बड़ी जरूरत होती है इलाज। कई बार सही समय पर सही इजाल न मिल पाने के कारण बीमार को जान से हाथ धोना पड़ता है लेकिन अब मेरे जरिए हजारों मील दूर बैठे डॉक्टर से भी संपर्क किया जा सकता है। लगभग 40 साल पहले यूरोप के दो केन्द्रों के बीच मनोवैज्ञानिक इलाज के लिए माइक्रोव लिंक का इस्तेमाल किया गया था। अब तो डॉक्टर मेरे जरिए बड़े-बड़े आपरेशन भी कर सकते हैं।

दुनिया में पैसे से बड़ी कोई चीज नहीं और पैसे के लिए चाहिए व्यापार। मैं कम्प्यूटर की मदद से व्यापार संबंधी सूचनाओं और आँकड़ों को जल्दी-जल्दी इधर से उधर पहुँचाता हूँ। मैंने पूरी दुनिया को एक बाजार में बदल दिया है जहाँ आप छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी चीज खरीद सकते हैं। बस आपको करना यह है कि ई-कामर्स की कोई भी वेबसाइट खोलकर आर्डर देना है और वह चीज आपको मिल जाएगी। आप मेरे जरिए पैसों का लेन-देन भी कर सकते हैं। इससे समय की तो बचत होती ही है साथ ही बार-बार बाजार जाने का भी झंझट नहीं।

अब तो मैं सरकारी कामकाज में भी दखल देने लगा हूँ। मेरा काम सरकारी कामों में टाँग

अड़ाना नहीं बल्कि स्वच्छ पारदर्शी प्रशासन देना और, भ्रष्टाचार को रोकना है। परिवहन, विद्युत, स्वास्थ्य आदि सभी विभाग मेरी सेवाएँ ले सकते हैं। आम जनता भी मेरा लाभ उठा सकती है। जैसे यदि राशन कार्ड बनवाना हो तो लाइन में खड़े होने का झंझट नहीं। बस ऑनलाइन अर्जी दीजिए और राशन कार्ड का प्रिंट आउट लीजिए। इसी प्रकार पेंशन, प्रॉविडेंट फंड, पानी, बिजली, टेलीफोन आदि के बिलों के भुगतान की जानकारी भी मुझसे ली जा सकती है। मेरी ये सारी सेवाएँ ई-गवर्नेंस के अन्तर्गत आती हैं।

मैं लोगों को इतनी सारी सुविधाएँ देता हूँ लेकिन फिर भी मेरे दुश्मनों की कमी नहीं है। हैकर नाम के ये दुश्मन कभी भी मेरा कोई भी पासवर्ड चुराकर मेरी वेबसाइटों के अंदर घुसकर आतंक फैलाते हैं। कभी-कभी तो ये मेरी वेबसाइटों में तरह-तरह के वायरस फैला देते हैं जिससे मेरी सारी व्यवस्था गड़बड़ा जाती है। आपने 'आई लव यू' के बारे में तो सुना ही होगा जिसने मुझसे जुड़े हजारों कम्प्यूटरों की जान आफत में डाल दी थी। लेकिन अब मैंने भी इनसे निपटना सीख लिया है। अब मैं इनसे बिल्कुल नहीं डरता। ये मेरे सुरक्षा कवच 'फायर वॉल' से टक्कर नहीं ले सकते और उसे देखते ही दूर से ही भाग खड़े होते हैं।

लेकिन कोई एक मुसीबत हो तो बताऊँ। मेरे लिए हैकिंग ही एक समस्या नहीं है। आज-कल सड़कों पर बढ़ता हुआ ट्रैफिक जैसे आप लोगों के लिए सिरदर्द है उसी तरह मुझे भी बढ़ते हुए ट्रैफिक का सामना करना पड़ रहा है। सँकरी सड़कों पर तो यह और भी कठिन हो जाता है लेकिन मैं क्या करूँ? मुझे तो सँकरी लाइनों पर ही चलना पड़ता है।

कामना सिंह

कोवैक्सिन की आत्मकथा

मैं कोवैक्सिन हूँ, भारत की कोरोना-वैक्सीन। मैं आपको अपनी उत्पत्ति की कहानी सुनाने आई हूँ।

बच्चो, क्या आप यह जानते हैं कि वैक्सीन क्या होती है?

आप लोग अक्सर चोट लगने पर टिटनेस का टीका लगवाते हैं। अपने छोटे भाई-बहनों या आस-पड़ोस के बच्चों को बीसीजी या हेपेटाइटिस टीके का डोज पाते देखते हैं। देश में पोलियो से बचाव के ड्रॉप्स तो घर-घर जाकर छोटे बच्चों को पिलाए जाते हैं। ये सभी अलग-अलग प्रकार की वैक्सीन हैं।

वैक्सीन आपके शरीर को बीमारी से बचने के लिए तैयार करती है। यह शरीर को बीमारी के विरुद्ध एंटीबॉडीज बनाने के लिए प्रेरित करती है। इससे शरीर में रोगप्रतिरोध क्षमता उत्पन्न होती है।

किसी भी बीमारी की वैक्सीन बनाने में कई साल तक लग जाते हैं और इसके बावजूद सफलता मिलना तय नहीं होता। लेकिन मैं, कोवैक्सिन एक चमत्कार की तरह आज आप लोगों के साथ हूँ। यहाँ तक कि बच्चों के लिए भी उपलब्ध हूँ। मैं सबसे कम समय में तैयार हुई स्वदेशी वैक्सीन हूँ।

यह चमत्कार कैसे हुआ?

सन 2019 के दिसंबर तक कोई मेरे विषय में सोच भी नहीं सकता था। पर देखते ही देखते कोरोना ने न जाने कितने घर उजाड़ दिए। मानवता की रक्षा के लिए एक जरूरत के रूप में मुझे बनाया गया।

आप सभी जानते हैं कि सन् 2020 की शुरुआत में चीन के वुहान प्रांत में कोरोनावायरस के फैलने की खबर आई। वहाँ के मछली बाजार की गंदगी, जानवरों के खून और मल-मूत्र के बीच इस वायरस का जन्म हुआ। वायरस के फैलने की गति इतनी तेज थी कि देखते ही देखते पूरा वुहान इसकी चपेट में आ गया। खाँसी-जुकाम, ज्वर, साँस की बीमारी से शुरुआत। फेफड़ों पर दुष्प्रभाव। बीमारी का लंबा खिंचना या फिर मृत्यु। कोई दवाई इसके ऊपर कारगर नहीं थी।

वुहान में लॉकडाउन लग गया। लोगों का आना-जाना एकदम बंद। जो हॉस्पिटल में खत्म हुए, उनका अंतिम संस्कार कैसे हुआ, यह बात भी घर के अंदर रहते लोग जान नहीं सके।

चीन की सरकार ने सारी उड़ानों पर रोक लगा दी। बाहर के देशों से वुहान पढ़ने या नौकरी करने पहुँचे लोग बुरी तरह घबरा गए। वे अपने देश वापस लौटना चाहते थे।

सूचना पाने पर हर देश की सरकार ने अपने देशवासियों को चीन से बाहर निकालना शुरू किया। भारत के लोग भी रेस्क्यू अभियान के जरिए भारत वापस लाए गये। उन्हें कुछ दिन क्वारंटीन होना पड़ा।

लेकिन चीन में फैली बीमारी से बचकर भारत वापस आने से वे सभी बेहद खुश थे।

ये बातें जनवरी–फरवरी 2020 की हैं।

चीन में फैलने वाली बीमारी जल्द ही संसार के अन्य देशों में भी पहुँच गई। जो व्यक्ति संक्रमित के संपर्क में आता, वही बीमार पड़ जाता। एक से दस, दस से सौ, सौ से हजार...। शृंखला बनती चली गई संक्रमितों की।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने फरवरी 2020 में कहा कि कोरोना की वैक्सीन बनने में कम से कम डेढ़ साल लगेगा।

मार्च 2020 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने कोरोना को महामारी का दर्जा दे दिया।

इटली, स्पेन, अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि देश हाहाकार कर उठे। हर जगह दवाइयों और ऑक्सीजन की कमी हो गई। पूरा परिवार कोरोना संक्रमित तो कोई किसी का ध्यान कैसे रखे? अंतिम संस्कार करने वाले लोगों को भी पल भर की मोहलत नहीं थी।

मार्च 2020 तक मेरा यानी कोरोना–वैक्सीन का अता–पता न था।

भारत में कोरोना–केस बढ़ने लगे तो सरकार को लॉकडाउन लगाना पड़ा। 25 मार्च 2020 वह तिथि थी, जिस दिन पहली बार पूरा भारत थम गया था।

सोशल डिस्टेंसिंग, मास्क, सैनिटाइजर, लॉकडाउन आदि सारी सावधानियों के बावजूद भारत के अस्पतालों में कोरोना के मरीज बढ़ते रहे। डॉक्टरों ने विविध दवाइयाँ आजमाईं, लेकिन इसका कोई सटीक इलाज नहीं मिला।

अब इस कोरोनावायरस पर काबू पाने का एक ही रास्ता था– वैक्सीन!

लेकिन कोरोना की वैक्सीन थी कहाँ?

संसार भर के वैज्ञानिकों ने तय किया कि कोरोना–वैक्सीन को बनाना ही है। उन्होंने सबसे पहले यह पता लगाया कि कोरोनावायरस को कमजोर करने के लिए इसकी ऊपरी कँटीली सतह (इसे स्पाइक प्रोटीन या क्राउन कहते हैं) को नष्ट करना जरूरी है। कोरोनावायरस का असली वायरस शरीर में बाद में पहुँचता है। पहले उसका यह प्रोटीन हमारे ऊपर हमला करता है। इसे खत्म कर दिया जाए तो वायरस बेकार हो जाएगा।

बस मेरे अस्तित्व की रूपरेखा बननी शुरू हुई।

भारत में 'भारत बायोटेक कंपनी' और 'आईसीएमआर' (इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च) साथ मिलकर मुझे तैयार करने लगे। वैक्सीन बनने में डेढ़–दो साल से कम नहीं लगता। लेकिन वैज्ञानिकों ने संकल्प किया कि वे इस वायरस को खत्म करने वाली वैक्सीन जल्द से जल्द ईजाद करके रहेंगे।

इसके अलावा अन्य कई देशों में भी वैक्सीन बनाने के प्रयास शुरू हो चुके थे।

एक ओर कोरोना संसार में आतंक फैलाता रहा, दूसरी ओर प्रयोगशाला के भीतर वैज्ञानिक जी–जान से लग गए। सरकारें उन्हें पूरा सहयोग देने लगीं।

मैं कोवैक्सिन हूँ। एक अच्छे मकसद, मनुष्यों को कोरोनावायरस से बचाने के लिए मैं इस संसार में लाई गई हूँ। मेरे आने से पहले का समय आप भूले नहीं होंगे!

कोरोना की वजह से लॉकडाउन! बाजार बंद, दफ्तर बंद, स्कूल बंद!

दुनिया बदल सी गई। डर ही डर। कभी पढ़ाई न कर पाने का डर, कभी संक्रमण का डर, कभी घर में राशन खत्म होने का डर, तो कभी पैसे खत्म हो जाने का डर। हालात ऐसे कि लोग अपने बीमार परिजन से भी डरने लगे।

पर इस डर के बीच निकलने वाले रास्ते कितने सुखद थे।

आरव की बात जरूर याद होगी आपको!

अप्रैल 2020 के मध्य की घटना है यह। लॉकडाउन इक्कीस दिन के लिए और बढ़ा दिया गया था।

एक दिन आठ साल के आरव की आँखों में आँसू झिलमिलाने लगे। उसने माँ से कहा, 'माँ, मेरा स्कूल क्यों नहीं खुल रहा? मैंने नई पोयम याद की है। सोचा था, उसे सुनकर टीचर 'वेरी गुड' कहेंगी। पर यह कोरोना...'

'बस इतनी सी बात!' माँ मुस्कुराईं, 'चलो, अपनी यूनिफॉर्म पहनो और बाल काढ़ो। तुम्हें टीचर का 'वेरी गुड' चाहिए। मैं उसका इंतजाम करती हूँ।'

आरव समझ नहीं पाया कि माँ क्या करने जा रही हैं। किंतु उसने ड्रेस चेंज की और अपने बाल सही किए। इतनी देर में माँ कंप्यूटर ऑन कर चुकी थीं।

आरव कंप्यूटर के सामने पहुँचा तो उसकी आँखें आश्चर्य से खुली की खुली रह गईं। कंप्यूटर स्क्रीन पर उसकी कक्षाध्यापिका नजर आ रही थीं।

माँ ने बताया, 'यह तुम्हारी ऑनलाइन कक्षा है। अभी थोड़ी देर पहले ही मैसेज आया है कि आज से तुम्हारे स्कूल में ऑनलाइन पढ़ाई शुरू है। अब तुम कंप्यूटर के जरिए अपने अध्यापकों और साथियों के साथ जुड़ जाओगे। अपना माइक ऑन करो और टीचर से 'गुड मॉर्निंग' कहो। तुम्हें जो भी पोयम सुनानी है, यहाँ सुना सकते हो।'

आरव मुस्कुराने लगा।

यह कोरोना पर इंसान की जीत का एक कदम था। कोरोना बच्चों की पढ़ाई को नुकसान नहीं पहुँचा सका। आरव ही नहीं, दुनिया भर के बच्चे ऑनलाइन पढ़ाई के जरिए अपने स्कूल से जुड़े रहे।

कोरोना काल में मनुष्य डिजिटल दुनिया में प्रविष्ट होने लगा।

रोहन की मौसी की शादी पूरे परिवार के लिए यादगार रही। शादी में सभी मेहमान वीडियो कॉल के द्वारा जुड़े। पंडित जी वीडियो कॉल से मंत्र पढ़े। परिवार वालों ने वीडियो कॉल से ही आशीर्वाद दिया।

सात साल की नव्या का मई 2020 में जन्मदिन आया तो वह बहुत उदास थी। लॉकडाउन में कैसा जन्मदिन?

पर मम्मा हैं न! उन्होंने प्रेशर कुकर में केक बनाया। केक की सुगंध पूरे घर में फैल गई। मम्मा ने कमरे के बीचों-बीच मेज पर केक सजाया। उसके एक तरफ एक सुंदर सी मोमबत्ती भी लगा दी।

नव्या अपनी नई फ्रॉक पहनकर तैयार हो गई। पर वह अभी भी उदास थी। बर्थडे सॉन्ग गाने के लिए, तालियाँ बजाने के लिए, मम्मी और पापा बस दो ही लोग हैं। क्या मजा आएगा?

पर यह क्या? मम्मा ने वीडियो कॉल से नानी-नानाजी, दादी-दादाजी को जोड़ लिया।

'हैप्पी बर्थडे बेटा!' चारों बड़े लोग बोले।

नव्या खुशी से खिल उठी। सबको 'धन्यवाद' कह उसने केक काटा। सभी ने समवेत बर्थडे गीत गाया। एक नयी तरह का जन्मदिन था यह।

मम्मी-पापा और नव्या को सचमुच का केक मिला। बाकी लोगों को वर्चुअल केक मिला।

वर्चुअल यानी आभासी।

पर पूरे परिवार को जो खुशी मिली, वह आभासी नहीं थी, एकदम सच्ची थी। बड़ों का आशीर्वाद भी एकदम सच्चा था।

...देखा आपने, एक ओर कोरोना दुनिया को बिगाड़ रहा था, दूसरी ओर इंसान जी-जान से दुनिया को बचाने में लगे थे।

जगह-जगह काम छूटने की वजह से लोग अपने घरों की ओर लौटने लगे। ऐसे में इंसान की ताकत के कई उदाहरण मिले।

एक छोटी बच्ची ने अपने पिता को साइकिल पर बैठाकर हजार किलोमीटर से ज्यादा दूरी तय की। पिताजी के पैर में चोट थी तो बेटी ने ही साइकिल चलाई। अखबारों में उसकी खबर आप लोगों ने जरूर पढ़ी होगी। सभी ने बच्ची की तारीफ की और उसकी पढ़ाई-लिखाई का प्रबंध किया।

क्या कोरोनावायरस कभी सोच सकता होगा कि उसकी वजह से इंसानी ताकत के ऐसे-ऐसे दृश्य सामने आएँगे?

एक लड़ाई चल रही थी मानव और वायरस के बीच।

अच्छाई और बुराई की लड़ाई।

दुनिया भर में कोरोना-वैक्सीन को लेकर शोधकार्य जारी थे। 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' ने कहा कि लगभग डेढ़ सौ वैक्सीन अपने विभिन्न चरण पर हैं। जबकि दस वैक्सीन एडवांस स्टेज पर पहुँच गई हैं।

लोगों को वैक्सीन के जल्द आने की उम्मीद बँधने लगी।

लॉकडाउन में फैक्ट्रियाँ कम चलीं, वाहन भी कम चले, तो हवा साफ हुई। उजला नीला आकाश दिखने लगा। सभी ने महसूस किया कि हम अपने पर्यावरण और धरती माँ की जितनी चिंता करेंगे, उतना ही सुंदर और सुरक्षित जीवन पाएँगे।

हर मनुष्य अपने स्तर पर कोरोनावायरस के खिलाफ संघर्ष करने लगा। सभी ने बार-बार हाथ धोने की आदत बना ली। घर के अंदर भी मास्क लगाकर रहने लगे। यथासंभव दूसरों की मदद करने लगे। मास्क, दवाइयाँ और सैनिटाइजर बाँटने लगे।

बच्चों ने परिस्थितियों से समझौता किया। मम्मी-पापा को तंग करना कम कर दिया। बाहर घूमने जाने की जिद्द भी छोड़ दी। पार्क में खेलने जाने के बजाय अपने कंप्यूटर और किताबों के साथ समय बिताते। ऑनलाइन क्लास अटेंड करने के बाद छोटे भाई-बहनों का होमवर्क कराते। मन लगाने के लिए तरह-तरह की गतिविधियों जैसे पेंटिंग, कविता-कहानी लिखना, डान्स-म्यूज़िक आदि में व्यस्त रहने लगे।

पर ये बातें संपन्न घरों की हैं।

उन बच्चों का क्या, जो कंप्यूटर और मोबाइल नहीं खरीद सकते? उन बच्चों का क्या, जिनके माता-पिता पढ़े-लिखे नहीं हैं? उन्हें ना तो अपने अध्यापकों की शक्ल देखने को मिली, ना ही परिवार की ओर से कोई मदद मिली।

संसार भर के बच्चों का एक बड़ा वर्ग शिक्षा से वंचित होने लगा। यह कोरोनावायरस की बहुत बड़ी विजय थी। बच्चों की तरक्की पर चोट पहुँचाकर वह मानवता की नींव पर ही चोट पहुँचाने लगा।

पर... पर यहाँ भी बच्चे-बड़े सभी आगे आए। कई लोगों ने आर्थिक रूप से कमजोर बच्चों को ऑनलाइन पढ़ाई के लिए मोबाइल दिए।

विपुल की बात बताऊँ आप लोगों को!

विपुल एक जिद्दी बच्चा है। बेहद जिद्दी। उसे जिस काम के लिए मना किया जाए, वह वही काम करना चाहता है। वह मुंबई में रहता है और समुद्र देखने का शौकीन है।

मुंबई में कोरोना केस की बाढ़ आने पर मम्मी-पापा ने विपुल का घर से बाहर जाना एकदम बंद कर दिया। मम्मी-पापा दोनों 'वर्क फ्रॉम होम' करते और विपुल अपने कमरे में बैठा पढ़ाई करता।

एक शाम पापा ने देखा कि विपुल अपने कमरे से गायब है।

'कहाँ गया होगा बेटा!' वह घबरा गए। तुरंत घर से बाहर निकले। विपुल दूर, कहीं जाता दिख रहा था। उन्होंने उसका पीछा किया।

विपुल समुद्र की ओर बढ़ा तो पापा का गुस्से से बुरा हाल हो गया। 'यह लड़का कितना जिद्दी है! कोरोना से भी नहीं डर रहा!' उन्होंने सोचा। पर वह हैरान रह गए, जब उन्होंने देखा कि विपुल ने समुद्र के किनारे रहने वाले गरीब बच्चों को कुछ किताबें-कॉपियाँ और पेंसिलें पकड़ाईं।

'तुम इनसे पढ़ो। मैं अगली बार आऊँगा तो तुम लोगों के लिए और सामान लाऊँगा।' विपुल ने उन बच्चों से कहा।

अचानक उसकी निगाह अपने पापा पर पड़ी तो वह सकपका गया।

'बेटा, तुम दूसरों की मदद करने के लिए आते हो, यह बात मुझे बता देते तो मैं तुम्हारा साथ देता।' पापा के मुँह से सिर्फ इतना निकला।

'पापा, मैं आपको डिस्टर्ब नहीं करना चाहता था।' विपुल बोला।

'बच्चो, हम फिर आएँगे।' पापा ने झुग्गी वाले बच्चों से कहा और अपने बेटे का हाथ पकड़ घर की ओर लौट लिए।

पापा मन ही मन सोच रहे थे कि इस कोरोना काल में उनका बेटा कितना बदल गया है। उसकी जिद्द सकारात्मक दिशा में बढ़ने लगी है, यह कितनी खुशी की बात है।

...और मैं भी यह देख बहुत खुश हुई कि वायरस को हराने के लिए बच्चे तक दूसरों की मदद में जुट गए हैं।

अरे हाँ, मदद से याद आया।...

आरती के पिताजी की नौकरी छूट गई थी और उसकी माँ कोरोना संक्रमित थीं।

छोटी सी आरती ने रात-दिन अपनी माँ की देख-रेख की। माँ को बार-बार गर्म पानी दिया, उनके

लिए ताजा खाना बनाया और बाजार से दवाइयाँ लाई।

अपने पिताजी की मदद के लिए आरती आस-पास के घरों से पुराने कपड़े माँग लाती। वह कटिंग करती। पिताजी सिलाई मशीन से झोले सिल देते। और शाम को सारे झोले पास की दुकान पर रखवा आते। धीरे-धीरे उनका सामान बिकने लगा।

पिताजी के हाथ कुछ पैसा आया। संसार में पॉलिथीन के उपयोग पर थोड़ी रोक लगी। और पुराने वस्त्रों का सदुपयोग हुआ।

पर्यावरण के लिए पॉलिथीन बहुत नुकसानदायक होता है, आप सभी इस बात को अच्छी तरह जानते हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि आप कपड़े के बने थैले इस्तेमाल करते हैं।

जब छोटे-छोटे बच्चे तक इस कोरोनावायरस के खिलाफ जागरूक हो गए तो मैं तो वैक्सीन हूँ। मुझे तो मानवता की रक्षा के लिए ही लाया जा रहा था।

मैं आपको पहले ही बता चुकी हूँ कि मुझे भारत बायोटेक कंपनी बना रही थी। इस कंपनी का वैक्सीन बनाने का पुराना अनुभव है। कंपनी पोलियो, रेबीज, रोटावायरस, जापानी इंसेफेलाइटिस, चिकनगुनिया और जीका वायरस के लिए भी वैक्सीन बनाती है।

कोरोनावायरस से जुड़े सार्स-कोव-2 स्ट्रेन को पुणे स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ वायरोलॉजी (एनआईवी) में अलग किया गया। इसके बाद स्ट्रेन को भारत बायोटेक को ट्रांसफर कर दिया गया। हैदराबाद की जिनोम वैली में अति सुरक्षित लैब की बीएसएल-3 (बायोसेफ्टी लेवल-3) में मुझे तैयार किया गया।

मैं एक 'निष्क्रिय किया हुआ' टीका या 'इनऐक्टिवेटेड' वैक्सीन हूँ। मैं कोरोनावायरस के उन अवशेषों से बनी हूँ, जिन्हें मार दिया गया है, ताकि वे संक्रमित न कर पाएँ। मेरे डोज से शरीर में वायरस के खिलाफ ऐंटीबॉडीज बनती हैं।

किसी भी नई वैक्सीन की ट्रायल की अनुमति तब तक नहीं दी जाती, जब तक पता ना हो जाए कि वह पूरी तरह सुरक्षित है। किंतु कोरोनावायरस तेजी से फैल रहा था, इसलिए जानवरों के ऊपर मेरी जाँच की अनुमति तुरंत मिल गई।

कंपनी ने मेरे बनने की प्रक्रिया और मेरे प्रभावों की रिपोर्ट सरकार के पास जमा करा दी। इसके बाद 'ड्रग कंट्रोलर जनरल ऑफ़ इंडिया' और स्वास्थ्य मंत्रालय ने मनुष्यों के ऊपर मेरी जाँच की अनुमति दे दी। यह न सिर्फ भारत देश के लिए, बल्कि समूचे संसार के लिए एक खुशखबरी थी। और मैं, मैं कोवैक्सिन, चूँकि अस्तित्व में आ चुकी थी तो अब मानवता के कल्याण के लिए हर तरह की जाँच के लिए तैयार थी।

मध्य जुलाई 2020 में मेरे ह्यूमन ट्रायल का पहला फेज़ शुरू हुआ। इसमें अठारह साल से लेकर पचपन साल की उम्र तक के कई सौ लोगों ने वॉलेन्टियर के तौर पर स्वयं को प्रस्तुत किया।

जुलाई अंत तक दूसरे फेज़ की शुरुआत हुई। इसमें बारह साल से लेकर पैंसठ साल तक के कुछ लोगों पर ट्रायल किया गया।

सभी ट्रायल्स सफल रहे।

पर अभी बहुत से काम बाकी थे। जो ट्रायल हुए, कुछ समय बाद के उनके नतीजे देखने थे। मैं एक निश्चित तापमान पर ही सुरक्षित रह सकती हूँ। मुझे किस तापमान पर रखा जाएगा और किस तरह सबके पास पहुँचाया जाएगा, यह भी वैज्ञानिक रीति से ही तय होना था।

एक ओर वैज्ञानिक अपने काम में लगे थे, दूसरी ओर मानवता को नुकसान पहुँचाने के लिए कोरोना वायरस पूरी तरह सक्रिय था।

सितंबर 2020 में भारत में कोरोना की पहली लहर अपने चरम पर थी। रोज ही न जाने कितने लोग अस्पताल पहुँचने लगे। ना जाने कितने लोगों ने प्राण त्याग दिए।

मनुष्य हताशा से अपने हाथ मल रहे थे। उन्हें वैक्सीन का इंतजार था। पर इतनी जल्दी वैक्सीन हाथ आना तो किसी सपने की तरह था। और हालात ऐसे नहीं थे कि लोग सपने देखते।

पर मैं कोवैक्सिन हूँ। मैं सपने देखना जानती हूँ। मेरा सपना है मनुष्यों को कोरोनावायरस से बचाना। वैज्ञानिकों ने शोध से पता लगाया कि मैं कोरोना के ज्यादातर वेरिएंट से लड़ने की क्षमता रखती हूँ। कोरोनावायरस कितना भी म्यूटेशन कर ले (अर्थात रूप बदल ले) मैं उन सभी रूपों पर प्रभावी रहूँगी। यह बहुत अच्छी बात है।

मैं चाहने लगी कि जल्द से जल्द एक सुरक्षित रूप में अस्तित्व में आऊँ, ताकि दुनिया भर के लोगों को भयंकर संक्रमण से बचा सकूँ।

संसार में कई अन्य वैक्सीन पर काम चल रहा था। तीन वैक्सीन सफलता के काफी नजदीक पहुँच रही थीं।

प्रतिस्पर्धा! बच्चो, तुम इस शब्द का अर्थ अच्छी तरह जानते हो। प्रतिस्पर्धा अर्थात् दूसरों से आगे जाने की इच्छा! दूसरों की तुलना में कुछ अच्छा कर दिखाने की इच्छा!

संसार में वैक्सीन को लेकर विविध प्रयोग होते रहे। सभी देशों के वैज्ञानिक चाह रहे थे कि वे जल्द से जल्द अपनी वैक्सीन के जरिये मानवता की रक्षा कर सकें।

मुख्य रूप से वैक्सीन चार तरह की होती हैं। किसी में पूरा वायरस लेते हैं। किसी ने उसका थोड़ा भाग इस्तेमाल किया जाता है और किसी में उसका जेनेटिक तत्व मात्र लिया जाता है।

पहली – होल वायरस वैक्सीन, जिसकी दो प्रणालियाँ हैं – प्रथम, कमजोर वायरस से बनी वैक्सीन। द्वितीय, निष्क्रिय वायरस से बनी वैक्सीन। मैं, कोवैक्सिन, निष्क्रिय वायरस से बनी हूँ।

दूसरी – वायरल वेक्टर वैक्सीन प्रणाली, इसमें अपेक्षाकृत सुरक्षित वायरस के ऊपर खतरनाक वायरस के अंश चिपकाकर वैक्सीन तैयार की जाती है। ऑक्सफोर्ड और ऐस्ट्राजेनेका द्वारा तैयार कोविशील्ड, जॉनसन एंड जॉनसन की वैक्सीन, रूसी वैक्सीन स्पुतनिक ऐसी ही हैं।

तीसरी – प्रोटीन सबयूनिट वैक्सीन में वायरस के स्पाइक प्रोटीन या शुगर वाले भागों का इस्तेमाल किया जाता है। नोवावैक्स इसी आधार पर बनी है।

चौथी – आरएनए और डीएनए आधारित वैक्सीन को वैक्सीन के विकास का सबसे आधुनिक तरीका माना जाता है। इसमें लैब में बना एमआरएनए या डीएनए शरीर में पहुँचाने से एंटीबॉडीज बनती हैं। फाइजर और बायोएनटेक की वैक्सीन, मॉडर्ना एमआरएनए हैं। जाइडस कैडिला की जायकोव–डी

डीएनए वैक्सीन है।

आखिरकार वह दिन आ गया जब संसार के लोगों को कोरोनावायरस से बचाव का टीका मिला।

आठ दिसम्बर 2020 को कोरोनावायरस से बचाव के लिए ब्रिटेन में फाइजर की वैक्सीन की पहली खुराक दी गई। नब्बे वर्षीय महिला मार्ग्रेट कीनन कोरोना-वैक्सीन की खुराक पाने वाली दुनिया का पहला व्यक्ति बनीं। इसके अलावा भारतीय मूल के अस्सी वर्षीय व्यक्ति डॉक्टर हरी शुक्ला को भी वैक्सीन की डोज दी गई। डॉ. शुक्ला का नाम भी रिकॉर्ड में दर्ज हो गया।

ब्रिटेन सरकार ने फाइजर और बायोएनटेक की वैक्सीन को बड़े पैमाने पर टीकाकरण के लिए चुना। लक्ष्य रखा कि महीने के अंत तक चालीस लाख लोगों को वैक्सीन के डोज दिए जाएँ।

इसके बाद अमेरिका में कोरोना-वैक्सीन लगनी शुरू हुई। अमेरिका में सोमवार चौदह दिसंबर को कोविड-19 का पहला टीका न्यूयॉर्क की एक नर्स सैंड्रा लिंडसे को लगाया गया। अमेरिका में लाखों की संख्या में फाइजर और बायोएनटेक वैक्सीन बाँटने का निर्णय लिया गया।

इधर भारत में वैक्सीन को लेकर ड्राई-रन शुरू हुआ।

ड्राई-रन यानी एक तरह से प्रैक्टिस! इसमें वैक्सीन का उपयोग नहीं होगा। पर यह देखा जाता है कि असली वैक्सीनेशन के दौरान किस तरह से वैक्सीन पहुँचाई जाएगी, किस तरह स्वास्थ्य कर्मचारी ड्यूटी करेंगे, किस तरह लोग अंदर आएँगे, और किस तरह उनको टीका लगाया जाएगा। इसका मकसद यह है कि जब असल में वैक्सीन लगाई जाए, तब कोई गलती न हो।

जाहिर है कि जब बात हित की हो तो सभी को एक हो जाना चाहिए। भारत में वैक्सीनेशन के लिए मेरे साथ-साथ ऑक्सफोर्ड के टीके कोविशील्ड के उपयोग की भी अनुमति मिली।

एक बड़े राष्ट्र के लिए वैक्सीन की बड़ी तादात में खपत आश्चर्य की बात नहीं। पर खुशी की बात यह रही कि भारत ने अन्य देशों को भी वैक्सीन देने का निर्णय लिया। यहाँ परोपकार-परहित की भावना स्पष्ट दिखने लगी।

चारों ओर उत्साह की लहर फैल गई। कौन सोच सकता था कि इतनी जल्दी कोरोना-वैक्सीन मिल जाएगी। और वह भी अपने देश में बनी हुई। गौरव से भरे पल! आत्मनिर्भर भारत! हर भारतवासी का गर्व से उठा सिर देख मुझे भी हर्ष की अनुभूति हो रही थी।

वैज्ञानिकों ने पिछले एक साल में प्रयोगशाला में रात-दिन जो अथक मेहनत की थी, वह सार्थक हो गई। आखिर दूसरों की खुशी की खातिर ही तो वे लगे रहे थे।

भारत में पहली कोरोना-वैक्सीन मनीष कुमार नाम के सफाई कर्मचारी को एम्स में सोलह जनवरी को लगाई गई।

टीकाकरण के लिए स्वास्थ्यकर्मी, दो करोड़ फ्रंटलाइन वर्कर्स, बुजुर्गों को प्राथमिकता दी गई। वैक्सीन के पहले डोज के कुछ दिनों बाद बूस्टर डोज लगाया जाना तय था।

जल्द ही पता चला कि देश भर के लोगों को कोविड-19 का टीका और बूस्टर डोज नि:शुल्क वितरित किया जाएगा।

कुल मिलाकर सारी दुनिया में साल 2021 नई खुशियाँ लेकर आया। मानव को नई उम्मीद मिली

कि वह इस महामारी से सामना कर सकता है।

इसी बीच कोरोना ने एक बार फिर अपने कहर से डराना शुरू किया। भारत में अप्रैल 2021 में सारे अस्पताल मरीजों से भरे दिखने लगे। यह भारत में कोरोना की दूसरी लहर थी।

एक ओर चिकित्सक रात-दिन एक करके लोगों को बचाने में लगे रहे। दूसरी ओर वैक्सीन की खुराक लगातार दी जाती रही। दिखता रहा कि कोरोनावायरस को हराने के लिए हम सभी एक साथ हैं - वैज्ञानिक, स्वास्थ्यकर्मी, सरकार, आप और मैं - हम सभी।

मैं अकेली नहीं, मेरे साथ कोविशील्ड रही। कहीं मेरी खुराक दी गई, तो कहीं कोविशील्ड की। किसी को रिएक्शन न हो, इसके लिए डॉक्टरों की टीम भी लगातार देखरेख करती रही। मोबाइल वैक्सिनेशन कैंप लगाए गए। बड़ी-बड़ी गाड़ियों में वैक्सीन लेकर स्वास्थ्यकर्मी जगह-जगह गए। जिसने जिस वैक्सीन का पहला डोज लिया, कुछ समय के अंतराल पर उसी का बूस्टर डोज जरूरी था।

वायरस का प्रकोप कम हुआ। वैक्सिनेटेड लोगों की संख्या लगातार बढ़ती रही। भारत में जितना लक्ष्य लेकर चले थे, उससे ज्यादा लोगों को वैक्सीन दी गई।

वर्ष 2021 के अंत तक भारत में 100 करोड़ से ज्यादा लोगों को वैक्सीन दी जा चुकी है। और फरवरी 2022 तक 150 करोड़ से ज्यादा लोगों का टीकाकरण हो चुका है।

कोरोना के ओमिक्रॉन वेरिएंट ने एक बार फिर डराया। पर पता चला कि ओमिक्रॉन का वैक्सिनेटेड लोगों पर ज्यादा असर नहीं होता। यह बहुत बड़ी जीत है। मेरी, भारत के वैज्ञानिकों की। भारत की जनता की। जिन लोगों ने वैक्सीन के दोनों डोज नौ महीने पहले लिए थे, उन्हें एक और बूस्टर डोज दिया जा रहा है।

मैं आपकी स्वदेशी वैक्सीन हूँ। आप जानते हैं कि आगे आने वाला समय बहुत आसान नहीं। वायरस आते रहेंगे। लेकिन वैक्सीन का ईजाद होना इस बात का सूचक है कि मनुष्य के अंदर हर वायरस से लड़ने की क्षमता है। जब तक कोरोनावायरस पूरी तौर से हार नहीं जाता, सावधानी के तौर पर कोरोना का टीका लगता रहेगा, जानती हूँ मैं।

मैं अपनी कहानी इसलिए सुना रही हूँ, ताकि आपको याद रहे कि बुराई के खिलाफ लड़ी जाने वाली लड़ाई में अच्छाई की जीत होती है। पर ऐसी जरूरत ही नहीं पड़नी चाहिए कि वैक्सीन ईजाद की जाए! महामारियाँ अच्छी नहीं होतीं। बचाव के लिए वैक्सीन बनती जरूर है, पर उसके पहले मानवता का बहुत बड़ा नुकसान हो चुका होता है।

वैज्ञानिकों ने मानवता के कल्याण के लिए अथक परिश्रम करके वैक्सीन बनाई, जो नि:शुल्क वितरित की जा रही है। मुझे विश्वास है, आप भी सदैव मानवता, राष्ट्र, समाज के कल्याण में लगे रहेंगे। अपनी धरती, देश, वैज्ञानिकों, मानवता और वैक्सीन के प्रति यह आपका कृतज्ञता-प्रदर्शन होगा।

सम्पर्क : *नई दिल्ली*
मो. 8287687712

लता अग्रवाल

मैं अन्नपूर्णा हूँ

(कार्बन डाइऑक्साइड की आत्मकथा)

शाम को सभी बच्चे कॉम्प्लेक्स के पार्क में खेल रहे थे कि तभी ठीक कॉम्प्लेक्स के दफ्तर में आग लग गई। सुरक्षा अलार्म (सिक्यूरिटी सायरन) बजते ही चौकीदार ने दीवार पर टँगा अग्निशमन यंत्र निकाला और उसे दबाते ही फुस्स-फुस्स की आवाज के साथ ही आग बुझ गई। उन्हीं बच्चों में एक है नीनू, उसे समझ नहीं आ रहा था कि सिलेण्डर को दबाते ही अचानक क्या जादू हुआ कि आग बुझ गई! क्या यह लाल रंग का अग्निशामक यंत्र कोई जादुई चिराग है? उसमें ऐसा क्या था ...था तो दिखाई क्यों नहीं दिया! यही सोचते -सोचते नीनू सो गया।

'नीनू! सो गये क्या ...? तुम मेरे बारे में जानने को उत्सुक थे न?' अचानक उसे लगा नींद में किसी ने आकर उसे प्यार से जगाया।

'आप कौन हो ...मैंने आपको नहीं पहचाना?'

'आज तुमने आग बुझाने वाले सिलेण्डर को देखा, उसके बारे में सोच रहे थे न ...कि यह सब कैसे हुआ? मैं उस सिलेण्डर में भरी जाने वाली गैस हूँ।'

'ओह! तो आप आग बुझाने वाली गैस हो ... क्या नाम है आपका?'

'मेरा नाम कार्बन डाई ऑक्साइड गैस है।'

'बाप रे! कितना बड़ा नाम है आपका? क्या आप मुझे अपने बारे में बताएँगी ...मैं जानना चाहता हूँ।'

'हुम्म! जानती हूँ तुम मेरे बारे में जानना चाहते हो, तुम्हारी जिज्ञासा शांत करने ही तो मैं आई हूँ। मैं वायुमंडल में रहकर भी न दिखाई देती हूँ, न पहचानी जाती हूँ।'

'मगर आप अदृश्य क्यों? दिखाई क्यों नहीं देतीं?'

'क्योंकि मेरा न रंग है न कोई गंध। इसलिए न दिखाई दे पाती हूँ न ही अनुभव हो पाती हूँ।'

तुम्हें मेरा नाम बड़ा और कठिन लग रहा है न? दरअसल मेरा यह नाम स्कॉटलैंड के रसायन वैज्ञानिक यानी कि मेरे जन्मदाता 'जोसेफ ब्लैक' ने रखा। जैसे तुम्हारा पूरा नाम निहान वीरू मलैय्या शेट्टी है मगर सब लोग तुम्हें नीनू नाम से पुकारते हैं न, उसी तरह वैज्ञानिकों ने मेरा एक छोटा नाम रखा है, CO2 7 CO2 = C यानी कार्बन डाई यानी ऑक्सीजन, 2 यानी मेरे एक अणु में कार्बन का एक परमाणु और ऑक्सीजन के दो परमाणु होते हैं।

अब अपने काम के बारे में बता दूँ, मैं ऑक्सीजन को स्वयं जलने से बचाने में मदद करती हूँ, औद्योगिक गतिविधियों में भी सहायता करती हूँ। पॉलिथीन बनाने में भी मेरा प्रयोग होता है, इसके अलावा हरे पेड़-पौधे सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में जल और मेरा उपयोग करके अपने लिए भोजन का निर्माण करते हैं जिसे 'प्रकाश संश्लेषण' कहते हैं। तुम अपने आसपास जो हरे-भरे वृक्ष, वनस्पतियाँ देखते हो न यह सब इसी प्रकाश संश्लेषण से सम्भव हो पाता है। इससे ही सृष्टि चलती है, फल, अनाज जिससे सबका पेट भरता है, इस तरह 'मैं अन्नपूर्णा' हुई न!

आज मानव ने तकनीकी का आवश्यकता से अधिक उपयोग करना शुरू कर दिया है और तुमने सुना होगा 'अति सर्वत्र वर्जयते'। मुझे पता है आज लोग वातावरण में मेरी अधिक मात्रा के कारण आँखों की परेशानी, फेफड़ों, माँसपेशी के सिकुड़ने, उच्च रक्तचाप और साँस की तकलीफ जैसी कई बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। किन्तु इसका यह मतलब न समझ लेना कि मैं केवल हानिकारक गैस हूँ।

इतना सब होने के बाद भी मेरी आवश्यकता बनी रहेगी, कोई सोचे वायुमंडल से CO2 को हटा दिया जाये तो ...? प्रथम तो यह सम्भव ही नहीं है; दूसरे अगर ऐसा हो जाय तुम्हारी कल्पना के अनुसार तो सोचो, वनस्पतियाँ जिनसे तुम्हें खाद्य सामग्री मिलती है वह समाप्त हो जाएगी और तुम जो साँस लेते हो उसमें ऑक्सीजन लेते हो और कार्बन डाई ऑक्साइड छोड़ते हो, कल्पना करो! अगर मैं न रहूँ तो वायुमंडल में गैसों का चक्र भंग हो जाएगा। मानव ही नहीं समस्त प्राणी का जीवन संकट में आ जायेगा। पृथ्वी का तापमान भी ठंडा हो जाएगा क्योंकि मैं वातावरण की ऊष्मा अवशोषित कर लेती हूँ।

'अरे! इसका मतलब आप तो बहुत उपयोगी गैस हो, सच में आप अन्नपूर्णा हो हमारे लिए जितनी आवश्यक ऑक्सीजन है उतनी ही CO2 भी। धन्यवाद मैजिक गैस।'

सम्पर्क : भोपाल (म.प्र.)
मो. 9926481878

रूपाली सक्सेना

मेरी जुबान मेरी जुबानी

बच्चों जैसा की नाम से ही समझ गए होंगे आप सभी कि मैं किसकी बात कर रही हूँ? नहीं समझ आया?

तो चलिये मैं आप सभी को बता दूँ की वैसे तो मैं छोटी सी हूँ, बत्तीस सिपहसालारों के पीछे छुपी हूँ, किन्तु जब मैं बोलती हूँ न तो बड़े बड़ों की छुट्टी कर देती हूँ। अब बताओ बच्चों मैं कौन हूँ?

हाँ, बिल्कुल सही पहचाना आपने मैं हूँ आपकी अपनी जुबान। जिसे हम अलग-अलग प्रांतों में अलग-अलग नामों से जानते हैं। मेरे बहुत सारे पर्यायवाची शब्द हैं जैसे- जीभ, जिव्हा, रसना, रसज्ञा, वाणी और वाचा। इसमें सबसे प्रचलित नाम जीभ है। अंग्रेजी में मुझे टंग भी कहते हैं।

हमारी हिन्दू संस्कृति में वसंत पंचमी के दिन माँ सरस्वती की पूजा और आराधना की जाती है। इसी दिन माँ या पंडित जी बच्चे की जुबान पर माँ सरस्वती का आवाहन करके लिखते हैं, ताकी बच्चे पर माँ वाक् देवी का आशीर्वाद सदा बना रहे और वो जब भी बोलें शहद की तरह मीठा बोले। क्योंकि कुछ भी बिना मतलब बोलने से अच्छा, कम किन्तु अच्छा बोलना।

वैसे तो मैं बहुत कोमल हूँ, किन्तु अक्सर तुमने देखा होगा की जुबान से निकले अनैतिक वचनों का भुगतान अक्सर बेचारे बेकसूर दांतों को ही भुगतना पड़ता है। मुझ में हड्डी नहीं होती पर अच्छे अच्छों की हड्डियाँ तुड़वाने के लिए मैं अकेली ही काफी हूँ। मुझे कभी भी, कोई भी, किसी से भी कमतर समझने की कोशिश न करे। सोचो मैं न होती तो ये दुनिया कितनी सूनी होती, जिसमें साज तो होता पर राग-रागिनी नहीं होती। सोचो दुनिया मूक हो जाए तो जीवन में एक अधूरापन हो जाएगा।

आपको पता है एक माँ के लिए सबसे खुशी का पल वो होता है, जब बच्चा अपनी जुबान से पहली बार माँ, मम्मी, आई, अम्मी या मम्मा बोलता है। तो तुम ही सोचो की मैं कितनी जरूरी हूँ। मैं सिर्फ बोलने के ही काम आती हूँ ऐसा नहीं है। मैं आपको तरह-तरह के भोजन का स्वाद भी बताती हूँ। बल्कि उसे चबाने और निगलने में मैं दांतों की मदद भी करती हूँ। वर्ना सोचो जरा यदि मैं न होती तो जीवन में कोई स्वाद, कोई रस ही नहीं होता। आप जानते हैं की एक व्यस्क व्यक्ति की जीभ में लगभग दस हजार स्वाद कलिकाएँ होती हैं। कहते हैं कि लगभग हर दस दिन में पुरानी स्वाद कलिकाओं का स्थान नई स्वाद कलिकाएँ ले लेती हैं।

इन स्वाद कलिकाओं को चार भागों में विभाजित किया जाता है -1. खट्टा, 2. मीठा, 3. कड़वा और 4. तीखा।

कोई वस्तु मीठी या नमकीन है ये हमें जीभ का अग्र भाग बतलाता है।

जीभ के पीछे का भाग कड़वे स्वाद को बतलाता है और जीभ के किनारों से हमें खट्टे स्वाद का अनुभव होता है।

मेरी औसतन लम्बाई दस सेमी या चार इंच होती है। बच्चों आपको पता है दुनिया में सबसे लंबी जीभ जिराफ की होती है, लगभग इक्कीस इंच। दुनिया में सबसे छोटी पक्षी हमिन्ग बर्ड होती है किन्तु उसकी जीभ उसकी चोंच से दुगनी लंबी होती है।

बच्चों जिस प्रकार आप सभी सुबह उठकर नियमित रूप से नहाते हैं, ब्रश करते हैं, ठीक उसी प्रकार नियमित रूप से आप सभी को अपनी जीभ की भी सफाई करना चाहिए। क्योंकि सिर्फ स्वाद या बोली पर ही मेरी पकड़ नहीं होती, बल्कि मेरी जीभ में आपकी सेहत के कई राज भी छुपे होते हैं।

जी हाँ जीभ के रंग के आधर पर आप जान सकते हैं की आपकी सेहत कैसी है। तभी तो जब भी हम डॉक्टर को दिखाने जाते हैं तो वो सबसे पहले हमारा मुँह खुलवा के जीभ चेक करते हैं। क्योंकि आपकी जीभ में छुपे हैं आपकी सेहत के राज।

यदि आपकी जीभ गुलाबी, नमियुक्त, दाग धब्बे रहित है तो आप सेहतमंद हैं। यदि आपकी जीभ गहरे लाल रंग की है तो ये आपके खून में गर्मी या बुखार की ओर इशारा करती है। यदि आपकी जीभ सूखापन या पीलापन लिये है तो ये शारीरिक थकान, आंतों में सूजन, कमजोरी या पीलिया की ओर इशारा करती है और यदि आपकी जीभ पर सफेद पीली मोटी परत जमी हो तो ये सर्दी या वायरल इन्फेक्शन की ओर इशारा करती है। इसके अलावा यदि जीभ में छाले हो रहे हैं तो उसका मुख्य कारण पेट की गर्मी और पानी की कमी होती है। इसिलिए कहते हैं कि शरीर को स्वस्थ और निरोगी रखना हो तो खाने से ज्यादा जरूरी पानी होता है। क्योंकि मानव शरीर में साठ प्रतिशत से भी ज्यादा पानी होता है, जो हमारे शरीर को सुचारू रूप से चलाने के काम आता है। तो बच्चों उम्मीद है आप सभी मेरी उपयोगिता को अच्छे से समझ ही गए होंगे। मेरी उपयोगिता या दुरुपयोग आप ही के हाथों में है। इसिलिए अच्छा खायें, अच्छा बोले, स्वस्थ रहें। दूसरों को खुशी दें और खुद भी खुश रहें।

सम्पर्क : *भोपाल (म.प्र.)*
मो. 9826152007

डॉ. सुरेन्द्र विक्रम

बालसाहित्य में गतिरोध हैं : विमर्श हो तो कैसे

इसमें कोई दो राय नहीं है कि हिन्दी में उच्च स्तरीय बालसाहित्य लिखा गया है और आज भी भरपूर मात्रा में लिखा ही जा रहा है। इसकी समृद्ध परंपरा को नकारना नासमझी और बेमानी दोनों है। हिन्दी बाल-पत्रिकाओं का गौरवशाली इतिहास बालसाहित्य को निरंतर आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। अनेक कर्मठ बालसाहित्यकारों ने बिना किसी की परवाह किए इसकी जड़ों को सींचा है। अब प्रश्न यह उठता है कि इतना सब कुछ होने के बावजूद बालसाहित्य को वह स्थान क्यों नहीं मिला या मिल रहा है जो उसे सौ वर्षों से अधिक समय की यात्रा के बाद मिल जाना चाहिए था।

यह सवाल देखने में भले ही छोटा लग रहा हो मगर इसका जवाब तलाशने के लिए बालसाहित्य की गहराई में जाने की आवश्यकता है। लगभग 40 वर्षों तक बालसाहित्य से जुड़े रहने के बाद मैंने अनुभव किया है कि सतत् लेखन होने के बावजूद बालसाहित्य में स्वस्थ समीक्षा/आलोचना का हमेशा से अभाव रहा है। जिस गति के साथ और विपुल मात्रा में बालसाहित्य छपकर सामने आया है उस दृष्टि से समीक्षा/आलोचना न तो हुई है और न ही हो रही है। यह कम चिंता की बात नहीं है कि हिन्दी बालसाहित्य में व्यवस्थित समीक्षा/आलोचना की एक भी ऐसी पत्रिका नहीं है जिसमें विस्तार से बालसाहित्य का आकलन हो सके। ले-देकर प्रति वर्ष नवंबर में बालदिवस के बहाने कुछ छिटपुट आलेख छप जाते हैं और कहीं-कहीं संगोष्ठी/सेमिनार करके औपचारिकता पूरी कर ली जाती है।

हाँ, अंतरराष्ट्रीय बालवर्ष सन् 1979 अवश्य इसका अपवाद रहा है। एनसीईआरटी, नई दिल्ली से बाल वर्ष में पत्रिका का बालसाहित्य विशेषांक छपा था। बल्कि कहना न होगा कि अंतरराष्ट्रीय बाल वर्ष में तो लगभग सभी पत्रिकाओं ने अपने-अपने बालसाहित्य विशेषांक निकाले थे। उस समय तो बालसाहित्य की धूम थी। जिसे देखिए वही बालसाहित्य की बहती गंगा में हाथ धोकर पुण्य कमाने के लिए आतुर था। फफूँद के मानिंद तमाम प्रकाशक उग आए थे जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय बालसाहित्य का खूब फायदा उठाया था।

मेरे कथन से कुछ लोग असहमत हो सकते हैं, मगर यह सच्चाई है कि न तो पत्र-पत्रिकाओं में विस्तार से बालसाहित्य पर चर्चा होती है और न ही छप रहे बालसाहित्यकारों को उचित सम्मान दिया जाता है।

लगभग तीन दशक पहले संगोष्ठियों/सेमिनारों में बालसाहित्य पर केन्द्रित जो चर्चाएँ होती थीं उनमें विमर्श पर अवश्य ध्यान दिया जाता था। राष्ट्रीय बालभवन, नई दिल्ली की संगोष्ठियों में बालसाहित्यकारों

के साथ-साथ अभिभावकों, प्रकाशकों, बच्चों और उनके अध्यापकों/अध्यापिकाओं को भी जोड़कर विमर्श को आगे बढ़ाया जाता था। यह सिलसिला लगभग 10-12 वर्षों तक चला और वहाँ से विमर्श केंद्रित 10 पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं। सरकारी गैर-सरकारी अन्य संगोष्ठियों में भी बालसाहित्य के अनेक पहलुओं पर विचार विमर्श किया जाता था।

यह निर्विवाद है कि समृद्ध हिन्दी का बालसाहित्य आज भी अपने गौरव के लिए सुचिंतित समीक्षा/आलोचना का मुँह देख रहा है। जहाँ तक बालसाहित्य में उपलब्ध समीक्षा/आलोचना का सवाल है, समीक्षा/आलोचना के नाम पर जो पुस्तकें प्रकाशित हैं वे ज्यादातर शोध प्रबंध के ही पुस्तकाकार संस्करण हैं। शोध प्रबंध की अपनी सीमाएँ होती हैं। उसे एक विशेष खाँचे में ही प्रस्तुत करना पड़ता है।

अगर प्रकाशित शोध प्रबंधों को अलग कर दिया जाए तो आलोचना/समीक्षा की स्तरीय 25- 30 पुस्तकें ही बचती हैं। इसमें भी कई तो संपादित हैं। भारी-भरकम पुस्तकालयों की खरीद के लिए संपादित/प्रकाशित कुछ पुस्तकों में ज्यादातर पहले से प्रकाशित चीजों को 'ऐज इट इज' ले लिया गया है। कुछ पुस्तकें ऐसी भी हैं जिसमें एक ही सामग्री को बार-बार उलट-फेरकर प्रस्तुत किया गया है। इसके पीछे कारण यह हो सकता है कि लेखक ने ऐसा पुस्तकों की संख्या बढ़ाने के लिए किया हो। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि इसमें आर्थिक पक्ष भी कारण रहा हो।

अब हिन्दी बालसाहित्य के इतने लंबे कैनवास पर सीमित आलोचनात्मक पुस्तकों के सहारे कम से कम यह तो नहीं कहा जा सकता है कि आलोचना बहुत समृद्ध है। यहाँ मैं यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि अगर प्रकाशित शोध प्रबंधों, व्यक्तिपरक संपादित पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांकों, अखबार के परिशिष्टों और बड़ों के लिए प्रकाशित पुस्तकों के कुछ अंशों को सम्मिलित करके हिन्दी बालसाहित्य के समीक्षा/आलोचना की तस्वीर बनाएँ तो बात और हो सकती है।

जहाँ तक आलोचना का सवाल है यह एक महत्त्वपूर्ण विधा है। इसे स्नातकोत्तर स्तर पर पाठ्यक्रम के रूप में पढ़ाया जाता है। वहीं विधा विशेष को स्थापित करने में आलोचक की भूमिका भी असंदिग्ध है। इस दृष्टि से हिन्दी बालसाहित्य में अभी बहुत गुंजाइश है तथा इसमें संभावनाएँ भी अनंत हैं।

मुझे यह कहने में संकोच नहीं है कि बालसाहित्य में खेल भी कम नहीं होते हैं। इस खेल को एक छोटे से उदाहरण से समझा जा सकता है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली द्वारा संपोषित 'हिन्दी बालसाहित्य : परंपरा, प्रगति और प्रयोग' शीर्षक से सन् 2006 में एक राष्ट्रीय संगोष्ठी मेरठ के एक कालेज में संपन्न हुई तथा इसी शीर्षक से एक उल्लेखनीय स्मारिका का प्रकाशन भी हुआ। दो वर्ष पूर्व स्मारिका में प्रकाशित आलेखों के आधार पर कुछ सामग्री और जोड़ते हुए इसी शीर्षक से नई दिल्ली से एक पुस्तक भी छपकर सामने आई।

इन पंक्तियों के लेखक को छपी पुस्तक देखकर हैरानी हुई कि सन् 2006 में प्रकाशित स्मारिका में मेरा 16 पृष्ठों का आलेख इसी शीर्षक से छपा है। यही नहीं प्रस्तुत आलेख बीजवक्तव्य के रूप में राष्ट्रीय सेमिनार में प्रस्तुत किया गया था। इस पुस्तक में कई ऐसे आलेख बाद में जोड़े गए जो न तो उस राष्ट्रीय सेमिनार में प्रस्तुत किए गए थे और न ही उसके लेखक उसमें उपस्थित थे।

बीजवक्तव्य के रूप में प्रस्तुत और स्मारिका में विस्तार से प्रकाशित मेरा आलेख पुस्तक में क्यों,

कैसे और किसने गायब कर दिया यह आज भी रहस्य बना हुआ है। फोन पर वार्ता में संपादक ने गोलमोल बात कही और फोन काट दिया। अब इसे संयोग तो नहीं कह सकते हैं क्योंकि इस सेमिनार में मेरी और भी भूमिकाएँ थीं।

सच तो यह है कि जानबूझकर किये गए इस खेल का किसी के पास कोई जवाब ही नहीं है। हाँ, यह खेल किस स्तर पर हुआ है फिलहाल शोध का विषय है! यह मानवीय भूल है या दिल्ली से प्रकाशित होने वाली पुस्तक में इन पंक्तियों के लेखक को काटने की कला का नमूना है। इस आलेख के पाठक यह खुद निर्णय करें। मैंने तो बस ऐसे ही उदाहरण के लिए तथ्यसहित सारा खेल आपके सामने रख दिया है लेकिन इतना तय है कि यह उठा-पटक और दुर्भावना बालसाहित्य के लिए किसी भी स्तर पर सही नहीं ठहराई जा सकती है।

पिछले दिनों 'कथा' पत्रिका के संपादक डॉ. अनुज कुमार से हिन्दी बालसाहित्य की आलोचना को लेकर विस्तृत चर्चा हुई थी। उन्होंने कथा पत्रिका के बालसाहित्य आलोचना विशेषांक का पुस्तकाकार संपादन किया है जो वाणी प्रकाशन से सन् 2016 में प्रकाशित हुआ है। उन्होंने ही फोन पर मेरी बात इस पुस्तक की एक और संपादक डॉ. रेखा पांडेय से भी कराई थी। संपादकद्वय ने पुस्तक प्रकाशित होने से पहले कथा के उस आलोचना विशेषांक की दुबारा पड़ताल की और बड़े परिश्रम से कई नई चीजों का समावेश किया। निश्चय ही यह कार्य स्तरीय है और हिन्दी बालसाहित्य में ऐसी ही और आलोचना की पुस्तकें आनी चाहिए।

अब तक हिन्दी बालसाहित्य में प्रकाशित समीक्षात्मक/आलोचनात्मक ग्रंथ, प्रकाशित शोध प्रबंध, बालसाहित्यकारों पर प्रकाशित व्यक्तिपरक ग्रंथ, पत्रिकाओं के बालसाहित्य विशेषांक, हिन्दुस्तान जैसे अखबार के बालसाहित्य परिशिष्ट जैसे लगभग 150 संदर्भ - संकेत/ग्रंथ मेरी नजर से गुजर चुके हैं। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि विशुद्ध रूप से प्रकाशित बालसाहित्य पर केन्द्रित आलोचनात्मक पुस्तकों की अभी भी जबर्दस्त दरकार है।

एक बड़ा महत्त्वपूर्ण सवाल यह है कि हिन्दी बालसाहित्य में आलोचना का अभाव क्यों है तथा इसका कितना बड़ा खामियाजा इस विधा को भुगतना पड़ रहा है।

जहाँ तक मैं समझता हूँ हिन्दी बालसाहित्य में आलोचना का अभाव इसलिए है कि बालसाहित्य में आलोचना 'आ बैल मुझे मार' के पैटर्न पर चलती है। अगर किसी कमज़ोर रचना पर निष्पक्ष आलोचना कर दी जाए तो यहीं से दुश्मनी की शुरुआत हो जाती है। हिन्दी बालसाहित्य में जो आलोचनात्मक पुस्तकें उपलब्ध हैं उनमें से कई में तो साफ-साफ ठकुरसुहाती है या अपने आसपास उपलब्ध कुछ विशेष रचनाकारों का अद्भुत प्रशस्ति गायन।

वैसे भी अधिकांश बालसाहित्य लेखक आलोचना को दो कौड़ी का मानते हैं। उनकी पुस्तकों की जय-जयकार करो, उन्हें सिर पर उठाए घूमो तो ठीक अन्यथा आपके खलाफ लामबंदी शुरू। कुछ तो ऐसे भी स्वनामधन्य बालसाहित्यकार हैं जो गुमनाम चिट्ठियाँ लिखने में सिद्धहस्त हैं। समीक्षक की छवि धूमिल करने का प्रयास करते हैं, अनर्गल प्रलाप करते हैं और जब खुद ध्वस्त हो जाते हैं तो बालसाहित्य को ही कोसने लगते हैं। जिस बालसाहित्य को सीढ़ी बनाकर आकाश छूने का मंसूबा बाँधते हैं उन्हें उसमें कमियाँ

ही कमियाँ नजर आने लगती हैं।

बालसाहित्य में आलोचना को लेकर समय की बर्बादी भी समझने वाले कम नहीं हैं। ऐसे लोगों की सोच है कि हमें आलोचना/समीक्षा में फँसकर अपना समय बर्बाद नहीं करना है। मुझे यह कहने में गुरेज नहीं है कि अगर छायावाद के स्तंभों–जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला तथा महादेवी वर्मा ने मौलिक सृजन के साथ–साथ समीक्षा/आलोचना का समानांतर बीड़ा न उठाया होता तो आज छायावाद, छायावाद नहीं होता। बालसाहित्य के रचनाकारों में वह समर्पण क्यों नहीं है? वे क्यों आलोचना और आलोचक दोनों से परहेज करते हैं?आश्चर्य की बात तो यह है कि वे आलोचक को अपनी बिरादरी का भी नहीं मानते हैं।

मुझे सन् 2018 में संपन्न एक राष्ट्रीय संगोष्ठी की बेहद कड़वी घटना का स्मरण हो रहा है। तीन दिनों तक चलने वाली इस संगोष्ठी में देश भर से आए प्रतिभागियों का जमावड़ा था। उसमें एक समाचार–पत्र के संपादन से जुड़े रचनाकार भी भाग ले रहे थे। मैं उन्हें पहचानता नहीं था। डिनर के समय किसी ने परिचय कराया तो पता चला कि वे मेरे नाम से परिचित थे। उन्होंने बताया कि उनकी बालसाहित्य की कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। बातों–बातों में कुछ ही देर में बालसाहित्य को लेकर वे हत्थे से उखड़ गए। स्थिति यहाँ तक आ गई कि वे गाली–गलौज पर उतर आए। मैंने अपने को किसी तरह रोका। तभी एक मित्र ने धीरे से आकर मेरे कान में कहा–अभी इनसे बात मत करिए। ये दूसरे मूड में हैं। सुबह जब उतर जाएगी तो बात करना श्रेयस्कर रहेगा। मैंने भी इसी में अपनी भलाई समझी।

दूसरे दिन जब वे सज्जन मिले तो बिलकुल नार्मल लेकिन मजेदार बात यह रही कि बालसाहित्य पर तो कोई बात ही नहीं की। बाद में रहस्योद्घाटन हुआ कि वे एक समाचार–पत्र में बालसाहित्य का स्तंभ भी देखते हैं।

हिन्दी बालसाहित्य का इतिहास रचने में राष्ट्रीय बालभवन, नई दिल्ली से प्रकाशित पुस्तकों–त्रिविधा, त्रिधारा, त्रिसंगम त्रिवर्णा, त्रिपदा, त्रिपथगा, त्रिसंध्या, त्रिदिशा, त्रिवेणी तथा त्रिसाम्या की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। लगातार कई वर्षों तक बालभवन ने न केवल हिन्दी बालसाहित्य की अलख जगाई अपितु अन्य भारतीय भाषाओं के बालसाहित्यकारों को मंच पर/संगोष्ठियों में बुलाकर गौरव प्रदान किया। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली और साहित्य अकादमी, नई दिल्ली तथा हिन्दी अकादमी, नई दिल्ली, उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, हिन्दुस्तानी अकादमी, प्रयागराज, मध्यप्रदेश साहित्य परिषद, भोपाल आदि संस्थाओं ने भी बालसाहित्य पर केन्द्रित संगोष्ठियों के माध्यम से अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है।

इस सुखद चर्चा के साथ ही अब फिर विमर्श की ओर लौटते हैं। यह पढ़कर हँसते–हँसते आपका पेट फूल सकता है लेकिन सच्चाई से तो मुँह नहीं मोड़ा जा सकता है। पिछले साल एक दिन सुबह–सुबह मेरे परमप्रिय एक साहित्यकार मित्र का फोन आया कि आपको कुछ पता चला, एक बालसाहित्यकार ने एक संपादक को शाप दे दिया है। पहले तो मैं चौंका, चौंकने वाली बात ही थी। बाद में पता चला कि बेचारे संपादक का दोष इतना था कि उसने बालसाहित्यकार महोदय की ढेर सारी रचनाओं को वापस लौटा दिया था।

बस फिर क्या था। बालसाहित्यकार आगबबूला। उसे देख लेने की मुद्रा में शाप दे दिया। अब ज़रा सोचिए। इक्कीसवीं सदी में भी शाप देने की घटना हो तो आप क्या विश्वास करेंगे! बिलकुल नहीं! मैं भी नहीं करता लेकिन जब तहकीकात की गई तो शाप देने की बात सच पाई गई और इसका गवाह बना व्हाट्सअप।

इस घटना के परिप्रेक्ष्य में विचार करते हुए यहाँ विमर्श इसलिए आवश्यक है कि अगर रचनाओं में दम नहीं है तो संपादक किस आधार पर और क्यों उसे प्रकाशित करेगा? संपादक अपनी नौकरी दाँव पर क्यों लगाएगा? उसका निर्णय स्वतंत्र होना ही चाहिए। अब होना तो यह चाहिए था कि अगर संपादक ने रचनाएँ लौटाई हैं तो उन पर दोबारा चिंतन-मनन करना चाहिए था। रचनाओं का एक नया ड्राफ्ट संशोधन/ परिवर्तन सहित बनाना चाहिए था। अपने वरिष्ठों से विचार-विमर्श करना चाहिए था। अब शाप देने से न तो बालसाहित्यकार का भला होने वाला है और न ही बालसाहित्य का।

मुझे अच्छी तरह याद है धर्मयुग के बालजगत का संपादन करते समय और बाद में मेला पत्रिका संपादित करते हुए योगेन्द्र कुमार लल्ला जी इतने सख्त थे कि अगर रचना कमजोर है तो समझौता बिलकुल नहीं करते थे। जब वे लखनऊ में स्वतंत्र भारत की मैग्ज़ीन संपादित करते थे तो रचनाओं की उत्कृष्टता के कारण कई अन्य पत्रों के साप्ताहिक परिशिष्ट बौने नजर आते थे। लल्ला जी ने खुद भी अच्छा बालसाहित्य लिखा और अच्छा लिखने के लिए हमेशा प्रोत्साहित किया। अत्यंत सरल हृदय वाले, 'पराग' के यशस्वी संपादक डॉ. हरिकृष्ण देवसरे रचनाओं के मामले में दुर्वासा थे। रचना अच्छी है तो छपना सुनिश्चित है लेकिन क्या मजाल है कि कमजोर रचनाएँ पराग का मुँह भी देख सकें। अपने संपादन काल में देवसरे जी द्वारा बनाया 'पराग' का मानक आज भी किशोर साहित्य की पूर्वपीठिका की याद दिलाता है। यह कहना जरूरी है कि बालसाहित्य सृजन के साथ-साथ विमर्श भी उसका अनिवार्य अंग है इसे नकारा नहीं जा सकता है।

हिन्दी बालसाहित्य को गंभीरता से न लेने के दुष्परिणाम भी कम नहीं हैं। बमुश्किल चार-पाँच वर्षों से बालसाहित्य लेखन में आए नए लेखकों को पुराने और वरिष्ठ बालसाहित्यकारों तथा उनके साहित्य सृजन की जानकारी नहीं है। अनेक नए बालसाहित्यकारों के अध्ययन का आलम यह है कि बालसाहित्य की परंपरा और उसके इतिहास पर कोई बातचीत करो तो बगले झाँकने लगते हैं। ऐसे ही एक स्थानीय बालसाहित्यकार हाल ही में छपी एक पुस्तक की तारीफों के पुल बाँध रहे थे। मैंने उनसे कुछ और पढ़ी गई बालसाहित्य की पुस्तकों के नाम पूछ लिए। उनकी चुप्पी के आगे नतमस्तक होकर मुझे ही बालसाहित्य की कुछ गंभीर बातों पर चर्चा करनी पड़ी। बस, फिर क्या था वे अपनी औकात पर आ गए।

मुझे हैरानी इस बात की हुई कि बिना परंपरा को जाने और संबंधित अन्य पुस्तकों को पढ़े कोई रचनाकार अपने सुपरिचित की उस एक ही पुस्तक को मील का पत्थर सिद्ध करने पर आमादा था। खैर, जब मैंने उन्हें घेरना शुरू किया तो इस बात पर आ गए कि सर, किसी दिन आपके घर पर ही आते हैं फिर आपसे पुस्तकें लेकर पढ़ते हैं।

मैंने उपर्युक्त घटना का जिक्र इसलिए किया कि बालसाहित्य में 'अहो रूपं अहो ध्वनि' का बोलबाला है। मैं तेरी प्रशंसा करूँ और तुम मेरी तारीफों के पुल बाँधो। सोशल मीडिया पर ढेरी सारी रचनाएँ डालकर ही कोई रचनाकार बड़ा नहीं बन जाता है। बड़ा बनने के लिए बड़े और स्थायी काम भी

करने पड़ते हैं। असली मुद्दा यह है कि रचनाएँ कैसी हैं, वे बच्चों को कितना प्रभावित कर रही हैं, उनमें तुक, लय-ताल, यति, गति, आरोह- अवरोह प्रस्तुतीकरण, तथा प्रभाव सब ठीक होने पर ही बालसाहित्यकार बच्चों की कसौटी पर खरा उतरता है। यह इतना आसान नहीं है जितना देखने-सुनने में लगता है।

बालसाहित्य में गतिरोध का ही परिणाम है कि केवल बालसाहित्यकार ही नहीं अन्य और भी उपादान हैं जो विधा के लिए बराबर घातक बने हुए हैं। पिछले दो दशकों में बालकविताओं और बालकहानियों के इक्यावन और एक सौ एक तथा प्रिय रचनाओं के मोटे-मोटे ढेर सारे संकलन प्रकाशित हुए हैं। अब कुछ पुस्तकों को छोड़ दिया जाए तो इन संकलन में भर्ती की रचनाएँ ही अधिक हैं। कई संकलन तो बासी रचनाओं का पुलिंदा हैं। एक प्रकाशक ने बच्चों के प्रिय कवि पुस्तकमाला शुरू की थी मगर वह कुछ लोगों तक ही सिमटकर रह गई।

यह शुभ संकेत है कि पाठ्यपुस्तकों में अब आधुनिक और समसामयिक बालसाहित्य पहले की अपेक्षा अधिक मात्रा में आ रहा है, मगर उचित परामर्श और तालमेल के अभाव में रचनाकारों को इसका खामियाजा भुगतना पड़ रहा है। हो यह रहा है कि प्रकाशकों में दो तरह की विचारधाराएँ बलवती हैं। पहली विचारधारा यह है कि पहले से ही सरकारी गैर-सरकारी और प्राइवेट स्तर पर संचालित पाठ्यपुस्तकों से उन रचनाओं का चयन किया जाए जो कॉपीराइट मुक्त हैं। उसमें आए लेखकों का अधिकांश वर्ग या तो दिवंगत हो चुका है या कोई उनका पुरसाहाल नहीं है। ऐसी परिस्थिति में न तो कोई कॉपीराइट का झंझट है और न ही किसी से अनुमति लेने की आवश्यकता है। किसी संकलनकर्ता/अध्यापक/अध्यापिका को थोड़ा-बहुत मानदेय देकर पाठ्यपुस्तकें तैयार करा लीजिए और हमेशा के लिए छुट्टी। पुस्तकें छापते और बेचते रहिए।

दूसरा प्रकाशकों का वर्ग है जो बाकायदा पाठ्यपुस्तकों की तैयारियों के लिए संपादकीय टीम बनाता है। उनकी संपादकीय टीम प्रकाशित रचनाओं के साथ लेखकों से भी संपर्क करती है और आपसी सहमति/अनुमति के बाद पाठ्यपुस्तकों में रचनाएँ ली जाती हैं मगर यहाँ भी रॉयल्टी के नाम पर प्रकाशक नाक-भौं सिकोड़ने लगता है। वह अधिक से अधिक एकमुश्त धनराशि देकर संपादकों/लेखकों से हमेशा के लिए कॉपीराइट खरीद लेना चाहता है। मज़ेदार बात यह है कि नई दिल्ली की शैक्षणिक संस्था एनसीईआरटी भी रचनाकारों से एकमुश्त भुगतान करके रचना ले लेती है।

बड़े-बड़े प्राइवेट प्रकाशन संस्थानों से प्रकाशित हिन्दी की पाठ्यपुस्तकों में अनेक बालसाहित्यकारों की रचनाएँ ली गई हैं मगर अपवादस्वरूप कुछ को छोड़कर रचनाकारों से अनुमति नहीं ली गई है और जब अनुमति ही नहीं ली गई है तो भुगतान का तो सवाल ही नहीं उठता। एक खेल और है कि कुछ नए प्रकाशकों ने अपने यहाँ से प्रकाशित पाठ्यपुस्तकों में बालसाहित्यकारों की रचनाओं के साथ उनका नाम ही उड़ा दिया है। न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। अब किस चीज की अनुमति और कैसा मानदेय, दोनों गायब। एक और बात है कि अगर उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में रहने वाले रचनाकर की बिना नाम की रचनाएँ हिमाचल प्रदेश और आंध्रप्रदेश में पढ़ाई जा रही हैं तो रचनाकर जान ही नहीं सकता है।

प्राइवेट प्रकाशकों के प्रकाशन संस्थानों से प्रकाशित पाठ्यपुस्तकों में बिना किसी सूचना के शामिल किए गए बालसाहित्यकार को अगर किसी स्रोत से रचना का पता चल भी जाता है और वह अनुमति, मानदेय, लेखकीय प्रति के लिए प्रकाशक को पत्र लिखता है तो उसका उसे कोई जवाब ही नहीं मिलता है।

वह फिर संपर्क करने का प्रयास करता है तो जवाब फिर वही – ढाक के तीन पात। कई मित्र बालसाहित्यकार तो छटपटाहट में सोशल मीडिया पर इस उम्मीद से ही सक्रिय हो जाते हैं शायद नक्कारखाने में तूती की आवाज सुनाई ही दे जाए। इस बीच कुछ वरिष्ठ मित्र लोग तो यहाँ तक मुफ्त की सलाह दे डालते हैं कि कॉपीराइट एक्ट के तहत प्रकाशक पर मुकदमा कर दो। अब जमीनी हकीकत यह है कि सुविधासम्पन्न, धनाढ्य प्रकाशक के खिलाफ मुकदमा करने के लिए बालसाहित्यकार पहले भारी–भरकम कोर्ट फीस का इंतजाम करे। मुकदमे के लिए एक अच्छा वकील खोजे। चलो थोड़ी देर के लिए मान लेते हैं कि सब कुछ करके बालसाहित्यकार ने प्रकाशक के खिलाफ मुकदमा कर भी दिया तो उसकी सुनवाई के दौरान भाग–दौड़, मानसिक उत्पीड़न, तनाव तथा आपा–धापी झेलते हुए किसी तरह केस को आगे बढ़ाया, तब तक अपने अपार वैभव के बल पर प्रकाशक ने अंधे कानून को ही अपनी मुट्ठी में ले लिया।

हिन्दी बालसाहित्य में एक और धंधा बड़े जोरों से चल रहा है। प्रकाशकों ने कई स्वनामधन्य संपादक देखते ही देखते पैदा कर दिए हैं। वस्तुतः संपादन एक गंभीर कार्य है परंतु विडंबना यह है कि यहाँ इसका उल्टा हो रहा है। प्रकाशक द्वारा मनोनीत संपादक रचनाकारों को पत्र लिखकर, मेल करके वांछित रचनाएँ मँगवा लेते हैं और छपास पीड़ित रचनाकार त्वरित गति से रचनाएँ भेज भी देते हैं। बची–खुची कमी संपादक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित इधर–उधर की रचनाओं को एकत्रित करके कर लेता हैं फिर एक या एक से ज्यादा भी मोटे–मोटे संकलन तैयार करके प्रकाशक को सौंपकर खुद संपादक बन गए। हो गया काम– हर्र लगे न फिटकरी रंग चोखा। इस धंधे में दोनों खुश। प्रकाशक को तैयार संकलन मिल गया। उसने संपादक से जोड़–तोड़ करके उसे एकमुश्त नाम मात्र की थोड़ी सी रकम पकड़ा दी। संपादक भी खुश कि उसे एक तो नाम मात्र की ही सही मगर नकद धनराशि तो मिली दूसरे संपादक का तमगा अलग से। अब इस खेल में कोई निरीह प्राणी है तो वह रचनाकार है। उसे क्या मिला – वह अपनी बात किससे कहे। हाँ, उसे मिलता है सिर्फ़ आश्वासन कि प्रकाशित होने के बाद संकलन की एक प्रति उसे भिजवा दी जाएगी। संकलन कब छपेगा यह भी निश्चित नहीं है मगर छपेगा अवश्य। जब पुस्तकालयों में थोक खरीद की विज्ञप्ति निकलेगी या बिक्री का कोई जुगाड़ हो जाएगा तो संपादित संकलन फटाफट छप जाएगा।

रचनाकार कुछ दिनों बाद यह भी भूल जाते हैं कि उनकी कोई रचना संपादक/प्रकाशक ने ली थी। प्रकाशक को भी कहाँ याद रहता है कि लेखकीय प्रति भी भिजवानी है। पुस्तकें छपीं, बिकीं और खेल खतम। इस पूरे खेल में अगर कोई बेचारा है तो वह सिर्फ रचनाकार है। प्रकाशक कंपोजीटर, प्रूफ रीडर, चित्रकार, मुद्रण, और कागज सप्लायर सभी को पैसा देता है। रख–रखाव और आवागमन पर भी अच्छा खासा खर्च करता है। सरकारी कार्यालयों में किताबें लगवाने के लिए मोटी रकम भी देता है। परंतु रचनाकार को देने के लिए प्रकाशक के पास पचास बहाने हैं। वैसे तो यह बीमारी पूरे प्रकाशन जगत में है मगर बालसाहित्य के क्षेत्र में यह बीमारी चरमोत्कर्ष पर है।

सम्पर्क : *लखनऊ (उ.प्र.)*
मो. 08960285470, 09450355390, 07618867609

प्रियंका माण्डे

बालगीतों का मनोवैज्ञानिक पक्ष

बालसाहित्य के रचनाकर्म का आधार बाल मनोविज्ञान होता है। ऐसा कहा जाता है कि बालसाहित्यकार पर काया प्रवेश की स्थिति से गुजरता है। बाल साहित्यकार का बालमन के स्तर पर उतरकर लेखन करना अनिवार्य माना जाता है। बाल मनोविज्ञान न अत्यंत संवेदनशील मनोविज्ञान माना जाता है। चूँकि वह बालमन का अध्ययन करके उसमें पैदा होने वाली सकारात्मक और नकारात्मक वृत्तियों का न केवल अध्ययन करता है, बल्कि उसके समाधान की दिशा में भी प्रयत्नशील रहता है। ऐसा कहा जाता है कि बाल साहिय में लेखन का लगभग पचास प्रतिशत से अधिक भाग बाल कविता के रूप में ही होता है। बाल कविता के वाचिक और लिखित रूप को ही हमलोक गीत और बालगीत के रूप में पृथक्-पृथक विश्लेषित करेंगे। काव्य विधा के इन दोनों रूपों में भी हम बाल मनोविज्ञान के ईर्ष्या, स्वार्थ, लोभ, प्रतिकार जैसे मुख्य-मुख्य संवेगों का विवेचन करने का प्रयास करेंगे। प्रख्यात मनोविज्ञानविद् आर्थरजरसिल्ड ने कहा है- ''बालक में संवेग किसी प्रकार के आवेग में आने, भड़क उठने या उत्तेजित होने की दिशा में उत्पन्न होते है।'' यही कारण है कि एक मनोवेग कभी-कभी समानधर्मी अन्य मनोवेगों को साथ लेकर प्रकट होता है। उदाहरण के लिए ईर्ष्या जब अपने उदात्त स्वरूप में प्रकट होती है तो वह प्रतिकार के माध्यम से बाहर आती है, ठीक उसी प्रकार लोभ और स्वार्थ भी साथ-साथ ही समानांतर चलते हैं।

मनोविज्ञान के एक ओर पिता महरॉस के अनुसार- ''संवेगचेतना की वह अवस्था है जिसमें रागात्मक तत्व की प्रधानता रहती। हम जानते हैं ये रागात्मक तत्व सदैव स्वार्थ और लोभ को बढ़ाने का काम करते है और रागात्मक प्रवृत्तियों का यह बड़ा हुआ वेग ही संवेग का रूपधारण करता है। बाल मनोविज्ञान के कुछ विद्वानों का तो यह भी स्पष्ट मत है कि बालक पर इन संवेगों का प्रभाव पड़ना गर्भकाल से ही प्रारंभ हो जाता है। बच्चा जब माँ के गर्भ में होता है तब माता के व्यवहार और आस-पासवालों द्वारा माता के साथ किया गया व्यवहार गर्भस्थ शिशु के कोरे पन्नों पर इन संवेगो को अंकित करता चलता है। ये संवेग ही भविष्य में बालक के हृदय पर भय, क्रोध, घृणा, करुणा, उत्तेजना, पीड़ा, चिंता, ईर्ष्या, प्रेम, आनंद, आत्महीनता, अभिमान, एकाकीपन, अधिकार भावना, वात्सल्य और कामुकता जैसे संवेगों के रूप में अंकित होने लगता है।

इन संवेगों के कारण बालकों की भाषा का विकास व्यक्तित्व, अभिरुचियाँ और चरित्र गठन जैसे विषयों को भी प्रभावित करता है, इन्हीं के कारण बालक का बौद्धिक और शारीरिक विकास भी तदनुसार

चलता है। मनोविज्ञान का शरीरविज्ञान पर पड़ने वाले प्रभाव का जब हम अध्ययन करते हैं तो हमारे ध्यान में आता है कि इस संवेगों के प्रभाव से मानव शरीर में उसकी ग्रंथियों से अलग-अलग प्रकार के रस स्त्रवित होने लगते है इन रसों के प्रभाव से मनुष्य के शरीर की सुकृति और विकृति दोनों ही निर्मित होना प्रारंभ हो जाती है।

सामान्य मनुष्य को इन्हीं शारीरिक और मानसिक विकृतियों से बचाने के लिए बालसाहित्य सदैव प्रयत्नशील रहता है। बालकविताओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रतीक और बिम्बों के माध्यम से बालसाहित्यकार यह प्रयास करता है कि बच्चे का हृदय सदैव शांत, निर्मल और आनंददायक बना रहे। यही कारण है कि बाल कविताओं में सामान्यतया आनन्द का स्तर अधिक होता है। बच्चे अपने दैनंदिन जीवन की उन्हीं मस्तियों में से भविष्य के श्रेष्ठ नागरिक तैयार कर रहे होते है। बालमन को संस्कारित करने के इस महनिय उपक्रम में बालमनोविज्ञान की एक वृहद् भूमिका होती है। इस अध्याय के प्रथम सोपान में हम सर्वप्रथम वाचिक गीतों की परंपरा के लोकगीतों में आए हुए संवेगों पर विश्लेषणात्मक दृष्टि डालेंगे। ये लोकगीत लोक के मानस से उपजे हैं, चूँकि इनका लिखित संदर्भ उपलब्ध नहीं होता है इसीलिए यथा संभव संदर्भों के साथ और अनुपलब्धता की दिशा में संदर्भरहित लोकगीतों का उल्लेख हम करेंगे। लोक में प्रचलित इन गीतों में बच्चों के लिए विशेष रूप से प्रचलित बालगीत, लोरी गीत, गड़-बड़ गीत, खेलगीत तथा भिन्न-भिन्न प्रकार की लोकोक्तियों पर आधारित काव्यबंध हमारे इस अनुशीलन का आधार होंगे।

लोक गीतों में मनोवेग-लोकगीत वेगी तक हलाते है जो जनसाधारण समाज द्वारा मौखिक रूप से बिना किसी शास्त्रों का सहारा लिए अखिल और प्रामाणिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी गाए जाते हैं। जिसमें सर्वसाधारण समाज का वास्तविक रूप झलकता है। लोकगीत उस बहती हुई सरिता के समान है, जो देहात के संस्कारों से निकलकर न केवल ग्रामीण समाज को आप्लावित करती रहती हैं। लोकगीतों में मानवसमाज के मनोभावों की सरिता निरंतर प्रवाह मान रहती है। प्रत्येक लोकगीत मानव के हृदय के किसी ना किसी मनोवेगों को समाज के समक्ष प्रकट करता है। बिनामनोभावों के लोकगीतों की रचना असंभव है।

ईर्ष्या-सामान्यत: ईर्ष्या जैसे मनोवेग प्रत्येक मनुष्य में होते हैं। मनोविज्ञान में ईर्ष्या के कई प्रकार बताएँ गए हैं। बालकों में ईर्ष्या जैसे मनोवेग अपने माता-पिता या अध्यापक द्वारा उनके प्रति किए जाने वाले व्यवहार से ही उत्पन्न होता है। माता-पिता अपने बच्चों की तुलना उसके मित्र से करते हैं जिसके कारण बच्चे के मन में अपने मित्र के प्रति ईर्ष्या का भाव पैदा होता है। बालकों में कभी-भी प्रतियोगिता (स्पर्धा) नहीं करना चाहिए जब तक बच्चा अपने मित्र से प्रतियोगिता में बराबर का साझेदार होता है तब तक तो ठीक है, परन्तु जब बच्चा उस प्रतियोगिता में पिछड़ गया तो उसके मन में अपने मित्र के प्रति ईर्ष्या का भाव जागृत होने लगता है । अत: ईर्ष्या जैसे मनोवेग बालकों के लिए घातक सिद्ध होते है। ईर्ष्या की प्रवृति के कारण ही बच्चा अपनी ही उम्र के दूसरे बच्चों के साथ जूझने के लिए सदैव तत्पर रहता है। ईर्ष्या के साथ क्रोध की भावना भी उत्पन्न होती है और क्रोध के साथ द्वंद्व एक लड़ाई जैसे मनोवेग देखे जाते हैं। मनोहर वर्मा की 'कहाँ लड़ाई' कविता में दो नन्हें बालकों के मध्य द्वंद्व प्रतीत होता है-

'किसने खाई, अरे मलाई। तूने-तूने, तूने-तूने।
शुरू लड़ाई तू-तू, मैं-मैं हाथापाई।

एकअन्य लोकगीत भी बालकों द्वारा गुदगुदाया जाता है जिसमें हास्य का भावप्रधान रूप में प्रकट होता है। कोई बच्चा किसी बात को लेकर चिढ़ता है तो उसे दूसरे बच्चे यह गीत गाकर उसे अधिक चिढ़ाते हैं–

''मोटू सेट पलंग पे लेट,
आ गई गाड़ी फूट गया पेट,
गाड़ी का नम्बर ए.टु. झेड
सामने देखो इंडियागेट
इंडियागेट से आवाज आई,
उठ जा मोटू फट जाएँगा पेट।''

प्रस्तुत लोकगीत में किसी मोटे बालक को देखकर उसके मित्र उसे चिढ़ाते हैं जिसके कारण बालक के हृदय में अपने मित्रों को लेकर ईर्ष्या का भाव पैदा होने लगता है और बालक अपने मित्रों से नाराज हो जाता है एवं चिढ़कर उन्हें मारने के लिए उनके पीछे दौड़ता है। इस लोकगीत में ईर्ष्या के साथ बालकों का शरारती उत्साह भी दिखाई देता है।

स्वार्थ :– बालमनस्वभावत: जिद्दी और हाजिर जवाबी होता है। वह अपने हृदय की इच्छाओं को पूरा करके ही शांत होता है। कभी–कभी बालक ऐसी जिद पर अड़ जाते हैं जिन्हें पूरा कर पाना असंभव होता है तब उनका मन रखने के लिए बड़ों को उनके मनबहलाव के लिए कुछ प्रयास करने पड़ते हैं। मानसून को लेकर भी लोकगीतों का सृजन किया गया है। जिसमें बालकों के बड़े हो जाने और गाँव–गलियों में दौड़ते भागते वर्षा ऋतु को बुलाते हैं। बाल हृदय मानसुन को भी पैसे का लोभ दिखाकर बरसने को कहते हैं–

'येरे येरेपावसा तुला दे तो पैसा
पैसा झाला खोटा, पाऊस आलामोठा
पाऊस पडला झिम–झिम
आँगन झाले ओलेचिम्ब
येगं, ये गं सरी, माझे मटकी भरी
सर आली धावून, मड़के गेले वाहून।''

आरे आ मानसून के बादल, मैं तुझे देता हूँ पैसा पैसा निकला खोटा। बादल खूब बरसा जब बादल बरसा रिमझिम, आँगन हो गया तर–बतर। बादल बरसा मूसला धार, बाग–बगीचे हो गये हरे–भरे। आरी बौछार आ, मेरी मटकी भरके जा बौछार आई भाग–भागकर मटकी उसमें बह गई भरभर।

श्रीधर पाठक जी ने बालकों की तोतली भाषा में रची गई कविता में वे अपने पापा से बड़े देर से आने और उनकी पसंद का बड़ा खिलौना लाने का स्वार्थ प्रकट करते हुए बाबा से बतियाते हैं इस कविता में बच्चों का चंचल मन और उनका खिलंदड़ापन खासतौर से भाता है–

''बाबा आज देलछे आए।
चिज्जी–पिज्जी कुछ न लाए।
बाबा क्यों नहीं चिज्जी लाए।
इतनी देली छे क्यों आए।''

बच्चों की तोतली बोली में कहे गए स्वाथी भज़वों को पढ़कर या सुनकर मन आनंदित हो उठता है। 'बाबा आज देल छे आए चिज्जी-पिज्जी कुछ न लाए' के पीछे झाँकता बच्चों का शरारती और चिज्जी पाने का स्वार्थी मन आप बिल्कुल निकट से देख सकते हैं। मेला मुन्नू मैली मैया का मेले मुन्ना की मैया में बच्चा सभी चीजों को हासिल करने का प्रयत्न करता है। बच्चे का यह स्वार्थी मनोवेग चाहे वह बालक 1917 का बच्चा हो या (पिचासी वर्ष बाद) 2002 का हो, बालकों के मन का यह स्वार्थ बदला बिलकुल भी नहीं है।

बाल गीतों में मनोवेग-बचपन में ही बालकों और शिशुओं के जीवन में बालगीतों का अपना एक अलग महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। गीत और संगीत के प्रति बालकों का मनमोहित होता है, यही कारण है कि बाल साहित्य की प्रारंभिक अवस्था बाल कविताओं, बालगीतों की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। माँ द्वारा लुटाए जाने वाला स्नेह और बड़ों द्वारा मिलने वाले प्यार से बच्चे आनंदित तो होते है, इससे बालकों को उसी प्रकार की प्रसन्नता होती है जैसी प्रसन्नता किसी व्यक्ति को अपने कार्य पर की जाने वाली प्रशंसा को सुनकर होती है परन्तु बालमन के विशुद्ध बालगीत वही कहे जा सकते हैं जिन गीतों में उनके बालमन के मनोवेगों, लोभ, प्रतिकार, ईर्ष्या, स्वार्थ, अभिमान, आत्महीनता, आत्मसम्मान, घृणा, सच्चाई, प्रेम, अधिकार भावना, एकाकी पन इत्यादि हो एवं जिसमें उनके सपनों के रंगीले संसार की अभिव्यक्ति होती है। अत: हम बालगीतों में लोभ और प्रतिकार जैसे मनावेगों पर चर्चा करेंगे।

लोभ-कोमल बालमन में भी कई प्रकार के मनोवेग घर कर जाते हैं जिसमें से एक है-लोभ। बच्चे के मनमें भी लोभ की भावना जागृत होती है। कभी-कभी देखा जाता है कि बालक प्रभु के समक्ष भी अपना लोभ प्रकट करता है जैसे-परीक्षा अनुत्तीर्ण होने या कम अंक न आने पर वह प्रभु से प्रार्थना करता है और मंदिर में अपनी पसंद का प्रसाद बाँटने का लोभ प्रकट करता है। कभी बच्चा अपने प्रिय खिलौने की माँग भी भगवान से करता है। ठाकुर श्रीनाथ सिंह के एक बालगीत में बच्चे ने अपने प्रिय खिलौने को पाने का लोभ दशार्या है। उन्होंने उस बाल गीत में कहा है-

''वही खिलौना दो भगवान
जिससे खेले जिसमें खेले
जिस पर खेले, खेल महान, जिसको खेले करे कुलेले,
डंडे पे ले गाये गान।''

प्रतिकार :- बालकों का मन अत्यंत निश्चल, आनंददायक और निष्कपट होता है। बालमन में किसी के प्रति बदले की भावना विद्यमान नहीं होती है। संसार के प्रत्येक मनुष्य को अपने समान सरल और सरस हृदय वाला मानते हैं परन्तु कभी-कभी बालगीतों में प्रतिकार की भावना देखने को मिलती है। बालकों के हृदय में प्रतिकार शत्रुता वाला बदला नहीं होता है, वे तो बहुत ही नादान और ना समझ रूप से अपनी किसी प्रिय वस्तु को न पाने या किसी दूसरे व्यक्ति को दे देने पर उनके मनमें प्रतिकार की भावना देखी जा सकती है। दामोदर अग्रवाल की गधे पर लिखी गई कविता में कवि ने बालमन को प्रतिकार की भावना से दूर करने की सीख दी है-

आ रहे हैं क्या मजे से
जा रहे हैं क्या मजे से

लादकर धोबी की लादी
ला रहे हैं क्या मजे से'

प्रस्तुत कविता में गधे को आते-जाते देखते हुए एक बालक अपने मन के भावों को प्रकट करता है और कवि ने कविता की रचनाकर दी। कविता में कवि ने दशार्या है कि गधे किसी प्रकार का कोई प्रतिकार नहीं करते। बालक का यह भाव कविता में से झलक रहा है। गधे अपने मालिक से किसी प्रकार की कोई वस्तु की माँग नहीं करते हैं और नाही गधे किसी प्रकार का कोई स्वांग रचते हैं।

इस बाल कविता में कवि ने बालमन का बोध देखते हुए गधे पर इस कविता की रचना की है। सामान्यत: गधे सीधेपन के प्रतीक होते है और वे अपने मालिक (धोबी) का सारा काम कर रहे हैं वे धोबी के कपड़ों की लादी अपनी पीठ पर लादकर घूम रहे हैं बिना किन्तु परन्तु किए। गधे धोबी से किसी प्रकार का कोई विरोध नहीं करते हैं और अपनी पूरी जिंदगी गधे इसी ढंग से सामान लादकर लाते रहते है और कभी भी इस सब का प्रतिकार नहीं करते हैं गधे।

सूर्यभानु गुप्त ने बालकों को आईने के समान शांत और निर्मल रहने का संदेश दिया है, कवि ने बालकों के मनमें यह मनोवेग उत्पन्न किए है कि आईने के समक्ष हम चाहे जो भी कार्य कर ले आईना मौन रहकर सब कुछ देखता रहता है। कभी कुछ बोलता नहीं है। सूर्य भानु गुप्त ने अपनी कविता में इसी भाव को प्रकट किया है-

''आईनारे आईना
तेरे जैसा कोई ना।
कौन दूसरी अंदर चिड़िया
देखे चोंच मारकर चिड़िया
तू आखिर क्या चीज, इसे वह
समझ आज तक पाई ना।।''

प्रस्तुत बालगीत में कवि ने यह स्पष्ट किया है कि चिड़िया आईने में स्वयं का प्रतिबिम्ब देखती है, उसे समझ में नहीं आ रहा है कि वह उसी का प्रतिबिम्ब है वह आईने में अपने प्रतिबिम्ब को दूसरी चिड़िया समझकर आईने को चोच मार रही है उसे लगता है कि मेरी प्रजाति की एक और प्राणी कहाँ से आ गई। आईना चिड़िया के मन का यह प्रतिकार देखता रहता है। कवि ने कविता में चिड़िया के मन की प्रतिकार स्पष्ट किया है।

निष्कर्ष-निष्कर्षत: कहा सकता है कि बालसाहित्य में बाल गीतों और लोकगीतों का सृजन बालकों की मनोवृत्तियों को पहचान कर किया जाना चाहिए जिससे बालकों की मानसिकता का पूर्ण रूपेण विकास हो सके। बाल्यावस्था में बच्चे सहज रूप से खेलते-कूदते समय कोई तुक बंदी यादकर उसे बार-बार दोहराते रहते है। बालकों में नवीन जोश भरने में ऐसी प्रकृति जन्य बालकविताएँ महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती हैं।

सम्पर्क : *इंदौर (म.प्र.)*
मो. 8989513175

डॉ. कृपाशंकर चौबे

भारत में बाल संरक्षण हमारी लोक परम्पराओं का अविभाज्य तत्व है

भारत में बाल अधिकार और संरक्षण की अवधारणा मौजूदा अंतरराष्ट्रीय प्रावधानों से कहीं प्रामाणिक और समावेशी स्वरूप में सदियों से लोकजीवन का अविभाज्य हिस्सा रही है। हमारे सभी आराध्य देव बाल रूप में भी पूजनीय हैं और आम जीवन दृष्टि बच्चों में भगवान के रूप का दर्शन करती है। मौजूदा कानून बच्चों को 18 साल की आयु तक मासूम और हित–अहित के निर्णयन से अनभिज्ञ मानता है। कमोबेश भारत में बच्चों की परवरिश उनके पाणिग्रहण तक निरन्तर चलती रही है और संयुक्त परिवार व्यवस्था में बच्चे सामूहिक देखरेख से ही वयस्कता की श्रेणी में आते थे। बेशक आज बाल श्रम एक चुनौती है क्योंकि बचपन की नई परिभाषा ने जिस पारिवारिक माहौल और शिक्षण व्यवस्था को ईजाद किया है, उसके मद्देनजर बाल श्रम या अशिक्षा जैसी परिस्थितियों ने जन्म लिया है। हमारे यहाँ बचपन के साथ हुनर में कौशल भी समानांतर रूप से परवरिश का हिस्सा रहा है। 32 तरह के स्थानीय कौशल परिवार के साथ समाज के विविध वर्ग में निखार पाते थे लेकिन वैश्विक अवधारणाओं ने इन जन्मजात कौशल को अस्वीकृत कर पाठयक्रम को ही शिक्षण का एकमात्र कारक बनाकर कम से कम भारतीय परिवेश में तो न्याय नहीं ही किया है। हमारी शालेय शिक्षा व्यवस्था मूल रूप से कर्तव्यबोध और नैतिकता पर अबलंबित रही है। बाल साहित्य लोक परम्परा और सहकार के धरातल पर बच्चों को भविष्य के जवाबदेह नागरिक के रूप में गढ़ने का काम करती रही है। दुर्भाग्य से मौजूदा बाल जीवन की अवधारणाओं ने हमारी परम्पराओं से काटने का काम किया है।

भारत में वैश्विक अभिसमयों से पहले ही संवैधानिक रूप से भी बच्चों के समग्र विकास की गारंटी अनुच्छेद 15,37,39 में स्पष्ट रूप से दी है। इसलिए कहा जा सकता है कि हमारी बाल संरक्षण प्रतिबद्धता पश्चिम से कहीं अधिक असंदिग्ध है। किशोर न्याय अधिनियम 2000, फिर 2015 और अब 2021 का संसोधित संस्करण यह भी साबित करता है कि बदलती आवश्यकता और परिस्थितियों के अनुरूप हम कानूनी रूप से बच्चों के संरक्षण और पुनर्वास के लिए सजग हैं।

पृष्ठभूमि : यह जानना जरूरी है कि 20 नवंबर 1959 को संयुक्त राष्ट्र की आम सभा ने बाल अधिकारों की घोषणा की थी। वर्ष 1989 में 20 नवंबर को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने बाल अभिसमय (Convention) को अपनाया। यह अभिसमय सितम्बर, 1990 में प्रभाव में आया। इस समझौते पर विश्व के 196 राष्ट्रों ने हस्ताक्षर करते हुए अपने देश में सभी बच्चों को जाति, धर्म, रंग, लिंग, भाषा, संपत्ति, योग्यता आदि के आधार पर बिना किसी भेदभाव के संरक्षण देने का वचन दिया है। भारत ने 1992 में हस्ताक्षर कर अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की थी।

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार अभिसमय : इस संधि के जरिए पहली बार सरकारों ने माना कि बच्चों के पास भी वयस्कों की तरह ही मानवाधिकार हैं। इस अभिसमय में 54 अनुच्छेद हैं। इसमें अनेक प्रकार के प्रावधानों को सम्मिलित किया गया है, जिनमें कुछ इस प्रकार हैं– जीवन का अधिकार, राष्ट्रीयता और नाम

पाने का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार, विवेक और धर्म का अधिकार, गोपनीयता, परिवार, घर या पत्रचार में गैर-कानूनी और निरंकुश हस्तक्षेप से सुरक्षा पाने का अधिकार तथा उच्चतम स्वास्थ्य स्तर का उपभोग करने का अधिकार। इस अभिसमय के अंतर्गत सदस्य देशों को बच्चों की सभी प्रकार की शारीरिक और मानसिक यातनाओं तथा आर्थिक शोषण और मादक द्रव्यों के अवैध प्रयोग से रक्षा करने के लिये सभी उपयुक्त कदम उठाने पड़ते हैं। सदस्य देशों से सशस्त्र विद्रोहों में बच्चों से संबंधित सभी अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानूनों का आदर करने की भी अपेक्षा की जाती है। शरणार्थी और दिव्यांग बच्चों के संबंध में विशिष्ट प्रावधानों की भी व्यवस्था की गई है।

इस अभिसमय में दस स्वतंत्र सदस्यों वाली एक बाल अधिकार समिति के गठन का भी प्रावधान है। यह समिति अभिसमय में निर्दिष्ट बाल अधिकारों को प्रभावशाली बनाने की दिशा में उठाये गये कदमों और उन अधिकारों का उपयोग करने की दिशा में हुई प्रगति के संबंध में तथा सदस्य देशों द्वारा जारी की गयी रिपोर्टों की समीक्षा करने के लिये अधिकृत है। समिति पर यह समीक्षा करने की जिम्मेदारी है कि सरकारें संधि में तय मानकों का किस तरह पालन कर रही हैं। इस प्रक्रिया के तहत संधि को स्वीकृति मिलने के दो साल के भीतर और उसके बाद हर पाँच साल पर प्रत्येक सदस्य देश एक रिपोर्ट साझा करता है जिसके बाद चिह्नित देश को बेहतरी के लिए अनुशंसाओं के बारे में बताया जाता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के 74वें सत्र के दौरान आयोजित इस उच्च स्तरीय बैठक में संधि के जरिए स्वस्थ जीवन और टिकाऊ आजीविका की दिशा में हुई प्रगति को रेखांकित किया गया। लेकिन 26 करोड़ से ज्यादा बच्चे और युवा अब भी स्कूलों में पढ़ाई नहीं कर पा रहे हैं, 65 करोड़ से ज्यादा लड़कियों और महिलाओं की शादी 18 वर्ष की उम्र से पहले ही कर दी जाती है और हर चार में से एक बच्चा ऐसे इलाकों में रहने को मजबूर हैं जहाँ वर्ष 2040 तक सीमित जल संसाधन होंगे। ऐसे में सदस्य देशों से अपील की गई है कि नई चुनौतियों को देखते हुए सदस्य देशों को अपने संकल्प और मजबूत बनाने होंगे।

भारत में बाल अधिकार : भारत प्रारम्भिक समय से ही बच्चों के अधिकारों, समानता और उनके विकास के लिए प्रतिबद्ध रहा है। बच्चों को किसी भी प्रकार के खतरे व जोखिम की स्थिति में सुरक्षा का अधिकार है। अन्तरराष्ट्रीय नियम के मुताबिक बालक का मतलब है वो व्यक्ति जिसकी उम्र 18 साल से कम है। यह वैश्विक स्तर पर बालक की परिभाषा है, जिसे बाल अधिकार पर संयुक्त राष्ट्रीय कन्वेंशन में स्वीकार किया गया है। इसे दुनिया के अधिकांश देशों ने मान्यता दी है जहाँ तक भारत का सवाल है तो भारत में भी 18 साल की उम्र के बाद ही कोई व्यक्ति मतदान कर सकता है, ड्राइविंग लाइसेंस प्राप्त कर सकता है या किसी अन्य कानूनी समझौते में शामिल हो सकता है। साल 1992 में यूएनसीआरसी (nited nations Convention on the rights of the Child) को स्वीकार करने के बाद भारत ने अपने बाल कानून में काफी फेरबदल किया। इसके तहत यह व्यवस्था की गई कि वो व्यक्ति जो 18 वर्ष से कम उम्र का है उसे देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता है और वह राज्य से ऐसी सुविधा प्राप्त करने का अधिकारी है।

इसके लिए भारतीय संविधान में सभी बच्चों के लिए कुछ खास अधिकार सुनिश्चित किये गये हैं-

- अनुच्छेद 21-क : 6 से 14 साल की आयु वाले सभी बच्चों की अनिवार्य और नि:शुल्क प्रारंभिक शिक्षा।
- अनुच्छेद 24 : 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को जोखिम वाले कार्य करने से सुरक्षा।
- अनुच्छेद 39(घ) : आर्थिक जरूरतों की वजह से जबरन ऐसे कामों में भेजना जो बच्चों की आयु या

समता के उपयुक्त नहीं है, से सुरक्षा।

- अनुच्छेद 39(च) : बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय माहौल में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएँ मुहैया कराना और शोषण से बचाना।

इसके अलावा भारतीय संविधान में बच्चों को वयस्क पुरुष और महिला के बराबर समान अधिकार भी प्राप्त है। अनुच्छेद 14 के तहत समानता का अधिकार,

- अनुच्छेद 15 के तहत भेदभाव के विरुद्ध अधिकार,
- अनुच्छेद 21 के तहत व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार
- अनुच्छेद 46 के तहत जबरन बँधुआ मजदूरी और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से कमजोर तबकों के बचाव का अधिकार आदि शामिल हैं।

भारत में बाल अधिकार एवं चिंताएँ : नीति आयोग के अनुसार, भारत में शिशु मृत्यु दर प्रति हजार पर 34 के करीब है। जबकि पाँच साल से कम उम्र के बच्चों में यह आँकड़ा देखा जाए तो यह प्रति हजार पर 39 है। इनमें से अधिकांश बच्चों की मृत्यु डायरिया और न्यूमोनिया जैसी बीमारियों के चलते होती है। 2016 में केवल डायरिया और न्यूमोनिया से करीब तीन लाख बच्चों की मौत हो गई थी। ये वे बीमारियाँ हैं जिनका इलाज आराम से हो सकता है।

भारत में हर साल अकेले कुपोषण से ही 10 लाख से ज्यादा बच्चों की मौत हो जाती है। बिहार, मेघालय और मध्य प्रदेश उन भारतीय राज्यों में शुमार हैं, जहाँ हर 10 में से चार बच्चे कुपोषित हैं। देश में छः साल तक के 2.3 करोड़ बच्चे कुपोषण और कम वजन के शिकार हैं।

शिक्षा की बात करें तो लगभग 10 करोड़ बच्चों को स्कूल नसीब नहीं है। डिस्ट्रिक्ट इन्फॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन (डाइस) की एक रिपोर्ट में बताया गया है कि हर सौ बच्चों में से महज 32 बच्चे ही स्कूली शिक्षा पूरी कर पा रहे हैं। इनमें करीब एक करोड़ बच्चे ऐसे हैं जो घर की खराब आर्थिक हालत के चलते पढ़ाई के साथ काम करने को भी मजबूर हैं।

विश्व बैंक की मानव विकास रिपोर्ट के मुताबिक भारत में 10 से 14 करोड़ के बीच बाल मजदूर हैं। इसके साथ ही स्कूली बच्चों में आत्महत्या की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ रही है। एकल परिवारों में बच्चे साइबर बुलिंग का भी शिकार हो रहे हैं।

बच्चों के बारे में उचित एवं विश्वसनीय आँकड़ों का भी अभाव है।

भारत में बच्चे आबादी का लगभग 40 प्रतिशत हैं। बच्चे अपनी सामाजिक, आर्थिक और भूराजनीतिक परिस्थितियों की वजह से असहाय हैं।

बालश्रम, बच्चों से दुर्व्यवहार, विस्थापन और असुरक्षित प्रवासन की चिंताएँ।

पेशेवर यौन शोषण के लिए गैर कानूनी खरीद-फरोख्त एक गंभीर चुनौती है।

घरेलू कार्य, भिक्षावृत्ति, मानव अंगों का कारोबार और पोर्नोग्राफी की समस्या भी बनी हुई है।

बाल विकास के लिए योजनाएँ : आँगनबाड़ी सेवा : इस योजना का उद्देश्य छः साल से कम आयु के बच्चों का समग्र विकास करना है। इस योजना के तहत छः साल से कम आयु के सभी बच्चे और गर्भवती महिलाएँ एवं धात्री माताओं को लाभार्थी माना गया है।

किशोरी योजना : इस योजना का उद्देश्य किशोरियों को सुगमता प्रदान करना, शिक्षित करना और सशत्तफ बनाना है ताकि पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर में सुधार के माध्यम से उन्हें आत्मनिर्भर तथा जागरूक नागरिक बनाया जा सके। इसके तहत किशोरियों को स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देना, स्कूल के बाहर की किशोरियों को औपचारिक/अनौपचारिक शिक्षा में शामिल करना तथा विद्यमान सरकारी सेवाओं के बारे में सूचना/मार्गदर्शन प्रदान करना है।

राष्ट्रीय शिशु गृह योजना : इस योजना का उद्देश्य कामकाजी माताओं हेतु उनके छोटे बच्चों के लिये एक सुरक्षित स्थान प्रदान करना है। यह प्रयास महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक प्रभावकारी कदम साबित होग। साथ ही यह 6 माह से 6 साल तक के बच्चों के संरक्षण और विकास की दिशा में भी एक उल्लेखनीय पहल है।

समेकित बाल संरक्षण सेवा : इस योजना का उद्देश्य कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चों की देखरेख एवं संरक्षण के लिये सुरक्षित एवं निरापद परिवेश प्रदान करना है। सामाजिक संरक्षण में व्यापक उपायों के माध्यम से बच्चों की उपेक्षा, शोषण, परित्याग तथा परिवार आदि से अलगाव का मार्ग प्रशस्त करने वाली कार्यवाहियों को रोकना, इस उद्देश्य में शामिल हैं। गैर संस्थानिक देखरेख पर बल देना, सरकार एवं सभ्य समाज के बीच साझेदारी के लिये एक मंच विकसित करना व बाल संबद्ध सामाजिक संरक्षण सेवाओं में तालमेल स्थापित करना सरकार की जिम्मेदारी है।

बाल संरक्षण कानून : बाल विवाह (निषेध) अधिनियम, 2006, 1 नवंबर 2007 से लागू। इस अधिनियम का उद्देश्य बाल विवाह के आयोजन पर रोक लगाना है। बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 को बाल विवाह प्रतिबंध अधिनियम, 1929 के स्थान पर लाया गया था।

बालश्रम संशोधन अधिनियम, 2016 : बालश्रम अधिनियम, 1986 को संशोधित किया गया। इसके तहत 14 साल से कम उम्र के बच्चों से मेहनत मजदूरी जैसा शारीरिक काम कराना जुर्म माना गया। इस संशोधन के बाद 14 वर्ष तक की उम्र के बच्चों के लिए पारिवारिक उद्यमों में काम करने को वैध माना गया।

14-18 वर्ष के किशोरों के लिए खतरनाक घोषित किए गये क्षेत्रें में काम करना निषेध किया गया।

बाल मजदूरी के आरोप में पहली बार पकड़े जाने पर 20000 से 50000 रुपये तक जुर्माना या 6 माह से 3 साल तक कैद या फिर दोनों का प्रावधान है।

दूसरी बार पकड़े जाने पर सीधे साल भर से तीन साल तक की कैद का प्रावधान है।

शिक्षा का अधिकार : 86वें संविधान संशोधन, 2002 के द्वारा संविधान के अनुच्छेद 21क को मौलिक अधिकार के रूप में शामिल किया गया है। इसके तहत 6-14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गई है।

पॉक्सो (POCSO) अधिनियम, 2012 : यौन अपराधों से बच्चों के संरक्षण के लिए बनाया गया यह अधिनियम है। यह कानून बच्चों को यौन शोषण, यौन दुर्व्यवहार और पोर्नोग्राफी जैसे गम्भीर अपराधों से सुरक्षा प्रदान करता है। इस कानून के तहत अलग-अलग अपराध के लिए अलग-अलग सजा तय की गई है। देश भर में लागू होने वाले इस कानून के तहत सभी अपराधों की सुनवाई एक विशेष न्यायालय में कैमरे के सामने बच्चे के माता-पिता की मौजूदगी में होती है।

इस कानून में चाइल्ड पोर्नोग्राफी की परिभाषा तय की गई है।

इससे जुड़ी सामग्री रखने पर 5 हजार से लेकर 10 हजार रुपये तक के जुर्माना और ऐसी सामग्री का व्यावसायिक इस्तेमाल करने पर जेल की सख्त सजा का प्रावधान है। इस कानून के तहत बच्चों का यौन उत्पीड़न करने वाले दोषियों को उम्रकैद के साथ मौत की सजा का प्रावधान है।

कानून में बच्चों का यौन उत्पीड़न करने के उद्देश्य से उन्हें दवा या रसायन देकर जल्दी युवा करने को गैर जमानती अपराध बनाया गया है, जिसमें 5 साल तक की कैद का प्रावधान है।

किशोर न्याय अधिनियम, 2015 : जुवेनाइल अपराध में संलिप्त बच्चों के देखभाल और संरक्षण के लिए किशोर न्याय अधिनियम, 2015 में संशोधन किया गया। हाल ही में मोदी सरकार ने इस कानून को और अधिक समावेशी एवं प्रभावी बनाने के लिए महत्त्वपूर्ण संशोधन किए हैं।

16-18 साल के उम्र के बच्चों से अपराध होने पर उन्हें हथकड़ी नहीं लगायी जा सकती और उन्हें जेल या हवालात में नहीं भेजा जा सकता।

16 या उससे अधिक उम्र के नाबालिगों के जघन्य अपराधों में शामिल होने की स्थिति में उनके खिलाफ बालिग के हिसाब से मुदकमा चलाने का निर्णय जुवेनाइल जस्टिस बोर्ड ही लेगा।

बाल कल्याण समिति का गठन हर जिले में किया गया है जो। आवश्यकता एवं जरूरतमंद बालकों के पुनर्वास के लिए उत्तरदाई बनाई गई हैं। इस कानून की खासियत यह है कि सिविल सोसायटी को इसके क्रियान्वयन के साथ बहुत ही प्रामाणिक तरीके से जोड़ा गया है।

राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग : बच्चों के लिए बने विभिन्न कानून और अधिकारों को लागू करना चुनौतीपूर्ण कार्य है। इसके लिए राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग की स्थापना 5 मार्च 2007 को हुई थी। इसकी स्थापना राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम 2005 के तहत की गई है।

आगे की राह बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था ऐसी हो जो बालकों के व्यक्तित्व, उनके मेधा एवं समस्त शारीरिक और मानसिक योग्यताओं के उच्चतम स्तर तक विकास की ओर उन्मुख हो।

शिक्षा में लैंगिक समानता, सहनशीलता आदि का समावेश होना चाहिए।

शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जो बच्चों को उनके अधिकारों का आभास कराती हो।

शिक्षक बच्चों का रोल मॉडल होता है, अतः बच्चों के अधिकारों के संरक्षण के लिए आवश्यक है कि शिक्षक इन अधिकारों और बच्चों की समस्याओं के प्रति जागरूक हों। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षकों को समुचित प्रशिक्षण दिया जाय।

बच्चों के पोषण एवं स्वास्थ्य से संबंधित योजनाओं की निगरानी और उनका मूल्यांकन समय-समय पर किया जाना चाहिए।

बाल संरक्षण कानूनों का कड़ाई से पालन होना चाहिए।

कानूनों एवं योजनाओं की सफलता के लिए आवश्यक है कि इनके अधिकारों और समस्याओं के प्रति सामाजिक जागरूकता को बढ़ाया जाए। बच्चे किसी भी देश के विकास की नींव होते हैं। यानी अगर हमें अपना भविष्य सँवारना है तो बच्चों को तंदुरुस्त और साक्षर बनाना होगा।

सम्पर्क : *भोपाल (म.प्र.)*

मो. 9300628989

उषा यादव

मैं नदी हूँ

मैं नदी हूँ, जानना काफी नहीं क्या
और परिचय पूछकर तुम क्या करोगे?

वे भी दिन थे जब पहाड़ों से निकलकर
अपनी धुन में गीत गाती बहा करती।
स्वच्छ, शीतल और पावन जल की धारा
मनोरम थी, लोक में उल्लास भरती।
वे सुहाने दिन गए जाने कहाँ अब
आज का सच जान लोगे तो डरोगे।

केमिकलयुत गंदगी जो है मिलों की
उसे पानी में बहाते कब लजाते?
राख, मल औ मूत्र से जल मलिन करते
लोग मेरी वेदना ना समझ पाते।
मछलियाँ, जलजीव मरते जब तड़पकर
तड़पती हूँ मैं भी, क्या तुम द्रवित होगे?

नाम कोई भी हो मेरा, मैं नदी हूँ
जल ही है पहचान इतना जानती हूँ।
ग्लेशियर या झील से ही जन्म पाया
बढ़ते रहना कर्म अपना मानती हूँ।
प्यास प्यासे की बुझाना धर्म मेरा
इस डगर पर साथ मेरे तुम बढ़ोगे?

फसल हँसती खेत में ओढ़े चुनरिया
धरा को उपजाऊ इतना मैं बनाती।
रोशनी हँसती है आँगन में घरों में
बिजली के संयंत्र में जब प्राण लाती।
प्रकृति का वरदान हूँ, मुझको सहेजो
नष्ट करने का कुफल तुम ही भरोगे।

मेरे ही तट पर बसे हैं तीर्थ कितने
मंदिरों में नित्य होती आरती है।
शंख ध्वनि की गूँज औ अनुगूँज से ही
धरा पर अवतरित होती भारती है।
भक्ति की लहरें-तरंगे करें नर्तन
आस्था का दीप यदि कर में गहोगे।

सिखाती हूँ मैं तुम्हें अनवरत बढ़ना
नहीं बाधाओं से विचलित कभी होती।
कूदती और फाँदती बढ़ती ही जाती
कभी अपना धैर्य-साहस नहीं खोती।
तुमने मेरी कहानी को सुना मन से
मुझे है विश्वास इससे सबक लोगे।

हृदय में निःस्वार्थ सेवा को लिए मैं
वृक्ष, पशु-पक्षी, मनुज का भला करती।
किंतु अपने स्वार्थ में रत आदमी के
कारनामों से ही तिल-तिल आज मरती।
बच्चो, मेरे हृदय का दुःख दूर करके
सच बताओ, रंग खुशियों के भरोगे?

आज भी यदि मेरी महिमा जान लोगे
जल ही जीवन है, इसे पहचान लोगे।
मूल्यवत्ता को समझकर पूर्ण मन से
विगत वैभव दिलाने की ठान लोगे।
सिर्फ मैं ही नहीं मेरे भाई-भगिनी
सभी की आशा यही है, दुख हरोगे।

बन गई नाला दुबारा नदी बनकर
कलकलाती-छलछलाती मैं बहूँगी।
जल का संरक्षण अगर तुम सीख लोगे
लोक की उपकारी बनके मैं रहूँगी।
सिर्फ नदिया नहीं, माँ हूँ मैं तुम्हारी
भरोसा है, भाव यह मन में धरोगे।

मैं नदी हूँ, जानना काफी नहीं क्या
और परिचय पूछकर तुम क्या करोगे?

सम्पर्क : *आगरा (उ.प्र.), मो. 9012818025*

चिट्ठी

साक्षात्कार अक्टूबर 2020 दिनांक 30 जुलाई 21 को प्राप्त हुई। पूरी सामग्री का अवलोकन किया। पूरी सामग्री पठनीय, प्रशंसनीय है। सम्पादकीय उत्तम, अनुकरणीय है। अरुण कुमार शर्मा का लेख- अष्टछाप : भक्तिफल का स्वर्णयुग छात्रोपयोगी है। अष्टछाप के कवि हिन्दी साहित्य रूपी आकाश के देदीप्यमान नक्षत्र हैं जिनका प्रभाव अक्षुण्ण रहेगा। फिर 'निज भाषा उन्नति अहे' कविता-भारत की आन-बान शान है हिंदी, आदि सभी प्रकाशन उत्तम हैं। परिश्रम हेतु संपादक मंडल को मेरा साधुवाद।

साक्षात्कार फरवरी 2021 अंक 488 दिनांक 18 दिसम्बर 2021 को प्राप्त। पूरी पत्रिका का आवलोकन किया। सभी सामग्री पठनीय प्रशंसनीय तथा अनुकरणीय हैं। कोई-कोई लेख छात्रोपयोगी हैं। सम्पादकीय का विषय-काफी प्रभावी, मार्मिक है। खाना खाने में जो रुचि हम दिखाते हैं, वही रुचि, वही प्रशंसा खाना बनाने वाले को ज्यादा ही देना चाहिए। असली पाठक साहित्य से ज्यादा साहित्यकार की भावना को समझेगा तभी हमारा पढ़ना सार्थक होगा। महाप्राण निराला की भारत-भारती-वंदना प्रेमचंद साहित्य में कम्युनिस्टों का चरित्र, प्रभाकर माचवे, शिवोहम-सत्यम शिवम् सुन्दरम, युगे-युगे शिशुपाल : पीड़ा और आक्रोश मिश्रित स्वर के साथ कविताएँ उत्तम हैं।-**बी.एम.शांताबाई, बेंगलूर।**

साक्षात्कार के नवंबर-दिसंबर 2020 के अंक में श्री परशुराम शुक्ल जी का आलेख पढ़ा। मध्य क्षेत्र की उन्मुक्त प्रजातियों के विषय में जानने की उनकी प्रबल उत्कंठा और साहस के प्रतिफल के रूप में इन प्रजातियों के संबंध में अनेक रोचक जानकारियाँ निकलकर आईं। बाल मनोविज्ञान को समझते हुये बाल साहित्य की रचना कर पाना नि:संदेह तुलनात्मक रूप से दु:साध्य कार्य है। इस लेख को पढ़कर ज्ञानवृद्धि के साथ-साथ साहित्यिक आनंद की भी अनुभूति हुई। समय के साथ-साथ अन्य रचनाएँ पढ़ने का भी आपके माध्यम से सौभाग्य प्राप्त होता रहेगा। आदरणीय डॉ. दवे के संपादकीय लेखन को पढ़कर बस यही कहना चाहूँगा कि आप के जैसे विचारों के लोग इस समाज में बढ़ सकें तो साहित्य देश का एक सच्चा आईना अवश्य बन सकेगा।-**सोमनाथ डनायक।**

साक्षात्कार में संस्मरण 'काले पानी का देवता' पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पढ़ते हुए कई बार आँखें नम हुईं, तो कई बार घृणित राजनीतिज्ञों के द्वारा किये गये कुकृत्यों पर मन आगबबूला हुआ। यूँ तो सावरकरजी के विषय में पहले भी पढ़ा है और उनके लिए मन में हमेशा से ऊँचा स्थान रहा है, यह आलेख सोच को एक नई दिशा प्रदान करता है। लेख पढ़ने के बाद जहाँ एक ओर सावरकर जी के प्रति श्रद्धा और बढ़ गई, तो दूसरी ओर परिवार वाद से ग्रसित स्तरहीन सोच के राजनीतिज्ञों के प्रति नफरत। सत्य से साक्षात्कार कराते लेख के लिये साधुवाद।-**मनमोहन चौरे,भोपाल।**

आज मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी की प्रतिष्ठित पत्रिका 'साक्षात्कार' का नवंबर-दिसंबर, 2020 का संयुक्तांक 'बाल साहित्य विशेषांक' के रूप में मिला, हृदय से आभारी हूँ। आपने इस विशेषांक को बाल साहित्य के जिज्ञासु शोधार्थियों और अध्येताओं के लिए विशेष उपहार बना दिया है। मैंने अनेक पत्रिकाओं के विशेषांक 'बाल साहित्य' पर आधारित देखे हैं, लेकिन 'साक्षात्कार' के इस विशेषांक के सामने सभी उन्नीस ठहरते हैं। डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल से आपकी बातचीत जहाँ अत्यधिक रोचक है, वहीं डॉ. अग्रवाल के रचना-कर्म को भी विज्ञ पाठकों के सामने लाती है। डॉ. परशुराम शुक्ल का आलेख 'बाल साहित्य और भारतीय जीवन मूल्य' तो इस विशेषांक को स्मरणीय और संग्रहणीय बना रहा है। सुषमा यदुवंशी का आलेख 'बाल साहित्य में वैज्ञानिकता का समावेश' स्वयं में बहुत प्रासंगिक और महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर देता है। इसी प्रकार अनिता बिरला का आलेख 'राष्ट्र निर्माण में बाल साहित्य की रचनात्मक भूमिका' भी इस विशेषांक का उल्लेखनीय आलेख कहा जा सकता है। मुझे आशा है कि आप शीघ्र ही 'साक्षात्कार' को नियमित बनाने में सफल हो सकेंगे।-**डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण', रुड़की।**

साक्षात्कार का सर्वोत्तम संपादकीय लिए अविस्मरणीय अतुल्य अंक है 885-886, नवंबर-दिसंबर, बाल साहित्य विशेषांक/इस अंक में लेखक तो स्वयं का होना महसूस करेंगे ही साथ ही पाठक मन इसमें गहरे उतरेंगे व इसे सँजोकर रखना चाहेंगे। ये एक अंक भर नहीं ये शताब्दी विशेषांक का स्वरूप बन पड़ा है। आपको अशेष बधाई व शुभकामनाएँ।-**आनंद प्रकाश शर्मा, पिपरिया।**

आपके द्वारा प्रेषित साक्षात्कार पत्रिका का जनवरी अंक 2021 प्राप्त हुआ। आपके अथक प्रयास व संधान से पत्रिका एक नवीन दिशा की ओर उत्तरोत्तर बढ़ रही है। अंक में अनेक विचारणीय आलेखों का सामावेश किया गया है जिसमें नई जानकारियाँ प्राप्त हुई हैं। बसंत पंचमी का भी गीत होता है। (भारत यायावर) राम चरित मानस, लोकोक्तियाँ एवं काव्य सूक्तियों के संदर्भ यशवंत चौहान, समकालीनता के साहित्यिक संदर्भ पुनरावलोकन डॉ. शोभा जैन, युग द्रष्टा और स्रष्टा दिनकर डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा आदि के लेखों से नवीन जानकारी मिली। इसी अंक में डॉ. राम किशोर उपाध्याय का आलेख कम्युनिष्टों की प्रगतिशीलता पर खुले विचार पढ़ने को मिले जिनमें प्रगतिशीलता के नाम पर भारतीय संस्कृति साहित्य तथा इतिहास को अपने ढंग से विकृत किया है। अल्लामा इकबाल का लिखा राष्ट्र गीत सारे जहाँ से नापाक मंसूबों का विचार परिलक्षित होता है। इसी प्रकार साझा-संस्कृति दुराग्रह में संत कवि तुलसीदास को भी घसीटने का कुत्सित प्रयास किया है। उनके कवितावाची के छंद में लिखे 'माँगि के खैबो मसीत को सोइबो' में मसीत शब्द को भ्रमजाल में फँसा कर विकृत प्रवृत्ति को दर्शाया गया है जो निश्चित रूप से गलत है। माँग कर खाना और मसीत में सोना की अर्थानार्थ कर, मसीत के अर्थ में मस्जिद बताना भ्रमित करने का प्रयास किया गया। इसे विद्वानों ने असंगत बताया है। इस पर डॉ. वीरेन्द्र निर्झर के विचार तर्क संगत हैं। उन्होंने मसीत को तुलसीदास के उक्त छंद में वास्तव में मस्जिद न मान कर निश्चितता के साथ सोना, बताया है। मसीत को मस्ती से भी जोड़ा गया है। मसीत को अरबी शब्द मसक्कत से व्युप्पन्न माना गया। जैसे मशक्कत, मशिक्कत, मसीत। इसी से मेहनत कर पेट भर खाना और पाँव पसार के सोना मसीत का अर्थ है। जो तुलसी केवल तुलसी सरनाम गुलामु है। वह मस्जिद में कसों कर सोयेगा। यही अर्थ प्रस्तुत लेख में डॉ. राम किशोर उपाध्याय ने दिये हैं। इसके लिये उन्हें साधुवाद।-**डॉ. रामनारायण शर्मा, झाँसी।**

साक्षात्कार का जनवरी अंक 2021 निर्धारित समय, पर नसीब हुआ। संपादकीय के अन्तर्गत आप का तेवर, आपकी स्पष्टबयानी, आप की दूर-दृष्टि हर संपादक के लिए एक असरदार नजीर और विचार करने योग्य जीवन्त दस्तावेज की मानिन्द है, पूरा का पूरा संपादकीय उद्धरणीय है। स्थान-सीमा को मीटर मानकर, विवशत: संक्षिप्त होना पड़ रहा है, फिर भी कुछ अंशों को रेखांकित कर के लिए दण्डित हूँ, 'इन दिनों साहित्यक पत्रिकाओं का संपादन करना टेढ़ा/काम हो गया है। ...विशेषकर जब 'सोशल मीडिया' के अत्यधिक प्रचलन के कारण हम सभी रचनाकारों की रचनाएँ करोड़ों हाथों में साढ़े तीन इंच की स्क्रीन पर बड़ी आसानी से पहुँच रही हैं ... व्हाट्सएप और फेसबुक पर पढ़े-लिखे लोग जब यह कहकर एक लम्बी कविता प्रेषित करते हैं कि यह कविता प्रेमचन्द्र जी की लिखी हुई हैं तो सचमुच सिर पकड़कर बैठने को मन करता है... व्यक्तिओं के द्वारा व्यक्ति की रचनाओं को चोरी करके अपने नाम से भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं को प्रेषित कर देना अथवा व्हाट्एप और फेसबुक पर अपने नाम से अन्य रचनाकार की रचनाओं का उपयोग कर लेना फैशन सा हो गया है...' ऐसी सांखयतिक स्थितियों का इतिवाद होना चाहिए और हृदय भारत वाक्य हम सब मिलकर एक युद्ध का शंखनाद करें आप का विनम्रता पूर्ण यह आग्रह लेखकों को गति देगा। इससे जेनुइन साहित्य की संरक्षा होगी और फेक साहित्य का निर्वासन सभी सामग्री मंजी-कसी और सजी सँवरी है। दुर्गा प्रसाद श्रीवास्तव का आलेख वाचिक शुद्धता अच्छे-अच्छे को भाषीयता से निहालकर रहा है।-**डॉ. मधुर नज़्मी, मऊ (उ.प्र.)**

'साक्षात्कार' का फरवरी अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय ने मुझे झकझोर दिया। कुछ क्षण तो मैं यह विचार करती रही कि इतनी सच्ची बात आपने कैसे कह दी। आज तो स्थिति यह है कि साहित्य पढ़ने से लोग कतराने लगे हैं। उन्हें किसी और साहित्यकार का लिखा घटिया जान पढ़ता है। साहित्य को पढ़कर जानने, समझने और तदनुरूप नवीन ग्राह्य कर निर्मिति करने में कोई रुचि नहीं है, वे आत्ममुग्ध हैं। आपने संपादकीय में महत्त्वपूर्ण बात कही है कि हम साहित्यकारों को पड़ने की दिशा में उन्मुख होवें। मैं आपके विचारों का समर्थन करती हूँ आपको शत-शत नमन। साक्षात्कार से मेरा बहुत पुराना संबंध रहा है। लिखती छपती भी रही पर सेवा निवृत्ति के उपरान्त गत पंद्रह वर्षों से मेरा अमेरिका, कैलिफोर्निया, न्यू अरलिन्स, लुजियाना और वर्जिनिया में ही अधिक वास्तव्य रहा। 'साक्षात्कार' के अंक आना भी बन्द हो गया था। सहयोग राशि भी मैंने नहीं भेजी थी। संबंध टूट गया था। आज इस अंक को पाकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। जुलाई 2021 के वीणा में श्री रमेश दवे जी का बाल विमर्श-बचपन पर संवाद पढ़ा था वह लेख विशेष रहा जिन बातों की ओर उन्होंने संकेत मात्र किया है विमर्श आवश्यक है। डॉ. राकेश शर्मा जी के संपादकीय तो विचार प्रवृत्त होते ही हैं। आपका साक्षात्कार रचनाकर्म का परिचय करा देता है। डॉ. श्याम सुंदर व्यास जी को में सब समय याद किया करती हूँ। अपने व्यस्त कार्यक्रमों से समय निकाल कर त्र्यंबकेश्वर दर्शन के लिए आ जाया करते थे उस समय साहित्य चर्चा हुआ करती थी। डॉ. देवेन्द्र दीपक जी का डॉ. हेडगेवार जी का संस्मरण चव्हाण जी का वारकरी संप्रदाय का योगदान, डॉ. शशिभूषण शीतांशु जी का प्रभाकर माचवे संस्मरण ही पढ़ पाई शेष लेख बाद में समय मिलते ही पढूँगी।-**विद्या केशव, नासिक।**

R.N.I.३०९९३/७६

आज़ादी का
अमृत महोत्सव

साहित्य अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, बाणगंगा, भोपाल (म.प्र.)